आँसुओं के फूल

लेखक—

पी० सी० आजाद

एम० ए०, एल-एल० बी, एडवोकेट

प्रकाशक—

साहित्य कला अकादमी

बरेली।

मूल्य तीन रुपया

आंसुओं के फूल

लेखक—

पी० सी० आज़ाद

एम० ए०, एल-एल० बी, एडवोकेट

प्रकाशक—

साहित्य कला अकादमी

बरेली।

मूल्य तीन रुपया

प्रकाशक—

साहित्य कला अकादमी

३५/२८ सिविल लाइन्स

बरेली

प्रथम संस्करण

१९६४ ई०

मूल्य ३)

मुद्रक—

हिन्द प्रिन्टर्स, बरेली।

स्वर्गीय पण्डित जवाहर लाल नेहरू

की

स्मृति

में

जिन से मुझे

प्रेरणा मिली

—पी० सी० आजाद

परिचय

इस पुस्तक के लेखक श्री प्रतापचन्द्र 'आजाद' का परिचय साहित्य जगत के लिये कोई नया नहीं है। वह एक उच्चकोटि के कहानी लेखक ही नहीं वरन् एक कुशल पत्रकार और प्रसिद्ध सामाजिक तथा राजनैतिक नेता भी हैं। उनकी एक उर्दू की किताब "ज़िन्दाने वला" में उनके चार चित्र छपे हैं। एक में लिखा है, आज़ाद एक पत्रकार, दूसरे में आज़ाद एक शायर (कवि), तीसरे में आजाद एक लेखक और चौथे में आज़ाद एक राजनैतिक नेता। यदि कहीं वह किताब आज प्रकाशित हुई होती तो प्राय: उसमें दो चित्र और छपते, एक आज़ाद एक एडवोकेट, दूसरे आज़ाद एक विधायक। चित्र तो अलग अलग हैं किन्तु व्यक्ति एक ही हैं। इससे आज़ाद साहब के व्यक्तित्व का भली प्रकार अनुमान लगाया जा सकता है।

आज़ाद साहब के साहित्यिक, राजनैतिक और सामाजिक जीवन की झांकी तो उनके साहित्य, उनकी राजनीति और उनके समाज सुधार के कार्यों में भली प्रकार दिग्दर्शित होती है, किन्तु उनके प्रारम्भिक जीवन का ज्ञान बहुत कम लोगों को है। इसलिये हम उनके प्रारम्भिक जीवन की भी एक झांकी पाठकों के समक्ष रखना चाहेंगे।

आजाद साहब के पुरखे वसधरन जागीर नाम के एक गाँव में रहने वाले थे और उस गाँव के लोगों का कहना है कि उनका जन्म इसी गाँव में हुआ था। अब तक आज़ाद साहब को भी यही पता था किन्तु उनके जन्म स्थान के सम्बन्ध में अभी कुछ दिन हुये तो एक नई खोज हुई है। वह यह कि आजाद साहब जिला परिषद के अध्यक्ष की हैसियत से बहेड़ी विकास क्षेत्र के एक गांव सुल्तानपुर में किसी विद्यालय की भूमि

के निरीक्षण को गये। यह गांव किछा नदी के उस पार मानपुर के पास है। जब वह इस गांव में पहुँचे तो गांव के निवासियों ने बताया कि इस गांव के जमीन्दार किसी समय उनके दादा श्री हीरोलाल सक्सेना थे। उनका एक मकान बसधरन के अतिरिक्त (जहां के वे रहने वाले थे) इस गांव में भी बना है। आज़ाद साहब के दादा और पिता जी दोनों अक्सर इस गांव में भी आकर रहते थे और यहीं उनका जन्म १९१५ ई० को अक्टूबर के महीने में हुआ था। इस बात की पुष्टि आज़ाद साहब ने स्वयं भी की है। इस गांव के लोगों ने उनको वह स्थान भी दिखाया जहाँ उनका जन्म हुआ था। अब इस स्थान पर गांव के लोगों ने मन्दिर बनवा दिया है।

उनके पिता मुन्शी रंगीलाल सिन्हा एक साधारण कायस्थ परिवार में से थे। उनकी माता जी का नाम श्रीमती जानकी देवी था। आज़ाद साहब के पिता जी का देहान्त आज़ाद साहब के बचपन में ही हो चुका था, किन्तु उनकी माता श्रीमती जानकी देवी १९६० ई० तक जीवित रहीं और उन्होंने ही आज़ाद साहब का पालन-पोषण किया।

प्रारम्भिक शिक्षा की प्राप्ति के पश्चात्, आज़ाद साहब का प्रवेश सरस्वती विद्यालय हाई स्कूल में हुआ (यह स्कूल अब इन्टर कालेज है) जहां आज़ाद साहब ने हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात उन्होंने अपना दाखिला बरेली कालिज में करा लिया। उन्होंने अपने स्कूल के समय से ही साहित्यिक, राजनैतिक और सामाजिक कार्यों में भाग लेना आरम्भ कर दिया था। वह जब हाई स्कूल में थे तो अपने स्कूल के छात्र संघ के मन्त्री निर्वाचित हुये, और स्कूल में कई वाद-विवाद आदि की प्रतियोगिताओं में उन्होंने पुरस्कार और मेडिल भी प्राप्त किये। जब वह कालिज में पहुँचे तो उनका दृष्टिकोण और भी अधिक विस्तृत हुआ। उस समय गांधी जी का असहयोग आन्दोलन बड़े जोरों से चल रहा था। स्थान स्थान पर छात्रों की संस्थायें भी स्थापित हो रही थीं।

आज़ाद साहब ने भी छात्रों की एक संस्था यंग स्टूडेन्टस एसोशिएशन के नाम से स्थापित की, जिसके वह कई वर्ष तक प्रधान रहे। जुलाई सन् १९३६ ई० में उन्होंने इसी संस्था के अन्तर्गत बरेली में एक प्रदेशीय छात्र सम्मेलन कुवंर दयाशंकर इन्टर कालिज में किया, जिसके सभापतित्व का आसन श्री सरसैयद वज़ीर हसन भूतपूर्व चीफ जस्टिस अवध हाई कोर्ट ने किया। सरसैयद वज़ीर हसन साहब रिटायर होने के पश्चात इसी समय राजनीति में आये थे, और प्रायः उनका इस सम्मेलन में यह पहिला ही सार्वजनिक भाषण था। इस सम्मेलन के पश्चात यंगस्टूडेन्टस एसोसियेशन अखिल भारतीय स्टूडेन्टस फेडरेशन से सम्बन्धित होगई। इस सम्मेलन का परिणाम यह हुआ कि 'आज़ाद' साहब सरकार की निगाहों में खटकने लगे, उन्हें कालिज से निकाल दिया गया। 'आजाद' साहब के कालिज से निकाले जाने के विरुद्ध कालिज के छात्रों ने प्रदर्शन और हड़ताल की, जिसके परिणाम स्वरूप कालिज अथार्टीज को अपना आदेश वापिस लेना पड़ा। आज़ाद साहब का प्रवेश पुना बरेली कालिज में होगया। उनके नेतृत्व में ही बरेली कालिज में १९३७ ई० में झण्डा आन्दोलन आरम्भ हुआ। इस आन्दोलन का उद्देश्य बरेली कालिज की इमारत पर तिरंगा झण्डा फहराने का था। उस समय कालिज की अथार्टीज ने इस आन्दोलन का घोर विरोध किया।

आज़ाद साहब ने अपने कालिज के विद्यार्थी जीवन में ही एक उर्दू का पत्र, साप्ताहिक 'आज़ादी' निकालना आरम्भ किया। कुछ ही दिनों में यह पत्र बरेली डिवीजन का महत्वपूर्ण पत्र बन गया। साप्ताहिक आज़ादी की सफलता देखकर आज़ाद साहब ने साप्ताहिक आज़ादी के साथ एक मासिक 'आजादी' पत्रिका के रूप में भी निकालना आरम्भ कर दी। इस पत्रिका में उनके कई लेख और उस समय की लिखी हुई उनकी कई उर्दू की कवितायें भी प्रकाशित हुईं। उन्होंने अपने कालिज के विद्यार्थी काल में ही राजनैतिक हलचलों में भाग लेना आरम्भ कर दिया था, और

वह इण्डियन नेशनल कांग्रेस के सदस्य भी बन गये थे। अभी उन्होंने बी० ए० फाइनल की परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की थी कि सन् १९४० ई० में गांधी जी का व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ होगया। आज़ाद साहब के साप्ताहिक और मासिक पत्रों ने इस आन्दोलन का जोरदार शब्दों में समर्थन किया। परिणाम यह हुआ कि साप्ताहिक आजादी को ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया और जमानत मांग ली। आजाद साहब ने अपने को भी व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन के लिये पेश किया, और उन्हें महात्मा गांधी से एक छात्र की हैसियत से इस आन्दोलन में सत्याग्रह करने की आज्ञा मिल गई। उन्होंने व्यक्तिगत सत्याग्रह करके अपने आप को गिरफ्तारी के लिये पेश किया। उन्हें गिरफ्तार करके जेल भेज दिया गया और सत्याग्रह करने के अभियोग में छै मास की कड़ी कैद और जुर्माने की सजा हुई। छै मास के पश्चात जब आज़ाद साहब जेल से छूटे तो उसके कुछ ही दिनों पश्चात गांधी जी का 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' (Quit India) आन्दोलन छिड़ गया। आज़ाद साहब भी इस आन्दोलन में अन्य नेताओं के साथ ही ९ अगस्त १९४२ को गिरफ्तार कर लिये गये, और उन्हें असीमित काल के लिये जेल में नजरबन्द कर दिया गया। वह १९४२ से १९४५ तक बरेली डिस्ट्रिक्ट तथा बरेली सेन्ट्रल जेल में लगातार नजरबन्द रहे, जहाँ उनको भेंट प्रदेश के अन्य बड़े नेताओं, श्री रफी अहमद किदवई, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन आदि से हुई। कुछ समय पश्चात स्वर्गीय पंडित जवाहरलाल नेहरू भी बरेली सेन्ट्रल जेल में भेज दिये गये थे। उनकी भेंट उनसे भी हुई।

जेल से छूटने के पश्चात आज़ाद साहब ने पं० जवाहरलाल नेहरू से पत्र व्यवहार द्वारा अपना सम्पर्क लगातार स्थापित रक्खा। वह समय समय पर राजनीति, साहित्य और अपनी वकालत के सम्बन्ध में उनसे परामर्श लेते रहे। जब आजाद साहब विधान परिषद के सदस्य थे तो एक बार सन् १९६० ई० में उनसे भेंट करने नई दिल्ली गये थे

और उनकी जवाहरलाल जी से ४५ मिनट तक प्रदेश की राजनीति पर बातचीत हुई, जिसमें आज़ाद साहब ने अपने हृदय के उद्‌गार उनके समक्ष रक्खे। श्रीजवाहरलाल जी ने आज़ाद साहब की बातों को स्नेह और उदारता पूर्वक सुना ! इस भेंट के पश्चात कुछ ही समय में उत्तर प्रदेश के मंत्रिमण्डल में हेरफेर हुआ और एक प्रकार का राजनैतिक संकट सा आगया। इस समय भी आज़ाद साहब ने पं० जवाहरलाल को एक पत्र के द्वारा प्रदेश की सारी परिस्थिति से अवगत कराया। पं० जवाहरलाल नेहरू ने उनके पत्र को जो उत्तर दिया वह हम पाठकों की जानकारी के हेतु प्रस्तुत कर रहे हैं।

व्यक्तिगत

नं० ७०४ पी० एम० एच०/६१

प्रिय आजाद,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी गत वर्ष की मुलाकात भी मुझे याद है जब तुम यहां आये थे। मैं नहीं जानता कि तुम्हें क्या सलाह दूं। तुम इस समय उ० प्रदेश विधान परिषद के सदस्य हो और सचेतक हो। यह तुम्हारे लिये अच्छा काम करने का प्रारम्भ है। मैं तुम्हें यह परामर्श कदापि नहीं दे सकता कि तुम कांग्रेस के किसी एक दल में शामिल हो जाओ क्योंकि मुझे आशा है कि कांग्रेस की दलबन्दी उत्तर प्रदेश में अवश्य समाप्त होगी।

तुम्हारा अपना—

जवाहरलाल नेहरू

कुछ समय पश्चात जब आज़ाद साहब विधान परिषद की सदस्यता से रिटायर होने वाले थे, उन्होंने पं० जवाहरलाल नेहरू से इस सम्बन्ध में परामर्श मांगा। स्व० जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें वकालत और साहित्यक कार्य में अपना समय लगाने का परामर्श देते हुये निम्न-लिखित पत्र लिखा।

प्रिय मित्र,

मुझे तुम्हारा ८ मार्च का पत्र मिला। मैं अब भी यह नहीं जानता हूँ कि उत्तर प्रदेश विधान परिषद के लिये क्या सिफ़ारिश की जायगी।

अतः मैं यह जान रहा हूँ कि तुम्हें इस सम्बन्ध में खासतौर से क्या करना चाहिये।

हर हालत में यह तुम्हारे लिये बहुत अच्छा रहेगा कि तुम वकालत तथा पत्रकारिता को पुनः आरम्भ करने के लिये तैयार रहो।

तुम्हारा अपना—
जवाहर लाल नेहरू

आजाद साहब ने पं० जवाहरलाल नेहरू के परामर्श को स्वीकार करते हुये साहित्य और वकालत की ओर पुनः अपना ध्यान आकर्षित किया और उनकी जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती रहीं वह पं० जवाहरलाल को भेजते रहे। पं० जवाहरलाल नेहरू अपने प्राइवेटसेक्रेटरी द्वारा इन पुस्तकों के पहुँचने की सूचना निरन्तर आजाद साहब को देते रहे। उनकी दो पुस्तकें जो उन्होंने जवाहरलाल को भेजी उनकी प्राप्ति सूचना उनके निजी सचिव ने निम्नलिखित पत्रों द्वारा की।

प्रधान मंत्री सचिवालय
नई दिल्ली
अप्रैल ११, १९६२

प्रिय बन्धु,

मुझे आपके ६ अप्रैल १९६२ के पत्र जो कि प्रधान मन्त्री को प्रेषित था दोनों किताबों सहित पहुँचने की सूचना देने का आदेश हुआ है।

आपका विश्वासपात्र—
एम० एन० बजाज
व्यक्तिगत सचिव
प्रधान मन्त्री

प्रिय बन्धु

धन्यवाद सहित आपका १८ जुलाई १९६१ का पत्र तथा पुस्तिका "भारत में पंचायतों की उत्पत्ति विकास एवं विस्तार" जोकि आपने प्रधान मन्त्री के लिये भेजी थी, मिल गई।

भवदीय—
पी० एम० शाह
व्यक्तिगत सचिव
प्रधान मन्त्री

पं० जवाहरलाल नेहरू के निधन के कुछ ही दिन पूर्व आजाद साहब ने उनको अपनी अंग्रेजी की एक पुस्तक पाकिस्तान किधर (Whither Pakistan) के प्रकाशन करने के सम्बन्ध में एक पत्र लिखा था और उनसे यह भी परामर्श लिया था कि यदि वह उसे पब्लीकेशन डिवीजन जो कि केन्द्रीयसरकार की एक संस्था है, उस के द्वारा प्रकाशित करा दें तो उचित होगा अथवा नहीं। उस पत्र का उत्तर स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें दिया। उनका वह इस प्रकार है।

प्रिय आजाद,

मुझे तुम्हारा ३ मार्च का लिखा पत्र मिला जिसमें तुमने लिखा है कि तुम एक पुस्तक 'पाकिस्तान किधर' लिख रहे हो। मैंने यह पुस्तक नही देखी है अतः मैं इसके विषय में कुछ नहीं कह सकता। मैं यह नहीं समझता कि प्रकाशन विभाग इसके प्रकाशित करने के लिये उचित रहेगा। यह अवश्य ही एक विवाद पूर्ण पुस्तक होगी। अतः यह उत्तम रहेगा कि किसी अन्य प्रकाशन के माध्यय से इसे प्रकाशित कराया जाये।

तुम्हारा अपना—
जवाहरलाल

आज़ाद साहब ने अपनी नजरबन्दी के समय जेल में कई पुस्तकें लिखीं। साथ ही काफी पुस्तकों का अध्ययन भी किया। वह उर्दू और फारसी के छात्र थे, और उसमें उन्हें काफी रुचि भी थी। अतः उन्होंने जेल में फारसी के प्रसिद्ध कवि हाफिज, सादी, खुसरो, और फिरदोसी आदि की कविताओं का गहरा अध्ययन किया। वह जेल के भीतर गजलें और नज्में लिखते और पढ़ते थे। उन्होंने जेल के कई कवि सम्मेलनों में भी अपनी रचनायें पढ़ीं।

१९४५ ई० में जेल से छूटने के पश्चात आजाद साहब ने अपना प्रवेश पुनः बरेली कालिज में ले लिया, जहाँ से उन्होंने एम०ए० पास किया। उन्होंने बी० ए० और एम० ए० दोनों परीक्षायें सेकेण्ड डिवीजन में पास की। वह अपने क्लास के होनहार छात्रों में गिने जाते थे। उन्होंने अपनी छात्र अवस्था में ही राजनीति में कर्मठता से भाग लेना आरम्भ कर दिया था। आज़ादी पत्र और आजादी प्रेस जो कांग्रेस आन्दोलन में जब्त हो चुके थे उन्होते पुनः स्थापित किये। वह उ० प्र० छात्र संघ के प्रधान निर्वाचित हुये, और उनकी अध्यक्षता में बरेली में उ० प्र० छात्र सम्मेलन हुआ, जिसका उद्‌घाटन श्री एन० जी० रंगा ने किया। अब आप एक कुशल पत्रकार और अपने नगर के राजनैतिक नेता बन गये। उन्होंने स्वराज्य प्रेस की स्थापना करके हिन्दी में "साप्ताहिक स्वराज्य" पत्र का निकालना आरम्भ किया। कई बार वह अपने शहर कांग्रेस कमेटी के प्रधान मन्त्री और प्रधान निर्वाचित हुये। अपने नगर की राजनीति से ऊँचे उठकर फिर वह प्रदेश कांग्रेस कमेटी के सदस्य निर्वाचित हुये।

सन १९५२ में श्री आजाद भारतीय संविधान के अन्तर्गत स्थापित उत्तर प्रदेश विधान परिषद के सदस्य निर्वाचित हुये। उस समय से वह लगातार मई १९६२ तक विधान-परिषद के सदस्य बने रहे। वह विधान-परिषद में कांग्रेस दल के सचेतक नियुक्त हुये। विधान परिषद में उनका कार्य बड़ा महत्वपूर्ण रहा। उन्होंने अपनी सदस्यता के समय में

एक हजार से भी अधिक प्रश्न विधान-परिषद में विभिन्न सरकारी नीतियों के सम्बन्ध में किये । उन्होंने पचास के लगभग असरकारी संकल्प और बीस के लगभग असरकारी विधेयक विधान परिषद में प्रस्तुत किये जिनमें से दहेज प्रथा निवारण विधेयक, रुद्रपुर विश्व विद्यालय विधेयक, मन्दिरों तथा तीर्थ स्थानों पर नियन्त्रण विधेयक, पंचायत राज विधेयक विशेषतया महत्वपूर्ण थे। सरकार ने उनका पंचायत राज संशोधन विधेयक स्वीकार कर लिया , और शेष विधेयकों में से बहुत से जनमत जानने के लिये जनता में घुमाये गये, बहुतसों के सम्बन्ध में सरकार ने उनको पुनः ड्राफ्ट करके सदन में प्रस्तुत करने का आश्वासन दिया। उनका दहेज प्रथा निवारण विधेयक केन्द्रीय सरकार के पास उचित कार्यवाही को भेज दिया गया। कृषि विश्व विद्यालय और धर्म स्थानों पर नियन्त्रण के विधेयक सरकार ने पुनः ड्राफ्ट करके प्रस्तुत किये और पास हुये। उन्होंने कई महत्वपूर्ण संकल्प विधान परिषद में प्रस्तुत किये, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं, "सरकारी अधिकारियों का वेतन सौ रुपये से कम न हो और एक हजार से अधिक न हों।" प्रवेश में पूँजीवाद को समाप्त करके समानता लाई जाय" वेश्यावृत्ति समाप्त करने के साधन जुटाये जायें" "भिक्षा मांगने की प्रथा समाप्त की जाय।" "शिक्षा प्रणाली में सुधार करने की योजना बनाई जाय" आदि आदि। उनके इन संकल्पों पर सदन में काफी विवाद हुआ। उन्होंने विधान परिषद की सदस्यता के समय में ही लखनऊ विश्वविद्यालय से वकालत की डिग्री प्राप्त की, और उसी समय से वह वकालत करने लगे।

श्री आजाद विधान परिषद से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात २२ जून स० १९६३ ई० को बरेली जिला परिषद के निर्विरोध अध्यक्ष चुने गये। तब से अब तक जो भी उनकी सामाजिक और राजनैतिक हलचलें हैं वह किसी से छिपी नहीं हैं। आज आजाद साहब एक एडवोकेट हैं और जिला परिषद के अध्यक्ष भी। किन्तु उनका जीवन साहित्य और

राजनीति हैं, जो उनसे अलग नहीं हो सकता। इनमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यदि वह राजनीति को त्याग दें तो वह साहित्य जगत में चार चाँद लगा सकते हैं, किन्तु उनसे ऐसी आशा करना सम्भव नहीं प्रतीत होती। उन्होंने स्वयं लिखा है कि मैं राजनीति के दलदल में ऐसा घुस गया हूँ कि निकलना सम्भव नहीं दिखाई देता।

आज़ाद साहब एक साहित्यकार

आजाद साहब की कुछ पुस्तकें बहुत पहिले ही प्रकाशित हो चुकी हैं। सन १९४५ ई० में जेल मे छूटने के पश्चात उनकी दो पुस्तकें उर्दू भाषा में प्रकाशित हुईं। एक "जिन्दाने बला" के नाम से और दूसरी "इनकिलाबे बतन" के नाम से। उनकी पहिली पुस्तक में जेल यातनाओं का वर्णन अति रोचक शब्दों में है, और दूसरी में उनकी उर्दू की कवितायें का संग्रह है। इसके अतिरिक्त उनकी एक पुस्तक "फिलसफे मुहब्बत" के नाम से और छपी, किन्तु वह आजकल बाजार में कहीं उपलब्ध नहीं है। सन १९५७ ई० में १८५७ की क्रान्ति की शताब्दी के अवसर पर उनकी एक पुस्तक "१८५७ की क्रान्ति और रुहेलखंड" के नाम से हिन्दी में प्रकाशित हुई, जिसकी भूमिका उस समय के मुख्य मन्त्री डा० सम्पूर्णानन्द ने लिखी है। १९६१ में उनकी एक और पुस्तक अंग्रेजी भाषा में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा "भारत में पंचायतों की उत्पत्ति प्रसार और विस्तार" के शीर्षक से प्रकाशित हुई। सन १९६२ में "जमाने की आंख" उर्दू और हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित हुई। जिसने कहानी जगत में धूम मचा दी और १९६३ ई० में घर का चिराग उनकी कहानियों का दूसरा संग्रह प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त उनके बहुत से लेख उर्दू, हिन्दी और अंग्रेजी में विभिन्न पत्र और पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं, तथा आल इन्डिया रेडियो से ब्राडकास्ट हो चुके हैं। अभी कुछ वर्ष पूर्व उनकी एक वार्ता आल इण्डिया रेडियो लखनऊ से "लंका में भारतीय संस्कृति का

प्रभाव" के शीर्षक से ब्राडकास्ट हुई थी। आपने लंका और पाकिस्तान का भ्रमण भी किया है।

आज़ाद साहब एक कहानी लेखक

आजाद साहब की कहानियां बिल्कुल एक नये ढंग और नवीन प्रणाली की हैं। उन्होंने कहानियों के पुराने और घिसे हुये ढंग को छोड़कर नये दृष्टिकोण को अपनाया है। आज़ाद साहब ने अपनी कहानियों में वर्तमान राजनैतिक और सामाजिक बुराइयों को जनता के सामने इस प्रकार रक्खा है जैसे कि किसी ने वास्तविकता का चित्र खींच दिया हो। उनकी कुछ कहानियों में प्रेम और शृंगार की झलक भी दिखाई देती है किन्तु उनका प्रेम और शृङ्गार भी बड़े ही उच्चकोटि का है। उनकी कुछ कहानियों के पढ़ने से तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपनी कहानियों में एक बड़े समाज सुधारक का अभिनय कर रहे हैं। यह भी सम्भव है कि उनकी कुछ कहानियां उनके अपने विचारों और अनुभवों पर आधारित हों। उन्होंने अपनी कहानियों के द्वारा समाज के बहुत से प्रश्नों को, जो अँधेरे में पड़े थे लाकर उजाले में रख दिया है। उनकी कहानियां वास्तव में नये समाज और राष्ट्र-निर्माण की प्रेरणा देती हैं।

आजाद साहब की कहानियों का संग्रह सर्व प्रथम १९६२ ई० में "जमाने की आंख" के शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में उनकी वह १५ कहानियां हैं, जो समय-समय पर हिन्दी तथा उर्दू पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। "जमाने की आंख" पुस्तक ने थोड़े ही दिनों में कहानी जगत में धूम मचा दी, और उस पुस्तक का प्रथम-संस्करण हाथों हाथ बिक गया। थोड़े ही दिनों में यह पुस्तक विभिन्न शिक्षा संस्थाओं और सरकारी तथा गैर सरकारी विभागों में मान्यता प्राप्त सूची में सम्मिलित होगई, विशेषतया माध्यमिक शिक्षा परिषद तथा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश ने भी इस पुस्तक को मान्यता दी। "जमाने की आंख" के

सम्बन्ध में भारत के अधिकांश उच्चकोटि के साहित्यकारों ने पत्र तथा पत्रिकाओं में प्रशंसा की और समालोचना लिखी। इनमें 'सरस्वती' 'कादम्बिनी' 'नया दौर' और 'क़ौमी आवाज' के नाम उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार भारत के उपराष्ट्रपति और उच्चकोटि के विद्वान तथा साहित्यकार डाक्टर जाकिर हुसेन ने भी इस पुस्तक की प्रशंसा में अपने विचार प्रकट किये। पाठकों की जानकारी के हेतु हम उनके विचारों को प्रस्तुत करते हैं।

वाइस प्रेसीडेण्ट, इन्डिया
नई दिल्ली।

मुबरखा
१७ जुलाई सन १९६२

मुकर्रमी बन्दा आजाद साहब,

कई हफ़्ते हुये आपके अफसानों का मजमुआ (संग्रह) "जमाने की आंख" मुझे मिला था। उसके साथ कोई खत नहीं था। इसीलिये सही अन्दाजा नहीं कर सका कि आपके नाशिर (प्रकाशक) ने यह किताब मुझे भेजी है या अजराहे करम आपने मुझे भेजी है। बहरहाल इस ख्याल से कि शायद आपने भेजी है, यह खत आपकी खिदमत में भेज रहा हूँ, और बहुत शुक्रगुजार हूँ कि आपने इस तरह याद फरमाया।

इस किताब के सब अफसाने अभी नहीं पढ़ सका हूँ, और जो पढ़े हैं वह बहुत पसन्द आये। मुझे उम्मीद है कि आप और भी अच्छे-अच्छे अफसाने लिखेंगे।

मैं फिर एक बार आपका दिली शुक्रिया अदा करता हूँ।

मुखलिस—
जाकिर हुसेन

जिन पत्र और पत्रिकाओं ने आज़ाद साहब की कहानियों के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये हैं या समालोचना की है, उन

सब का यहाँ उल्लेख करना सम्भव नहीं। उनमें से केवल हम उत्तर प्रदेश के सूचना विभाग द्वारा प्रकाशित उर्दू पत्रिका "नया दौर" के विचार उदाहरण के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

'नया दौर लखनऊ'

"पी० सी० आजाद साहब साबिक एम० एल० सी० उत्तर प्रदेश के मशहूर सियासी और समाजी कारकुन होने के अलावा उर्दू के शायर सहाफी (पत्रकार) और अफसाना निगार (कहानी लेखक) हैं। जमाने तालिब इलमी ही से वह उरेसे सखुन (कविता) के भी शैदाई हैं, और लैलाये वतन (देशभक्ति) के सौदाई अपनी सियासी सरगर्मियों की बिना पर वह कई मरतबा जेल गये। मगर चक्की की मशक्कत के साथ अदबी दिलचस्पी जारी रही। जेरे नजर किताब उनके अफसानों का मजमुआ हैं। कुदरतन उनके अफसानों में हुब्बेवतन और समाजी इस्लाह (सुधार) का जजवा कारफर्मा है, और चूँकि आजाद साहब खुद जंगे आजादी की मारका आराइयों (आन्दोलनों) में शरीक रहे हैं इसलिये उनके अफसानों में हक़ीकत निगारी (सच्चाई की तस्वीर) मिलती है, और उनके किरदार (पात्र) जीते जागते किरदार हैं, जिनसे हमें अपनी जिन्दगी में अकसर वास्ता मिलता है।"

आजाद साहब की कहानियों का दूसरा संग्रह "घर का चिराग" १९६३ में प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक भी आजाद साहब की १५ कहानियों का संग्रह है। "घर का चिराग" का प्रथम संस्करण हाथों हाथ बिक गया और दिन प्रतिदिन इस पुस्तक की माँग बढ़ रही है। इस संग्रह ने कहानी संसार में धूम मचा दी है।

"नयादौर"

आजाद साहब की कहानियों का यह संग्रह "आँसुओं के फूल" शीर्षक से प्रकाशित किया जा रहा है। इस संग्रह की कोई भी कहानी

अभी तक किसी पत्र या पत्रिका में प्रकाशित नहीं हुई है। "आंसुओं के फूल" में पन्द्रह कहानियां हैं। इन कहानियों में आजाद साहब ने सस्ती नेतागीरी की पोल और समाज की कमजोरियों के पहलू के साथ-साथ गरीब, लाचार और दबे हुये व्यक्तियों के अंधकारमय हृदयों में भी आशा का चिराग जलाया है। उनके पात्र जीवित पात्र है, जिनसे नये समाज और राष्ट्रनिर्माण की कल्पना की गई है। आजाद साहब की इन कहानियों से ऐसा प्रतीत होता है कि वह जमाने के साथ दौड़ रही हैं। इन कहानियों में आजाद साहब के अनुभवों की भी गहरी छाप दिखाई देती है। वास्तव में उनकी कहानियाँ उन्हीं के शब्दों में उनके हृदय के उद्गार हैं।

—प्रकाशक

अपनी बात

मेरा कोई विचार अपनी कहानियों के संग्रह करने का नहीं था। सन १९६० ई० में मेरी एक दो कहानियाँ उत्तर प्रदेश के उर्दू मासिक पत्र "नयादौर" में प्रकाशित हुईं। उस समय मेरे कुछ साहित्यकार मित्रों ने इन कहानियों को अलग से पुस्तक के रूप में छपवाने का आग्रह किया। कुछ उर्दू और हिन्दी की पत्रिकाओं ने भी मुझसे आग्रह किया कि मैं कहानियाँ लिखकर उन्हें भेजूं। मैंने एक दो और भी हिन्दी उर्दू के पत्र पत्रिकाओं को उनके अनुरोध पर कहानियाँ लिख कर भेजीं। इन कहानियों के संग्रह को प्रकाशित करने के लिये कई प्रकाशकों ने मुझसे अनुमति मांगी। मैंने उन्हें अनुमति देदी। सर्वप्रथम मेरी पन्द्रह कहानियों का संग्रह उर्दू और हिन्दी दोनों भाषाओं में अलग अलग "जमाने की आंख" के शीर्षक से १९६१ में प्रकाशित हुआ। मुझे यह आशा नहीं थी कि मेरी कहानियों का संग्रह पाठकों को कुछ अधिक रुचिकर होगा और न यह कहानियां मैंने इस दृष्टिकोण से लिखी थीं किन्तु मुझे अपने पाठकों के प्रति बड़ा आभार प्रकट करना पड़ा जब मेरी इन कहानियों के प्रति उनकी सहानभूति, सराहना और समालोचना के पत्र सैकड़ों की संख्या में दिन प्रतिदिन मुझे प्राप्त हुये। कई प्रमुख हिन्दी और उर्दू के पत्र और पत्रिकायें जिनमें कौमी आवाज नयादौर, सरस्वती, कादम्बिनी के नाम उल्लेखनीय हैं जिन्होंने मेरी इन कहानियों की बड़ी सराहना की जिसके लिये मैं उनका बड़ा ही अनुग्रहीत हूँ।

मैं विशेष रूप में भारत के उपराष्ट्रपति डाक्टर जाकिर हुसेन साहब का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मेरी कहानियों के संग्रह में विशेष रुचि दिखाई और एक उच्चकोटि के साहित्यकार की दृष्टि से मेरी कहानियों

पर समालोचना की। उनकी समालोचना और सद्भावना के पत्र ने मुझे अपनी कहानियों के संग्रह के लिये और भी अधिक प्रेरणा दी। मैं उत्तर प्रदेश सरकार के सूचना और शिक्षा प्रसार विभाग का भी आभारी हूँ कि उन्होंने मेरी कहानियों के संग्रह को, मान्यता देकर मुझे कहानियां लिखने और उनके संग्रह करने की प्रेरणा दी है।

"जमाने की आंख" के पश्चात् मेरी पन्द्रह कहानियों का संग्रह "घर का चिराग" १६६३ ई० में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह के प्रति पाठकों और मेरे मित्र साहित्यकारों ने जो रुचि दिखाई उसके लिये आभार प्रकट करने को मुझे शब्द नहीं मिल रहे हैं।

मैं अपनी कहानियों का तीसरा संग्रह "आंसुओं के फूल" के शीर्षक से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ। मैं नहीं कह सकता कि मेरी यह कहानियाँ पाठकों को कहाँ तक रुचिकर होंगी। मेरे कुछ साहित्यकार मित्रों का कहना है कि राजनीति की दलदल से निकलकर मैं साहित्य जगत की अधिक से अधिक सेवा कर सकता हूँ और अपनी कहानियों के द्वारा नये समाज और राष्ट्रनिर्माण की प्रेरणा दे सकता हूँ। मुझे स्वयं यह पता नहीं कि मेरी कहानियां इस दृष्टिकोण से कहाँ तक सफल हो सकती हैं किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि वर्तमान युग की राजनैतिक दलदल में फंसकर साहित्यकार कभी कभी अपने को निकम्मा और अपाहज अनुभव करने लगता है और उसके हृदय की गहराई उथली होने लगती है। किन्तु राजनीति की मदिरा का नशा इतना तीव्र होता है कि आसानी से उसका उतरना सम्भव नहीं। जिस प्रकार मदिरा पीने वाला व्यक्ति यह जानते हुये भी कि मदिरा उसके शरीर को हानिकारक है, मदिरा नहीं छोड़ता। ठीक वही दशा अपनी भी है।

मैंने इन कहानियों को किसी विशेष दृष्टिकोण के अन्तर्गत नहीं लिखा है, किन्तु कोई भी व्यक्ति अपने समय के समाज के प्रभाव से

अछूता नहीं रह सकता है । यह सम्भव है कि मेरी कहानियों में समाज की कोई धुंधली सी तस्वीर पाठकों को दिखाई देती हो । मेरे विचारों और मेरे दृष्टिकोण से यदि किसी के हृदय को ठेस पहुँचती हो तो मैं उनसे भी क्षमा प्रार्थी हूँ । मेरी कहानियों के पात्र कल्पित हैं और कहानियों के प्रसंग मेरे हृदय में उद्‌गार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

—पी० सी० आजाद

विषय-सूची

कलयुग के देवता

हरनंदन अपने क्षेत्र के लोगों में शैतान के प्रकार प्रसिद्ध था। बड़े बड़े सेठ साहूकार तथा सरकारी अधिकारी उसका लोहा मानते थे। मानते भी क्यों नहीं जबकि वह किसी के पीछे हाथ धोकर पड़ जाता था तो फिर उसका खुदा ही हाफिज था। न जाने उसने अपनी झूठी प्रतिष्ठा और बनावटी प्रभाव को कायम रखने में कितने रूप बदले थे, और कितने राजनैतिक दलों की खाक छानी थी। किसी के बनते हुये कार्य को बिगाड़ देना तो उसके बायें हाथ का खेल था। उसने अपने क्षेत्र में अपना एक ऐसा गिरोह बना रक्खा था जिसमें एक से एक होशियार, चालाक और चारसौबीस व्यक्ति था। अगर वह कहीं किसी व्यक्ति की अपने क्षेत्र में बढ़ती हुई ख्याति और प्रतिष्ठा देखता, तो उसके विरुद्ध वह और उसके गिरोह के व्यक्ति ऐसे दाँव पेंच लगाते कि उसे बदनाम किये बिना न छोड़ते। अगर कहीं नगर या जिले में किसी संस्था को समाज सुधार या किसी अन्य भले कार्य में सफलता प्राप्त करते हुये देखते, तो उस संस्था के सदस्यों में आपस में फूट डालने का कोई उपाय उठा न रखते। दो दिलों को मिलते हुये तो कभी हरनन्दन और उसके साथी अपनी फूटी आँखों से भी नहीं देख सकते थे। अगर उनके क्षेत्र में किसी गाँव में कोई व्यक्ति किसी पद के लिये चुनाव आदि में खड़ा होता और उसके एक मत से निर्वाचित होने की आशा होती तो हरनंदन अपनी तिकड़म से तुरन्त ही उस व्यक्ति के विरुद्ध कोई न कोई उम्मीदवार अवश्य ही खड़ा कर देता। हरनंदन और उसके साथी अपने क्षेत्र में किसी को फलता-फूलता देखते कभी प्रसन्न न होते थे। लोगों के रास्ते में रोड़े अटकाना, हरनंदन और उसके साथियों का पेशा सा बन गया था। हरनंदन जब कभी सामाजिक कार्य कर्ताओं की सभा में पहुँच जाता, तो अपने आपको सबसे बड़ा समाज सुधारक

सिद्ध करने का प्रयत्न करता। और जब कभी वह किसी राजनैतिक संस्था में बैठता, तो देश और जाति के बनावटी गम में ऐसी आहें भरता कि लोगों को रुला तक देता था। वह जब कभी किसी व्यक्ति की सिफारिश किसी सरकारी अधिकारी से करता तो—उससे मुँह मांगा पैसा ऐंठ लेता था, गोया कि हरनन्दन ने बहुरुपियापन में वह कमाल प्राप्त कर रक्खा था कि नगर में अपना द्वितीय नहीं छोड़ा था। उसे वह आर्ट याद था कि वह पहली ही भेंट में लोगों को प्रभावित कर लेता था।

हरनन्दन का कोई व्यवसाय न था। केवल इन्हीं तिकड़मों द्वारा वह धनोपार्जन करता और मजे उड़ाता। उसने इन्हीं तिकड़मों से न जाने कितना धन पैदा किया था। अब नगर और नगर के आस-पास हरनन्दन की ख्याति की तूती बोलती, और हरनन्दन से छोटे से छोटे व्यक्ति से लेकर बड़े से बड़े सरकारी अधिकारी तक प्रभावित थे। और उसका लोहा मानते थे। जो भी हरनन्दन का विरोध करता या उसके मुकाबले में आता, उसको हरनन्दन किसी न किसी प्रकार से फँसाने और बदनाम करने में कोई चाल उठा न रखता था। जिसका परिणाम यह था कि हर शरीफ आदमी हरनन्दन से डरता था। सर्वसाधारण भी उसके डर से उसकी बड़ी आवभगत और खातिर करते थे। हरनन्दन का रहन-सहन किसी बड़े आदमी से कम न था। वह अच्छे से अच्छा कपड़ा पहिनता और अच्छे से अच्छा खाना खाता। केवल हरनन्दन ही नहीं वरन् उसके गिरोह के सभी साथी इसी प्रकार गुलछर्रे उड़ाते थे, और प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक केवल तिकड़म, दलाली और गपशप के अतिरिक्त और कुछ न करते थे। हरनन्दन जब कहीं जाता तो एक दलबन्द व्यक्ति की प्रकार अपने दायें बायें अपने साथियों को लेकर चलता, ताकि लोगों पर उसका असर और रोब पड़े। हरनन्दन और उसके साथियों ने न जाने कितना चंदा लोगो से नाना प्रकार के बनावटी

सामाजिक और राजनैतिक कार्यों के लिये इकट्ठा कर रक्खा था, और उसे हजम कर गये थे। किसी की क्या मजाल थी, जो हरनन्दन से कुछ भी पूंछ सके।

हरनन्दन तिकड़म भिड़ाने में ऐसा निपुण था कि अगर कहीं समाज-सुधार के संबन्ध में कोई सभा होती, तो उसमें सम्मिलित होकर इस प्रकार से भाषण देता, और ऐसी योजनायें प्रस्तुत करता कि सुनने वाले मुग्ध हो जाते थे। अगर कहीं हिन्दू धर्म की फिलास्फी और हिन्दू संस्कृति के सम्बन्ध में सभा होती, तो प्राचीन ग्रन्थों की ऐसी युक्तियां जनता के समक्ष प्रस्तुत करता कि बहुधा व्यक्ति हरनन्दन को हिन्दू संस्कृति और हिन्दू फिलास्फी का बहुत बड़ा विद्वान समझते। अगर कहीं कोई राजनैतिक सभा होती, तो हरनन्दन देश प्रेम की दुहाई दे दे कर ऐसा भाषण देता, कि अक्सर लोग तालियां बजाकर उसके भाषण का स्वागत करते थे।

हरनन्दन ने इस प्रकार न जाने कितने अनजान और सीधे-सादे व्यक्तियों को अपने चुङ्गल में फँसाया। यहीं तक नही बल्कि बहुत से पढ़े-लिखे और शिक्षित नवयुवकों की सरकारी अधिकारियों से सिफारिश करके नौकरी दिलाने के लोभ में उन्हें फँसा रक्खा था। वे बेचारे प्रातः काल से सायंकाल तक हरनन्दन का दरवाजा खटखटाते और हरनन्दन उनसे नौकरी की आशा में अच्छी खासी रकम ऐंठ लेता था। उसने तमाम नगर में और नगर के आस-पास अपने पिट्ठुओं द्वारा यह प्रचार कर रक्खा था, कि जिले के समस्त सरकारी अधिकारी और नेताओं पर उसका बड़ा प्रभाव है, और वह जो भी चाहे उनसे करा सकता है। न जानें कितने ही सीधे और लाचार व्यक्ति इस ग़लत फ़हमी का शिकार बनकर हरनन्दन के जाल में फँस गये थे।

हरनन्दन का रुपया ऐंठने का ढंग भी निराला ही था। वह किसी से सीधे कुछ नहीं मांगता था, बल्कि अपने साथियों के द्वारा इस

कार्य को करता था। उदाहरण के रूप में अगर किसी व्यक्ति को पुलिस परेशान करती, तो हरनन्दन के साथी उसे यह विश्वास दिलाते कि हरनन्दन का कप्तान साहब से बहुत मेल है, और घनिष्ट मित्रता है, यदि वह सौ दो सौ रुपये हरनन्दन को देकर कप्तान साहब की दावत हरनन्दन के घर करा दे, तो उस दावत के बहाने वह कप्तान साहब से सिफारिश करके पुलिस से उसका पीछा छुड़ा सकता है। बिचारा दुख का सताया हुआ मनुष्य, सौ दो सौ रुपये हरनन्दन को देकर अपनी परेशानी और मुसीबत से छुटकारा मांगता, यदि सौभाग्यवश वह व्यक्ति कहीं वैसे ही छूट जाता तो हरनन्दन का जीवनोपरांत एहसान मानता। और यदि कहीं फँस जाता तो हरनन्दन, यह कहकर टाल देता था कि उसने बहुत कुछ सिफारिश की, किन्तु अमुक सरकारी अधिकारी उस व्यक्ति से इतने नाराज थे कि उन्होंने उसकी सिफारिश को नहीं माना। अब वह कुछ समय पश्चात् फिर उनसे सिफारिश करेगा। इस प्रकार हरनन्दन लोगों से रुपया ठगता था। किसी से, सौ, किसी से दो सौ, और किसी से हजार, गोया कि जैसा काम वैसे दाम।

हरनन्दन ने अधिकारियों से सिफारिश करने का ढंग भी निराला ही निकाला था। जब वह किसी से लम्बी रकम सिफारिश करने के लिये लेता, और उसकी सिफारिश करने किसी अधिकारी के पास पहुँचता, तो पहिले तो अपने समाज-सुधार और नेतागीरी के कामों का विस्तार पूर्वक वर्णन करता, फिर एक बहुत बड़े नेता और समाज-सुधारक की हैसियत से उसकी सिफारिश करता, और जब वह नमस्कार करके उठने को होता तो इन शब्दों के साथ अपनी मतलब की बात कहता।

"हाँ एक बात तो मैं भूल ही गया, मेरा एक दोस्त बहुत ही सज्जन और भला पुरुष है। उसने आपके यहाँ एक प्रार्थना पत्र दिया किन्तु उसकी अभी तक सुनी नहीं गई। कुछ दिन हुये मैंने मंत्री महोदय

से उसके सम्बन्ध में बात की थी, किन्तु उन्होंने मुझसे कहा कि इतनी सी छोटी बात तो आप अपने नगर के अधिकारी से कह कर ही करा सकते थे। इसलिये चलते चलते यह बात मुझे याद आ गई। बेचारा अधिकारी, मन्त्री महोदय का नाम सुनकर ही कान खड़े करने लगता, और समझ लेता कि हरनन्दन की पहुँच सरकार में बहुत दूर तक है। अतः वह हरनन्दन की सिफारिश मानने को लाचार होजाता, किन्तु जो अधिकारी हरनन्दन के सम्बन्ध में तनिक भी जानते थे वे उसे घास तक न डालते। आखिर यह कागज की नाव कब तक चलती। कुछ ही दिनों में हरनन्दन की तिकड़म और मक्कारी का पर्दा लोगों पर खुल गया और हरनन्दन से लोग सतर्क रहने लगे। फिर भी जो सरकारी अधिकारी नगर में नये आते उन पर हरनन्दन का रोब कुछ दिनों तक छाया रहता था।

हरनन्दन का घराना कोई बहुत बड़ा न था। उसकी स्त्री राजेश्वरी और उसका इकलौता लड़का धीरेन्द्र, बस केवल इन्ही तीन प्राणियों पर उसका कुनवा आधारित था। हरनन्दन की स्त्री राजेश्वरी बड़ी नेक और सुशील स्त्री थी। उसे जब कभी भी हरनन्दन की किसी तिकड़म अथवा मक्कारी का पता चलता, तो वह दिल ही दिल में कुढ़ती थी। किन्तु हरनन्दन के डर के कारण वह कुछ कह नहीं सकती थी। हरनन्दन जितनी ही फैशन और ठाट-बाट से रहता था, उसके विपरीत राजेश्वरी उतनी नी सादगी से रहती थी। घर में कोइ स्थाई नौकर भी न था। वह बेचारी दिन भर घर के ही काम काज में व्यस्त रहती। उसे हरनन्दन की बहुत सी बातों का पता भी न था। और हरनन्दन भी इस बात का प्रयत्न करता कि राजेश्वरी को उसकी तिकड़म की हवा न लगने पाये। हरनन्दन का इकलौता लड़का धीरेन्द्र था उसने जब से होश सँभाला तब से ही हरनन्दन ने उसे स्कूल के बोडिंग हाउस में भरती करा दिया था। हालांकि यह सब कुछ राजेश्वरी की इच्छा के विपरीत

था। धीरेन्द्र लिखने-पढ़ने में बहुत होशियार और होनहार था। कुछ ही दिनों में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करके वह कालेज में पहुँच गया। हरनन्दन ने कालेज में भी उसका दाखिला होस्टिल में ही करा रक्खा था। कालेज का प्रिंसिपल एक नेक और शरीफ आदमी था। वह धीरेन्द्र की स्वयं भी देखभाल करता, यही कारण था कि धीरेन्द्र अपनी कक्षा में सदैव अच्छे नम्बरों से पास होता। हरनन्दन धीरेन्द्र के कालेज में पहुँजते ही यह आशा करने लगा था कि वह धीरेन्द्र के बी० ए० पास करने के बाद, उसका विवाह ऐसे किसी धनी मानी व्यक्ति की लड़की से करेगा, जहां से उसे १०, १२ हजार रुपया दहेज के रूप में हाथ लगजाय ताकि वह सदैव चैन की वंशी बजाता रहे। अक्सर जब कभी हरनन्दन की स्त्री राजेश्वरी हरनन्दन से किसी व्यवसाय या व्यापार करने की बात कहती, तो हरनन्दन बड़े गौरव के साथ यह कहकर उसकी बात टाल देता था,

"राजैश्वरी ! चिन्ता मत करो, धीरेन्द्र के बी० ए० पास होने में थोड़ा ही समय रह गया है। उसका विवाह ऐसे धनी मानी व्यक्ति की लड़की से करूँगा कि यह घर मालामाल हो जायेगा।"

किन्तु राजेश्वरी को हरनन्दन के यह शब्द बहुत अखरते थे। वह इस बात को पसंद नहीं करती थी कि उसके लड़के को विवाह में बेंच दिया जाय। वह हरनन्दन को सदैव यह कहकर धिक्कारती थी, "क्या आप धीरेन्द्र को विवाह के बहाने बेंचना चाहते हैं। यह आप का कितना बुरा विचार है।"

हरनन्दन भी ऐसा बेशर्म था कि वह सदैव राजेश्वरी को उसकी इन बातों पर आड़े हाथों लेता, और यह कहकर राजेश्वरी का मुँह बन्द कर देता। "हम क्या किसी के घर भीख मांगने जा रहे हैं। हमारा धीरेन्द्र इतना योग्य है कि खुद ही लोग हमारे पास आकर उस पर हजारों रुपये न्यौछावर कर देंगे।"

कुछ ही दिनों में धीरेन्द्र ने बी०ए० की परीक्षा भी उत्तीर्ण करली। कालेज का प्रिंसिपल धीरेन्द्र से इतना प्रसन्न था कि उसने धीरेन्द्र को बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् अपने कालेज में ही अध्यापक पद पर नियुक्त कर दिया। प्रिंसिपल धीरेन्द्र की योग्यता और शराफत से इतना प्रभावित था कि उसने अपनी पुत्री साधना का विवाह धीरेन्द्र के साथ करने का दिल ही दिल में निश्चय कर लिया। साधना भी धीरेन्द्र के प्रकार ही होनहार, सुन्दर और योग्य लड़की थी। साधना और धीरेन्द्र ने कालेज से एक ही साथ बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। कालेज में भी वे दोनों अक्सर पढ़ने लिखने की बातों पर बाद-विवाद करते रहते थे। धीरेन्द्र अक्सर अपने प्रिंसिपल साहब के घर आता जाता रहता था। प्रिंसिपल साहब के घर पर भी धीरेन्द्र और साधना दोनों अपनी पढ़ाई लिखाई के सम्बन्ध में एक दूसरे से अक्सर बातें किया करते थे। कालेज के समय से ही धीरेन्द्र और साधना दोनों ही एक दूसरे के प्रति बड़े उदार थे। बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करते समय तक दोनों में से किसी को यह स्वप्न में भी विचार न था, कि प्रिंसिपल साहब उन दोनों के विवाह की बात सोंच रहे हैं। प्रिंसिपल साहब बेचारे बड़े सज्जन और साधारण घराने के व्यक्ति थे। उनके घर उनकी स्त्री, उनके दो-तीन भाई-बहिन और तीन-चार बच्चे थे। जितना रुपया उन्हें प्रति मास में वेतन के रूप में मिलता, वह सब महीने के अन्त तक इतने बड़े परिवार में व्यय हो जाता। कभी २ तो वेचारे प्रिंसिपल साहब को दूसरे महीने के वेतन मिलने से पहिले ही उधार लेना पड़ जाता था, जिसे वह वेतन प्राप्त करने के पश्चात् चुकाते थे।

धीरेन्द्र को अभी बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण किए कुछ अधिक समय नहीं हुआ था, कि हरनन्दन ने अपने सब साथियों से धीरेन्द्र के विवाह के लिये किसी बड़े धनी मानी की लड़की ढूँढने का आग्रह किया। यह काम हरनन्दन के साथियों के लिये कोई बहुत मुश्किल न था।

उन्होंने कुछ ही दिनों में एक बहुत बड़े जमींदार की लड़की के साथ धीरेन्द्र का विवाह निश्चय कर दिया। जमींदार साहब के घर में उनकी स्त्री और लड़की को छोड़कर और कोई न था। जमींदार साहब के पास बहुत बड़ा मकान, और भी जो ठाट-बाट एक बड़े आदमी के ही सकते हैं, वह सब थे। काफी रुपया उनका बैंक में जमा था, और फिर नगर और नगर के चारों तरफ उनका लेन-देन भी फैला हुआ था। मगर जमींदार साहब की लड़की केवल मामूली हिंदी लिखी पढ़ी थी।

जमींदार साहब वर्षों से ग्रेजुएट लड़के की तलाश में थे, किंतु उन्हें कोई ग्रेजुएट लड़का इसलिये न मिल सका कि लड़की अधिक पढ़ी लिखी न थी। अब लड़की की आयु भी काफी हो चुकी थी। जमींदार साहब ने भी न जाने कितने दरवाजे इसी आशा में खटखटायें कि उन्हें अपनी पुत्री के लिये कोई योग्य और बी० ए०, या एम० ए० पास वर मिल जायें। किन्तु बेचारों को हर दरवाजे से असफलता का मुँह देखना पड़ा। इसका एक कारण और भी था। वह यह कि लड़की देखने भालने में भी अधिक सुन्दर न थी, वरन् अधिक खाने-पीने से काफी शरीर मोटा हो गया था। जब हरनन्दन के साथी धीरेन्द्र के विवाह का पैग़ाम लेकर जमींदार साहब के पास पहुँचे और जमींदार साहब से जब उन्होंने धीरेन्द्र की योग्यता और हरनंदन की ख्याति के सम्बंध में सुना तो जमींदार साहब विवाह में धीरेन्द्र के पिता को मुँह माँगा रुपया देने को तैयार होगये। उधर जब हरनन्दन के साथियों ने जमींदार साहब के धन-दौलत और ठाट-बाट की सूचना हरनन्दन को दी, और उन्हें यह बताया कि जमींदार साहब अपनी लड़की से धीरेन्द्र का विवाह करने को तैयार हैं, तो उसके मुँह में पानी भर आया और जब उन्हें यह मालूम हुआ कि जमींदार के भी इकलौती लड़की है, तब तो वह खुशी से फूले नहीं समाये। हरनन्दन को यह

विश्वास होगया, कि जमींदार की सारी सम्पत्ति किसी न किसी दिन धीरेन्द्र के नाम होगी, और फिर इस सम्पत्ति से धीरेन्द्र और वह जीवन के सारे मजे उड़ायेंगे। हरनन्दन ने तुरन्त ही धीरेन्द्र के विवाह की स्वीकृति दे दी, और यह शुभ समाचार अपनी स्त्री को भी सुना दिया। किंतु हरनंदन की स्त्री यह चाहती थी कि धीरेन्द्र का विवाह ऐसी लड़की से हो जो धीरेन्द्र के ही प्रकार पढ़ी-लिखी, योग्य और सुन्दर हो। अतः उसने हरनंदन की ओर मुड़ कर पूछा, " आप जिस लड़की से धीरेन्द्र का विवाह कर रहे हैं वह कहाँ तक पढ़ी लिखी है।"

"राजेश्वरी ? तुमने भी क्या भोंड़ा प्रश्न पूँछा है। पहिले तो तुम्हीं बताओ कि तुम कहाँ तक पढ़ी लिखी हो।"

जी हाँ, मैं उतना पढ़ी हूँ जितना आप पढ़े लिखे हैं। इसीलिए मैं यह चाहती हूँ कि धीरेन्द्र की बहू भी उतनी ही पढ़ी लिखी और योग्य हो जितना धीरेन्द्र योग्य है।

"तो क्या तुम्हारा मतलब है कि धीरेन्द्र की बहू किसी दफ्तर में जाकर नौकरी करे।"

हरनन्दन की स्त्री ने क्रोध में भरकर कहा,

"जी नहीं, मेरा मतलब यह है कि धीरेन्द्र को ऐसी बहू मिले जिसके वह योग्य है।"

"राजेश्वरी ! तुम यह नही जानतीं कि मनुष्य की सबसे बड़ी खुशी दौलत है जिसके पास यह नहीं कुछ भी नहीं। दौलत और रुपये के बिना मनुष्य का जीवन ही निराशापूर्ण है।"

"आपका यह विचार बिल्कुल गलत है। मनुष्य का गुण और योग्यता उसकी सबसे बड़ी दौलत है।"

"राजेश्वरी तुम मेरे मुँह लगने की कोशिश न करो। मैंने धीरेन्द्र का विवाह जमींदार की लड़की से करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। अब मैं उसे बदल नहीं सकता हूँ।"

"लेकिन आपने धीरेन्द्र से भी पूँछ लिया है।"

"नहीं! धीरेन्द्र से पूँछने की कोई आवश्यतकता नहीं। मेरे बाप ने जब मेरा विवाह तुमसे किया था, तो मुझसे कभी नहीं पूँछा था।"

"किन्तु वह समय बदल गया।"

"इसलिए कि धीरेन्द्र को कालेज की हवा लग चुकी है।"

"नहीं! इसलिए कि वह रुपये के लालच में कभो बिना लिखा-पढ़ी लड़की को अपने गले से मढ़ना नहीं चाहेगा। फिर ऐसी लड़की जिसके न कोई भाई हैं, और न वहिन, न जिसकी कोई शक्ल न सूरत।"

हरनन्दन और उसकी स्त्री में अभी यह वाद-विवाद चल ही रहा था कि हरनन्दन के किसी साथी ने जमींदार साहब के आने की सूचना दी। हरनन्दन ने झट बाहर निकल कर बड़े तपाक से जमींदार साहब का स्वागत किया. और उन्हें बड़े आदर और सत्कार के साथ अपने ड्राइङ्ग रूम में बिठाया। अभी जमीदार साहब को बैठे हुए कुछ ही क्षण बीतें होंगे, कि हरनन्दन ने अपनी बड़ाई और नेतागीरी में ऐसे जमीन और आसमान के कुलाबें मिलाये, कि आध घन्टे तक तो जमींदार साहब को कुछ कहने का अवसर ही नहीं दिया। जमींदार बेचारे तो विवाह का महूर्त निश्चय करने आया था न कि हरनन्दन का व्याख्यान सुनने। आखिर सुनते २ जब काफी समय व्यतीत होगया, तो जमींदार ने हरनंदन से अनुरोध किया कि वह धीरेन्द्र के विवाह की महूर्त निश्चय कर ले। महुर्त का नाम सुनते ही हरनन्दन के पेट में खुशी के लड्डू फूटने लगे, और उसने जमींदार साहब की ओर मुड़कर कहा—

"जमींदार साहब आप जो महूर्त तै करदें, वही मुझे भी स्वीकार है।"

"तो फिर हमारे पंडित जी ने अगले इतवार को सगाई का महूर्त निकाला है। अगर यह आपको स्वीकार हो तो पंडित जी को लेकर

अगले इतवार को मैं धीरेन्द्र का टीका करने आजाऊँ।"

"जमींदार साहब ! मुझे आपके पंडित जी का महूर्त बिल्कुल स्वीकार हैं।"

"तो फिर अगले इतवार को सगाई निश्चय होगई।"

"बिल्कुल निश्चय होगई, किन्तु जमींदार साहब केवल एक प्रार्थना है।"

"ऐसा मत कहिये, आप हमारे समधी हैं। आपकी प्रार्थना नहीं बल्कि हमारे लिये आदेश होगा।"

"जमींदार साहब ! यह आप क्या कह रहे हैं। अब तो हम और आप दोनों एक दूसरे के सम्बन्धी हैं ?"

"कुछ भी सही, फिर भी मैं लड़कीवाला हूँ, और आप लड़के वाले। लड़की का बाप सदैव लड़के के बाप से दबा रहता है। कहिये, आपका आदेश क्या है।"

"जमींदार साहब ; आजकल इतनी राजनैतिक और सामाजिक समस्यायें मेरे सामने आती रहती हैं, कि प्रतिदिन किसी न किसी सभा में जाकर भाषण करना पड़ता है। आप तो जानते ही होंगे कि शहर के सभी सरकारी अधिकारी अपने मित्र हैं। उनमें से कोई न कोई प्रतिदिन सलाह मशविरा लेने के लिये मुझे बुलाते रहते हैं। परिणाम यह है कि सुबह से शाम तक सांस लेने की फुरसत नहीं मिलती है, इसलिए बारात का सब प्रबन्ध आपको ही करना होगा।"

"अरे साहब ! इसकी कुछ चिंता न कीजिये। मेरे पास इतने नौकर चाकर हैं कि आपको कुछ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।"

"बस जमींदार साहब फिर तो अपनी सारी समस्या ही हल हो गई।"

"अच्छा ! तो आप मुझे आज्ञा दीजिये।"

"वाह, खूब, अभी आये अभी चल दिये। न चाय पी, न पान, न सिगरेट। यह कैसे हो सकता है।"

"आप जानते हैं कि हिन्दू समाज में विवाह निश्चय होने के पश्चात् लड़की के घर का खाना तो अलग रहा, पानी पीना भी अनुचित है।"

"यह तो आप पुराने जमाने की बात कर रहे हैं। आजकल इन बातों को कौन मानता है"

"आप जानते हैं कि मैं तो पुराने ही ख्याल का आदमी हूँ। अच्छा अब मुझे आज्ञा दीजिये।"

"जमींदार साहब! दिल तो यह चाहता है कि घन्टे दो घन्टे अभी और आप से बातें करता, किन्तु आपका काम भी हर्ज नहीं करना चाहता।"

"कोई बात नहीं भगवान ने चाहा तो संबन्ध होने के पश्चात् हम दोनों एक दूसरे से रोजाना ही मिलते रहेंगे।"

"जमीदार साहब! आपकी नेकी को देखकर तो ऐसा दिल चाहता है कि हम और आप दोनों एक ही जगह रहें, ताकि एक दूसरे से कभी अलग न हो सके।"

"भगवान ने चाहा तो ऐसा ही होगा। आप जानते हैं कि मेरी इकलौती लड़की है, इसलिये इससे अधिक और मेरा क्या सौभाग्य हो सकता है कि धीरेन्द्र और आप सब मेरे ही घर पर आकर रहें, ताकि हम दोनों परिवार इकट्ठे हो जायें।"

"अगर आपकी ऐसी ही इच्छा होगी, तो मुझे इसमें भी कोई आपत्ति नहीं होगी। अब तो आप की खुशी मेरी खुशी है।"

"मैं आप का बड़ा ही आभारी हूँ. जो आपके विचार मेरे प्रति इतने उदार हैं! अच्छा अब मुझे आज्ञा दीजिये।"

यह कहकर जमींदार साहब हरनन्दन के यहाँ से अपने घर को चले गये। जमींदार के चले जाने के पश्चात्, हरनन्दन खुशी से फूला नहीं समा रहा था। उसे ऐसा लग रहा था, जैसे कि संसार भर की दौलत उसके हाथ लग गई हो। हरनन्दन ने सगाई की महूर्त की शुभ सूचना अपनी स्त्री को भी घर के भीतर जाकर सुना दी। हरनन्दन की स्त्री को यह विवाह बिल्कुल ही न पसन्द था, किन्तु वह बेचारी कर ही क्या सकती थी। मजबूर थी। वह चाहती थी कि धीरेन्द्र को उसी के योग्य कोई लड़की मिले। वह यह भी चाहती थी कि धीरेन्द्र का विबाह जिस लड़की से हो उसके भाई, बहिन और भरा पूरा परिवार हो। किंतु हरनंदन को जमीदार की दौलत ने ऐसा अंधा बना दिया था कि वह किसी की सुनने को तैयार न था। उसने धीरेन्द्र से भी इस संबंध में पूँछने का प्रयत्न न किया। वह यह समझता था कि धीरेन्द्र में उसकी बात टालने की हिम्मत नहीं है। उधर धीरेन्द्र ने जिस दिन से बी० ए० पास किया और कालेज में अध्यापक बना, प्रतिदिन कालेज के प्रिंसिपल के घर जाकर उसके प्रति आभार प्रकट करता। उह जब प्रिंसिपल के घर जाता, तो वह अवश्य ही साधना से मिलने का प्रयत्न करता। प्रिंसिपल साहब तो यह चाहते ही थे कि किसी प्रकार धीरेन्द्र और साधना एक दूसरे के इतने निकट आजायें कि दोनों एक दूसरे से विवाह करने का निश्चय कर लें। साधना और धीरेन्द्र में सम्पर्क यहाँ तक बढ़ता गया कि दोनों में से कोई भी कभी एक दो सप्ताह को बाहर जाता तो एक दूसरे को पत्र लिखते। साधना को अब यह भी विश्वास हो चला था कि उसके पिता धीरेन्द्र से उसका विवाह करना चाहते हैं। धीरेन्द्र भी बहुत समझदार और होनहार नवयुवक था। वह भी शनैः शनैः साधना के विचारों को समझने लगा था। नौबत यहाँ तक पहुँची कि दोनों एक दूसरे को अब कुशलता के पत्र लिखने के स्थान पर प्रेम पत्र लिखने लगे। प्रिंसिपल साहब एक अनुभवी व्यक्ति थे। वह ताड़ गये कि साधना और धीरेन्द्र दोनों ही एक दूसरे से विवाह

करने को तैयार हैं। आखिर प्रिंसिपल साहब ने अवसर पाकर साधना के विवाह का प्रस्ताव धीरेन्द्र के सामने रख ही दिया। धीरेन्द्र ने यह कहकर "जैसी आपकी इच्छा हो।" साधना के पिता को यह अनुभव करा दिया कि वह धीरेन्द्र साधना से विवाह करने को पूर्णतया तैयार है। यह समाचार साधना तक भी पहुँच गया। साधना तो स्वयं ही धीरेन्द्र जैसे होनहार नवयुवक से विवाह करने में अहना सौभाग्य समझती थी। उसे अपने पिता की सूझ-बूझ और दूरदर्शिता पर बड़ा संतोष हुआ। उसे यह स्वप्न में भी पता न था कि धीरेन्द के पिता ने धीरेन्द्र का विवाह किसी दूसरी लड़की से करना निश्चय कर दिया है। धीरेन्द्र भीं यह नहीं समझता था। जब उसका पिता उसकी राय लिये बिना कहीं उसका विवाह निश्चय कर देंगे। इसलिये दोनो ही यह समझते थे कि उनके माता-पिता उनके इस विवाह को एक आदर्श विवाह समझकर अपनी अनुमति दे देंगे।

धीरेन्द्र उस दिन प्रिंसिपल साहब के घर से सूर्यास्त होने के पश्चात् अपने घर को चला। जब वह सायंकाल को अपने घर पहुँचा तो हरनन्दन ने उसको अपने कमरे में बुलाया और अपने पास बिठाते हुये प्रेम पूर्वक शब्दों में कहा—

"बेटा धीरेन्द्र! मैंने तुम्हें एक खुशखबरी सुनाने के लिये बुलाया है।"

हरनन्दन ने धीरेन्द्र के कंधे पर हाथ रखते हुये कहा।

"पिता जी वह क्या खुशखबरी है।"

"वह यह कि मैंने तुम्हारा विवाह निश्चय कर दिया है।"

"विवाह? क्या आपकी कुछ बातें प्रिंसिपल साहब से हुई थी।" धीरेन्द्र ने शरमाई हूई निगाहों से कहा।

"नहीं इस सम्बन्ध में प्रिंसिपल साहब से मेरी कोई बात नहीं हुई।"
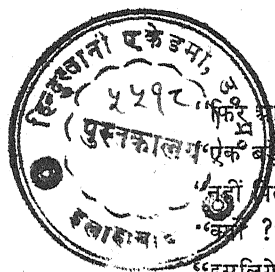
"फिर आपने मेरा विबाह कहाँ तै कर दिया।"

"एक बड़े जमींदार की लड़की से।"

"नहीं पिता जी ! यह नहीं हो सकता है।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि मैं प्रिंसिपल साहब को साधना के विवाह करने का वचन दे चुका हूँ।"

"कौन साधना।"

"प्रिंसिपल साहब की लड़की।"

"क्या कहा, क्या, मैंने तुम्हें इसलिये बी० ए० पास कराया था कि तुम मुझसे बिना पूँछे ही अपना विवाह तै करलो।"

"हरनंदन ने गुस्से से आँखें लाल करते हुये कहा।"

"पिता जी साधना को मैं वचपन से जानता हूँ। वह मेरे साथ कालेज में पढ़ती थी। वह बहुत नेक लड़की है।"

धीरेन्द्र ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया।

"लेकिन तुम यह नहीं जानते कि शहर के लोग मुझे कितने सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। वह मुझे अपना नेता मानते हैं। अगर तुम्हारा विवाह प्रिंसिपल जैसे मामूली व्यक्ति की लड़की से हो जायेगा तो फिर शहर में मेरी क्या इज्जत रहजायेगी।"

"किन्तु पिता जी एक नेता की हैसियत से आप स्वयं ही सोचिये कि प्रिंसिपल का दर्जा जमींदार से कहीं ऊँचा है।"

"यह तुम्हारा अच्छा विचार है।"

हरनन्दन ने नाक भौं चढ़ाते हुये कहा।

"पिता जी आप जानते हैं कि प्रिंसिपल का कार्य शिक्षा देने का है और जमीदार का खून चूसने का।"

"वाह बेटा ? क्या कहना है। अब तो तुम हमारे भी गुरू बन गये हो।"

"नहीं पिता जी मैं तो आपका सेवक हूँ।"

"मगर धीरन्द्र याद रक्खो ! तुम्हारा विवाह जमींदार की लड़की से ही होगा।"

"नहीं, यह हरगिज नहीं होगा। मैं दौलत के लिये अपना विवाह नहीं करूँगा।"

"ओह ! तुम्हारी वह हिम्मत कि तुम मेरे मुँह लग रहे हो। तुम्हें मालूम है कि शहर के बड़े से बड़े लोग भी मेरा लोहा मानते हैं।" हरनन्दन ने अकड़ कर जवाब दिया।

"पिता जी ! मुझे ऐसा लग रहा है कि आपको अपने सम्बन्ध में बहुत बड़ी गलत फहमी है। नेता और समाज सुधारक झूठी शान और सम्मान पर नहीं मरते बल्कि दूसरों की उपकार करने में ही अपना सौभाग्य समझते हैं।"

"धीरेन्द्र बकवास मत करो, वरना फिर मुझसे बुरा कोई नहीं होगा। मैंने जमींदार को वचन दे दिया है अब मैं उससे एक कदम भी पीछे नहीं हट सकता हूँ।"

"लेकिन पिता जी मैंने भी किसी को वचन देदिया है।"

"जानते हो इसका नतीजा क्या होगा।"

"जो भी आप सजा देंगे वह मैं सहन करूँगा।"

"तुम्हारी यह हिम्मत है, तो मेरे सामने से हट जाओ और मेरे घर से निकल जाओ। मैं तुम जैसे नालायक लड़के का मुँह भी नहीं देखना चाहता हूँ"

"बहुत अच्छा पिता जी जो आपकी आज्ञा हो।"

यह कहकर धीरेन्द्र हरनन्दन के पैर छू कर कमरे से बाहर निकल गया। वह अपनी माँ के पास गया। और उसने उनके पैर भी छुये। और फिर वह चला गया। माँ घर के भीतर अपने काम काज में व्यस्त थी। उसे कुछ पता नहीं था कि धीरेन्द्र और हरनन्दन में क्या

बात हुई। लेकिन थोड़ी ही देर के बाद जब हरनन्दन अपने कमरे से क्रोध में आँखें लाल किये हुये बाहर निकला तो धीरेन्द्र की माँ को यह प्रतीत हुआ कि हरनन्दन और धीरेन्द्र में अवश्य कोई सख्त बात हुई है। उसने हरनन्दन से पूँछने का प्रयत्न किया तो हरनन्दन क्रोध से पागल होकर उस बेचारी पर बरस पड़ा और सारी भड़ास और क्रोध उसी पर निकाल दिया।

हरनन्दन को धीरेन्द्र पर इतना क्रोध आ रहा था, जैसे कि धीरेन्द्र ने उसकी कोई बहुत बड़ी सम्पत्ति छीन ली हो। वह जमींदार की जिस दौलत और रुपये का स्वप्न देख रहा था, वह धीरेन्द्र ने कुछ ही क्षण में मिट्टी में मिला दिया। हरनन्दन को अपनी इस असफलता पर हार्दिक वेदना थी। उधर धीरेन्द्र अपने मकान से सीधा प्रिंसिपल साहब के घर पहुँचा। प्रिंसिपल साहब उस समय कालेज में गए हुए थे किंतु साधना घर पर ही थी। साधना धीरेन्द्र के कुम्हलाये हुये चेहरे को देखकर समझ गई कि धीरेन्द्र को अवश्य ही कोई चोट पहुँची है। उसने धीरेन्द्र से कारण पूँछा, तो धीरेन्द्र ने अपने और अपने पिता के बीच हुई सब बातों को विस्तारपूर्वक साधना को बता दिया और यह भी बता दिया कि उसके पिता हरनन्दन ने उसे सदैव के लिये घर से निकाल दिया है। साधना ने धीरेन्द्र को धैर्य बँधाते हुये सान्त्वना दी, और उसे विश्वास दिलाया कि वह कभी उसका साथ नहीं छोड़ेगी। अभी धीरेन्द्र और साधना में इस प्रकार की बातें ही हो रही थीं कि प्रिंसिपल साहब भी कालेज से आगये। धीरेन्द्र ने प्रिंसिपल साहब को भी सब कुछ बता दिया। प्रिंसिपल साहब ने धीरेन्द्र की पीठ ठोंकते हुये उसे सच्चाई पर दृढ़ रहने के लिये बधाई दी। और उससे आग्रह किया कि वह उन्हीं के घर पर रहे।

प्रिंसिपल साहब ने धीरेन्द्र से यह भी कहा कि अब तक तो वह उसे शिष्य की दृष्टि से देखता था किंतु अब वह उसे अपने होनहार पुत्र

की दृष्टि से देखने लगा है। धीरेन्द्र को प्रिंसिपल साहब के घर रहते हुये कई सप्ताह हो गये, लेकिन हरनन्दन ने कभी धीरेन्द्र से मिलने या उसे बुलाने की तनिक भी चिन्ता न की। बल्कि यदि उसका कोई साथी उसके सामने धीरेन्द्र का नाम भी ले लेता था तो हरनन्दन का खून क्रोध से खौलने लगता था। बेचारी धीरेन्द्र की माँ दिन भर धीरेन्द्र की याद में घुलती रहती थी और अक्सर सिसकी भर २ कर रोने लगती थी। जब कभी हरनन्दन एक दो दिन के लिये शहर से बाहर चले जाते। तो धीरेन्द्र की माँ छुपकर धीरेन्द्र को देखने के लिये प्रिंसिपल साहब के घर चली आती थी। धीरेन्द्र अपनी माँ के पैर छूता और उसे सांत्वना देने का भरसक प्रयत्न करता।

कुछ ही दिनों के पश्चात् प्रिंसिपल साहब ने साधना के विवाह की महूर्त धीरेन्द्र से निश्चय कर दी। और प्रिंसिपल ने अपने ही घर अपने सब मित्रों और सम्बन्धियों तथा कालेज के अध्यापको को आमंत्रित करके साधना और धीरेन्द्र का विवाह कर दिया। प्रिंसिपल ने हरनन्दन को भी निमंत्रण पत्र भेजा, किंतु हरनन्दन के पास जब यह निमन्त्रण पहुँचा तो वह क्रोध से आग बबूला हो उठा। उसने यह समझकर कि प्रिंसिपल ने उसके लड़के को बहला-फुसला कर अपनी लड़की से विवाह कर दिया और जमींदार की लड़की से उसका विवाह नहीं होने दिया उसनेप्रिंसिपल को नीचा दिखाने का बीड़ा उठाया। वह समझता था कि जमींदार की सम्पत्ति से उसे प्रिंसिपल साहब के ही कारण हाथ धोना पड़ा है। अतः उसने प्रिंसिपल के विरुद्ध अपने साथियों द्वारा षडयन्त्र रचने का पूर्ण निश्चय कर लिया। हरनन्दन और उसके साथी यहाँ तक प्रिंसिपल के विरोधी हो गये कि वह प्रिंसिपल की हत्या करने की योजना बनाने लगे। परिणाम स्वरूप वह अंधेरे उजाले प्रिंसिपल को घेरने और उसकी हत्या करने की घात में रहने लगे। एक दिन जब कि प्रिंसिपल को किसी कार्यवश कालेज में

शाम होगई और रात के अंधेरे में वह अपने घर की ओर जा रहा था, हरनन्दन और उसके साथी कालेज के पास छुपकर एक पेंड़ के पीछे बैठ गये। जैसे ही प्रिंसिपल उधर से गुजरे, हरनन्दन ने उनपर रिवाल्वर से फायर कर दिया। मगर गोली बजाय प्रिंसिपल के लगने के उनके एक साथी के लगी, जो उनके साथ आ रहा था। वह वहीं बेहोश होकर गिर पड़ा, और फिर होश में न आ सका। प्रिंसिपल ने शोरोगुल करना आरम्भ किया। प्रिंसिपल की आवाज को सुनकर कालेज के समस्त नौकर-चाकर और छात्र दौड़ पड़े। हरनन्दन और उसके साथी भाग निकले, लेकिन कालेज के लड़कों और दूसरे लोगों ने हरनन्दन और उसके एक दो साथियों को मय रिवाल्वर के पकड़ लिया। वह उन सब को पकड़ कर निकट के थाने में ले गये। थाने में हरनन्दन के विरुद्ध धारा ३०२ की रिपोर्ट लिखी गई, और उन सबको जेल भेज दिया गया। हरनन्दन और उसके साथियों पर हत्या का मुकदमा चला। न्यायालय से हरनन्दन को आजन्म कारावास और उसके दो साथियों को १०-१० वर्ष की सजायें हुईं। धीरेन्द्र और उसकी माँ को हरनन्दन के कारावास होने पर बड़ा दुःख हुआ। मगर वह कर भी क्या सकते थे। उन्हें बड़ी लज्जा भी थी कि हरनन्दन ने प्रिंसिपल पर गोली चलाई।

अब भी जेल में हरनन्दन की स्त्री कभी २ इतवार के दिन हरनन्दन से मुलाकात करने पहुँच जाती है, किन्तु धीरेन्द्र से हरनन्दन की मुलाकात इसलिये नहीं होती कि हरनन्दन ने धीरेन्द्र से उसका मुँह देखने के लिये पहिले ही मना कर दिया था। धीरेन्द्र अब साधना और अपनी माँ के साथ शहर में प्रिंसिपल साहब से अलग एक मकान किराये पर लेकर रहने लगा। प्रिंसिपल और कालेज के छात्र धीरेन्द्र को आज भी उतनी ही प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते है जितना कि पहिले। लेकिन हरनन्दन

ने जेल में भी अपनी मनोवृत्ति को नहीं बदला है। वह जब कभी जेल के कैदियों के साथ बात करता है, तो सदैव यही कहता है कि यदि प्रिंसिपल उसके रास्ते में न आता तो वह आज शहर का सबसे बड़ा धनी व्यक्ति होता। हरनन्दन को प्रिंसिपल पर अब भी उतना ही क्रोध आता है जितना पहिले आता था। यदि उसका वस चले तो वह अब भी प्रिंसिपल को गोली मार दे। किन्तु जेल की ऊँची दीवारें उसके इस उद्देश्य की पूर्ति में बाधक बनी हुई हैं।

———

सुहागिन विधवा

चमेली अपने बाप की इकलौती लड़की थी। उसके कोई भाई और बहिन नहीं था। चमेली के माँ बाप ने चमेली को बड़े लाड़ प्यार से पाला था। चमेली कुछ अधिक पढ़ी-लिखी नहीं थी, किन्तु लाड़-प्यार के कारण फैशन बनाने और बनाव शृङ्गार करने में किसी भी कालेज की फैशनेबिल लड़की से कम न थी। जब कभी वह अपने पिता के साथ बाजार जाती तो ऐसी चडक-भडक के कपड़े पहिनती कि सैकड़ों की दृष्टि उस पर पड़ती थी। यहीं तक नहीं वरन् चमेली जब कभी अपने मुहल्ले में भी निकलती तो ऐसे चमकदार कपड़े पहन कर निकलती थी कि मुहल्ले के न जाने कितने मनचले और आवारा नवयुवक उसे घूर घूर कर देखते थे। जितना ही लोग उसकी ओर देखते थे, उतना ही वह उन लोगों के सामने बड़े नाज़ और नखरे से निकलती और चलती थी। चमेली की माँ एक पुराने विचार रखने वाली महिला थी। वह यह नहीं चाहती थी कि चमेली इस प्रकार फैशन और बनाव शृङ्गार में लगी रहे। वह नहीं चाहती थी कि चमेली इस प्रकार मुहल्ले में तितली की तरह इधर से उधर चलती फिरती रहे। किन्तु चमेली का बाप यह नहीं चाहता था कि उसकी मां की किसी बात से चमेली के दिल को ठेस लगे। वह किसी न किसी प्रकार चमेली की माँ को समझाता रहता था। परिणाम यह हुआ कि चमेली की फैशन और उसके बनाव शृङ्गार में दिन प्रति दिन उन्नति ही होती रही। और इस प्रकार वह अपने मुहल्ले की सबसे अधिक फैशनेबुल लड़की समझी जाने लगी।

चमेली के मुहल्ले में अवारा और गुण्डे लड़कों की कमी न थी। उनमें से कुछ ऐसे थे जिन्हें प्रातः काल से लेकर सायंकाल तक कोई

कार्य ही न था। केवल वह मुहल्ले में इधर से उधर मटरगश्त करते रहते थे। उनमें से कई चमेली के मकान के इधर-उधर खड़े हुये हंसी-ठट्ठा करते रहते थे। इन लड़कों ने अपनी ऐसी टोली बना रक्खी थी कि मुहल्ले के सभी नेक और अच्छे लोग इनसे डरते थे। चमेली का बाप भी इन लड़कों से आधी बात भी कहने का साहस नहीं रखता था। वह अक्सर इन्हें निकलते पैठते अपने मकान के चारों तरफ देखता था किन्तु फिर भी उनके मुँह नहीं लगना चाहता था। एक दो बार जब उसने इनमें से किसी का नाम व पता पूँछने का प्रयत्न किया तो यह लोग और भी उसकी माखौल और मजाक उड़ाने लगे। इसके अतिरिक्त वह यह नहीं समझता था कि यह लड़के चमेली की तांक झांक में खड़े रहते हैं। वह तो केवल यह समझता था कि यह अवारा नवयुवक अपना समय काटने के लिये दिन भर मटर गश्त करते रहते हैं। इन लड़कों की टोली का सरदार एक नवयुवक राजा था। राजा का बाप एक रिक्शा खीचने वाला बड़ा ही गरीब व्यक्ति था। वह वेचारा दिन भर सुबह से सायंकाल तक रिक्शा चलाकर अपना तथा अपने बाल बच्चों का पेट भरता था। उसने अपना पेट काटकर गरीबी की दशा में भी राजा की स्कूल में पढ़ने के लिये प्रवेश कराया था, किन्तु राजा स्कूल में ऐसी चांडाल चौकड़ी में फँस गया कि कई साल तक हाई स्कूल की परीक्षा में फेल होता रहा और आखिर पढ़ाई-लिखाई छोड़कर घर बैठ गया। मुहल्ले के अवारा लड़कों की संगति में उसने सारी बुरी आदतें सीखलीं। वह जुआं खेलने लगा, शराब पीने लगा और कभी कभी घर से रात २ भर गायब रहता। जिस दिन वह जुयें में जीतकर आता उस दिन यार दोस्तों के साथ खूब शराब उड़ती और घर में खाना खाने के बजाय होटल में खाना खाता। जो कुछ राजा का बाप सुबह से शाम तक और कभी कभी रात को भी रिक्शा चलाकर कमाता, उसमें से भी अधिकांश पैसा राजा उनसे छल कपट करके किसी न किसी प्रकार से ऐंठ लेता।

राजा के फैशन की यह दशा थी कि किसी रईस जादे के लड़के से कम दिखाई नहीं देता था। गर्मियों में रंगीन बुशशर्ट, सिल्क की पतलून और जाड़ों में बलेजर का शूट, इसके अतिरिक्त मुंह में हर समय सिगरेट दबी रहती थी। बेचारा बाप राजा के इस खर्च के बोझे को सहन नहीं कर सकता था। किन्तु फिर भी कभी कभी तो वह इधर-उधर से कर्ज लेकर राजा की फरमाइशों को पूरा करता। उसने बहुत प्रयत्न किया कि राजा कहीं नौकरी कर ले, मगर राजा भला अपने बाप की कहाँ सुनने वाला था। एक कान सुनी और दूसरे से निकाल दी। राजा के माँ बाप दोनों ही राजा की इन आदतों से परेशान थे। किन्तु संतान कितनी ही बुरी क्यों न हो, माँ बाप के लिये फिर भी प्यारी होती है।

राजा और उसके साथियों ने मुहल्ले से आगे बढ़कर शहर भर में अपनी टोलियाँ बनाना आरम्भ कर दी थीं। इन टोटियों के द्वारा नगर में कई जगह जुआं खेलने के अड्डे बन गये थे। इन लोगों ने शहर की पुलिस को भी अपने साथ मिला रक्खा था। वह दिन दहाड़े जुआ खेलते शराब पीते और जो कुछ जुआ के नाल में प्राप्त होता उसे पुलिस को देकर मस्ती की छानतें। अब किसी की क्या मजाल थी जो राजा या उसके साथियों की शिकायत करता। एक दो बार नगर के कुछ नेक और भले आदमियों ने राजा और उसके साथियों की पुलिस से शिकायत की तो पुलिस वालों ने राजा की टोली को शिकायत करने वालों के नाम बता दिये, जिसका परिणाम यह हुआ कि इस टोली ने बेचारे शिकायत करने वालों को रास्ता निकलते बैठते, परेशान करना और धौल धप्पा करना आरम्भ कर दिया। नतीजा यह हुआ कि लोगों ने इस टोली के डर से चुप होकर बैठ गये।

राजा, अक्सर जब चमेली मुहल्ले में इधर उधर जाती, तो उसका पीछा करता। किन्तु उसे अब तक कोई ऐसा अवसर प्राप्त नहीं

हुआ कि वह चमेली से बात कर सके। इसका कारण यह था कि अधिकतर तो चमेली अपने माँ या बाप के साथ ही मुहल्ले में किसी के घर जाती थी। एक दो बार जब कभी वह अकेली भी गई, तो भी राजा से आंखें चार होने पर भी, राजा चमेली से बात करने का अवसर न पा सका। अब चमेली की आयु लगभग १६–१७ वर्ष की हो चुकी थी। चमेली के माँ बाप अक्सर चमेली का विवाह करने की आपस में बात करते रहते थे। चमेली भी अपने माँ बाप की बातें छुप २ कर सुनती थी। वह यह चाहती थी कि उसका विवाह किसी बड़े फंशनेबुल और अपटूडेट नवयुवक के साथ हो, जिसके साथ वह हाथ में हाथ डाले हुये बाजार की सड़कों पर सैर करने को और थियेटर तथा सिनेमा देखने जाया करें। राजा में यह सब गुण थे। फैशन और चेहरे से वह किसी बड़े रईसजादे से कम नहीं मालूम होता घा। चमेली ऐसा ही पति चाहती थी। अकस्मात एक दिन चमेली अपने मुहल्ले के बराबर के मकान में अपनी किसी सहेली से मिलने गई। उसने देखा कि रास्ते में राजा खड़ा हुआ है। राजा और चमेली की आँखें चार होते ही दोनों एक दूसरे को कुछ देर तक घूर घूर कर देखते रहे। राजा चमेली के ढंग से यह ताड़ गया कि वह चमेली को अपने जाल में फांस सकता है। उधर चमेली भी राजा की निगाहों से यह समझ गई कि वह जब चाहे राजा को अपने चंगुल में फांस सकती है। अभी चमेली दस कदम भी आगे नहीं बढ़ी होगी कि राजा ने चमेली का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिये बनावटी तौर पर खांसने की कोशिश की। चमेली ने मुस्करा कर राजा के खांसने पर पीछे की ओर मुड़कर देखा। अब राजा को पूर्णतया यह विश्वास होगया कि वह चमेली पर अपना जादू कर सकता है। अतः जैसे ही चमेली ने राजा की ओर मुड़कर देखा, राजा ने धीरे से आवाज दी—

"सुनिये ! मैं आपके ही इन्तजार में खड़ा था।"

चमेली आगे बढ़ते २ रुक गई, और उसने फिर एक बार राजा की ओर घूर कर देखा और ठिठक कर खड़ी होगई। राजा समझ गया कि चमेली अब उसके प्रेम के जाल में फँस चुकी है। इसलिये उसने पुन: धीरे से चमेली से कहा—

"इधर आइए। आप वहाँ क्यों खड़ी हो गई।"

"आप कौन हैं, क्या चाहते हैं?"

चमेली ने शरमाई हुई निगाहों से उत्तर दिया।

"मैं हूँ तुम्हारा प्रेमी राजा।"

राजा ने मुस्कराते हुये धीरे से कहा।

"आप क्या चाहते हैं ?"

"तुम्हारा प्यार।"

"मगर यह कैसे संभव हो सकता है ?"

"क्यों नहीं हो सकता !"

"मैं आप का मतलब नहीं समझीं।"

"मतलब यह कि अब हम दोनों एक दूसरे के बहुत निकट आगये हैं।"

"नहीं, अभी हमारे और आपके बीच में बहुत लम्बा रास्ता है।"

"लेकिन हम इस लम्बे रास्ते को छोटा कर सकते हैं।"

"नहीं समाज के बंधन हमारे और आपके पैरों को जकड़े हुये हैं।"

"समाज के बन्धन हम और तुम दोनों मिलकर तोड़ सकते हैं चमेली

"आप को मेरा नाम किसने बताया !"

चमेली ने आश्चर्यजनक शब्दों में पूछा।

"मैं न जानें कब से आपके नाम की माला जप रहा हूँ।"

"आर का नाम।"

"राजा।"

"ओह! कितना प्यारा नाम है।"

चमेली ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया।

"चलिए आपको मेरा नाम तो पसन्द आया।"

राजा और चमेली में कुछ देर तक इसी प्रकार प्रेम पूर्वक बातें होती रहीं। अभी राजा और चमेली में बातें हो ही रही थीं कि सामने से राजा के कुछ साथी आते हुये दिखाई दिये। राजा ने चमेली को संकेत किया कि वह चली जाय, और धीरे से यह भी कह दिया कि "कल हम फिर यहीं मिलेंगे" चमेली चली गई। राजा भी अपने साथियों के साथ मटर गश्त करने चला गया। अब चमेली और राजा दोनों एक दूसरे से मिलने के उतावले थे। चमेली को यह कुछ नही मालूम न कि राजा कौन और किसका लड़का है, न उसने राजा से पूंछने का प्रयत्न किया। वह तो केवल उसके रूप और उसकी फैशन पर मोहित थी। राजा यह समझता था कि चमेली अपने बाप की इकलौती लड़की है इसलिये अवश्य ही उसके पास धन-दौलत और रुपया होगा। इस प्रकार राजा चमेली के सौन्दर्य से आंखें सेंकने के अतिरिक्त रुपया पैसा भी ऐंठना चाहता था। वह और चमेली उस दिन के बाद से और भी कई बार एक दूसरे से मिले, किंतु दोनों की बातें बिल्कुल खुलकर न हो सकीं। उधर चमेली की मां ने चमेली के आने जाने पर और भी कड़ी निगाह रखना आरम्भ कर दिया। वह चमेली को घर में कभी एक मिनट के लिये भी अकेला नही छोड़ती थी।

चमेली के मा बाप दोनों को यह चिंता थी कि चमेली का विवाह शीघ्र से शीघ्र कर दिया जाय। चमेली की आयु १७-१८ वर्ष की हो चुकी थी। अतः चमेली के पिता ने दिन रात एक करके चमेली के लिये एक लड़का ढूंढ़ निकाला। उधर चमेली और राजा की यह दशा थी कि अवसर वह दोनों एक दूसरे से छिपकर मिलने

और बात करने की कोशिश में रहते। कभी २ चमेली अपनी छत पर चढ़कर राजा से आंखें लड़ाती और ताक-झांक करती।

चमेली के पिता ने चमेली के लिये जो लड़का ढूँढा था उसका नाम गोपाल था। वह किसी सरकारी दफ्तर में बाबू था। चमेली के पिता ने चमेली की माँ से भी गोपाल से चमेली का विवाह करने की स्वीकृति ले ली थी। चमेली अपने विवाह की बातों को छिप २ कर सुनती थी। उसमें यह साहस नहीं था कि अपने विवाह के सम्बन्ध में अपने माता-पिता से एक भी शब्द कह सके। वह चाहती तो यह थी कि उसका विवाह राजा से हो किंतु उसमें यह साहस नहीं था कि वह अपने माँ बाप के सामने यह प्रस्ताव रख सके। जब उसने देखा कि उसके माँ बाप ने उसका विवाह गोपाल के साथ निश्चय ही कर दिया है तो फिर उसने राजा से मिलना-जुलना कम कर दिया। वह यह भी समझती थी कि उसका पति चूंकि दफ्तर में बाबू है और अंग्रेजी पढ़ा लिखा है इसलिये अवश्य ही फैशनेबुल और जमाने के अनुसार होगा। इस विचार को अपने हृदय में रखकर ही वह गोपाल से विवाह करने को राजी हुई थी।

कुछ ही दिनों में चमेली का विवाह गोपाल के साथ हो गया. किंतु जब चमेली विवाह के पश्चात् गोपाल के घर पहुँची तो उसकी निराशा की सीमा न रही। उसने देखा कि गोपाल एक पुराने विचारों का नवयुवक है। वह सुबह ही से शाम तक दफ्तर के कार्य में ही व्यस्त रहता है। गोपाल का रहन-सहन भी बिल्कुल साधारण था। वह धोती कुर्ता पहनकर दफ्तर जाता था और यही पोशाक घर पर भी पहनता था। चमेली को धोती कुर्ता पहनने वाले नवयुवकों से सख्त घृणा थी। वह ऐसे लोगों को बुद्धू और दकियानूसी समझती थी। वह स्वयं भी एक फैशनेबुल लड़की थी, और वैसा ही फैशनेबुल पति चाहती थी। वह जिस प्रकार के पति का

स्वप्न अपने दिल में देखती रही थी उसका वह स्वप्न मिट्टी में मिल गया, किंतु अब वह कर ही क्या सकती थी। वह दिल में खून का सा घूँट पीकर रह गई। उसे गोपाल से प्रेम के स्थान पर घृणा हो गई। गर्म दूध न पीने का न उगलने का। वह बाहर से तो गोपाल की सेवा करने और उसके हर आदेश को मानने का ढोंग रखती थी, किंतु दिल ही दिल में कुढ़ती रहती थी, और सुबह शाम हर समय भगवान से यह प्रार्थना करती कि गोपाल किसी भयंकर बीमारी या दुर्घटना का शिकार होकर संसार से चल बसे, ताकि उसे गोपाल से छुटकारा मिल जाये, और फिर वह राजा जैसे किसी नवयुवक से अपना दूसरा विवाह कर ले। जब कभी भी गोपाल को बुखार आता या उसके सर में दर्द होता तो चमेली ऊपरी दिल से उसकी सेवा में कोई कमी उठा नहीं रखती थी। घंटों चारपाई पर बैठ कर उसका सर दबाती और पंखा झलती रहती थी, किंतु दिल में प्रार्थना करती कि किसी तरह से गोपाल की बीमारी उसकी मृत्यु का कारण हो जाय। किंतु चमेली की यह इच्छा कभी पूर्ण नहीं होती थी। गोपाल एक दो दिन बीमार रहने के पश्चात् स्वस्थ हो जाता और फिर दफ्तर जाने लगता।

अकस्मात एक दिन गोपाल बहुत सख्त बीमार पड़ा। उसे मियादी बुखार होगया। करीब २१ दिन तक गरम पानी के अतिरिक्त और कोई खाना आदि डाक्टरों ने उसे नहीं बताया। गोपाल के बहुत से मित्र और सम्बन्धी गोपाल की बीमारी का समाचार सुनकर गोपाल को देखने आते और भगवान से गोपाल के स्वस्थ होने की प्रार्थना करते। चमेली जब किसी को गोपाल के पास आता देखती तो अपना सर पकड़ कर बैठ जाती और बनावटी सिसकियां लेने लगती, किंतु जब वह लोग चले जाते तो प्रसन्नता पूर्वक घरके काम-काज और खाने पीने में व्यस्त हो जाती। वह हर एक आने जाने वाले से यही कहती कि उसने गोपाल की बीमारी के गम के कारण कई दिन से

खाना नहीं खाया है। मुहल्ले के लोग और गोपाल के मित्र तथा सम्बन्धी सब चमेली को सान्त्वना देते और उनमें से कितने ही चमेली पर दया करके अपने घर खाना बनवाकर भेजते। प्रतिदिन चमेली के लिये गोपाल के घर किसी न किसी के यहाँ से कुछ न कुछ खाने पीने के लिये अवश्य आता। चमेली खूब पेट भर कर खाना खाती और दिन भर गुलछर्रे उड़ाती रहती। चमेली को गोपाल की दवा की तनिक भी चिंता न थी। किंतु डाक्टर गोपाल का मित्र था। वह गोपाल को अपने सामने दवा पिलाकर जाता था। सुबह से शाम तक तीन-चार बार आकर गोपाल को उसके घर पर देख जाता। चमेली, जब कोई व्यक्ति गोपाल को देखने आता तो झट, गोपाल की चारपाई के पास आकर बैठ जाती। किंतु जैसे ही वह चला जाता, चमेली गोपाल को अकेला छोड़कर अपने कार्य में व्यस्त हो जाती।

गोपाल की स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती गई। उसके हाथ पैर अक्सर ठंडे पड़ जाते थे। और अक्सर उसे बेहोशी आजाती थी। चमेली को यह पूर्ण विश्वास होगया था कि इस बार गोपाल की मृत्यु अवश्य ही हो जायेगी। इस लिये चमेली ने गोपाल के मरने की सब रस्मों को पूरा करने के लिये अपने दिल में न जाने कितने विचार बना रक्खे थे। वह दिल ही दिल में सोचती थी कि जब गोपाल की अर्थी निकलेगी तो वह अर्थी के पीछे अपने बालों को खोले हुये, छाती पीटती हुई चलेगी ताकि मुहल्ले के लोग और गोपाल के मित्र व सम्बन्धी यह समझ लें कि वास्तव में चमेली एक पतिव्रता स्त्री है। उसने गोपाल के मरने के पश्चात् अपने पहिनने के लिये एक काली धोती भी मंगा रक्खी थी ताकि वह उसे पहनकर दस-बीस दिन गोपाल का मातम मनाये। विधवा स्त्रियाँ किस प्रकार अपने रस्म रिवाज अदा करती है। वह सब चमेली ने पहिले ही सीख लिये थे। अब केवल उसे इतना

ही इन्तजार था कि कब गोपाल की नब्ज समाप्त हो और कब उसे एक विधवा स्त्री के प्रकार अपने पति का मातम करने का अवसर प्राप्त हो।

चमेली को यह तो विश्वास हो ही गया था कि गोपाल केवल दो चार रोज का मेहमान है। इसी लिये अब उसने फिर राजा का विचार अपने दिल में करना आरम्भ कर दिया। उसने राजा को गोपाल की बीमारी में ही दो तीन पत्र भी लिखे, और उन पत्रों में उसने राजा से अपना प्रेम प्रदर्शित किया। राजा चमेली के पत्र पाते ही ताड़ गया कि चमेली उसके प्रेम का शिकार होचुकी है। फिर क्या था, राजा ने भी चमेली के पत्रों का उत्तर उसी प्रेम भरी भाषा में दिया, जिस भाषा में चमेली ने उसे पत्र लिखे थे। चमेली ने राजा का उत्तर आने के पश्चात् उसे एक पत्र और लिखा जिसमें उसने अपने यहाँ आने का निमन्त्रण दिया। राजा चमेली का पत्र पाते ही चमेली की ससुराल की ओर चल दिया। जब राजा चमेली की ससुराल में पहुँचा, तो उसने गोपाल को मृत्यु शैय्या पर पड़ा देखा। उसे भी यह विश्वास होगया कि गोपाल केवल दो चार दिन का ही मेहमान है। चमेली और राजा में खूब घुल मिलकर बातें हुईं। चलते समय राजा ने चमेली को यह विश्वास दिला दिया कि गोपाल की मृत्यु के पश्चात वह उससे विवाह कर लेगा और फिर दोनों का जीवन खूब ही रंगरेलियों में बीतेगा। राजा चमेली की ससुराल से अब लौटा तो उसने गोपाल की बीमारी और चमेली के प्रेम की दास्तान अपने मित्र और साथियों को भी सुना दी। अतः राजा के साथ राजा के सबइष्ट मित्र भी गोपाल की मृत्यु की प्रार्थना करने लगे, ताकि गोपाल की मृत्यु के पश्चात उसका छोड़ा हुआ धन दौलत सब इन लोगों के हाथ लग जाये।

अकस्मात चमेली की आशाओं के विपरीत गोपाल का बुखार उतरने लगा, और डाक्टर ने गोपाल को खतरे से बाहर घोषितकर दिया।

एक सप्ताह के भीतर ही गोपाल का ज्वर पूरी तरह से उतर गया। डाक्टर साहब ने कुछ ही दिनों बाद गोपाल को अपनी उपस्थिति में ही मूंग की दाल का पानी दे दिया। शनै: शनैः गोपाल को खाना मिलने लगा, और कुछ ही दिनों में वह स्वस्थ हो गया। चमेली की आशाओं पर पानी पड़ गया। उसके सारे इरादे खाक में मिल गये। राजा और उसके साथियों को जब गोपाल के स्वस्थ होने का समाचार मिला तो वह सब के सब हाथ मलते रह गये। अब गोपाल अपने दफ्गर जाने लगा।

अभी गोपाल को स्वस्थ हुये कुछ ही मास बीते थे कि अकस्मात उसे दफ्तर के किसी कार्यवश एक दूसरे शहर में जाने का आदेश मिला। गोपाल ने इस बात का प्रयत्न भी लिया कि कुछ दिन उसे और बाहर जाना न पड़े किंतु उसकी एक भी न चली। उसे अपने अधिकारी का आदेश पालन ही करना पड़ा। गोपाल केवल दो सप्ताह के लिये बाहर जा रहा था। चमेली जब गोपाल को विदा करने के लिये घर के दरवाजे पर आई, तो उमने बाहर से अपने आपको बड़ा दुखी जाहिर किया, और गोपाल के वियोग में बनावटी आंसू भी टपकाये। गोपाल ने उसके सर पर हाथ रखकर उसे ढांढस बंधाया और सान्त्वना देने का प्रयत्न किया। चमेली बाहर से तो सिसक २ कर रो रही थी और अन्दर ही अन्दर उसके पेट में खुशी के लड्डू फूट रहे थे। वह समझती थी कि दो सप्ताह के लिये उसे आजादी मिल गई। गोपाल के जाने के पश्चात् चमेली ने तुरन्त ही राजा को एक पत्र लिखा, और उसे आने का निमन्त्रण दिया। राजा पत्र पाते ही चमेली की ससुराल आ पहुँचा। चमेली राजा से मिलकर बहुत प्रसन्न हुई। दोनों में एक दूसरे से प्रेम की बातें होने लगीं। इस बार राजा केवल अकेला ही गया। वह अपने किसी साथी को अपने साथ चमेली के घर नहीं ले गया। राजा ने असने सब साथियों को चमेली के घर के पास किसी

धर्मशाला में टिका दिया। राजा और उसके साथी दिन में एक दो बार धर्मशाला में बैठकर चमेली को किसी न किसी बहाने किसी दूसरे स्थान पर ले चलने की योजनायें बनाते। वह यह भी चाहते थे कि वह कोई ऐसी योजना बनायें ताकि चमेली अपने सब जेवर और धन के सहित उनके साथ चलने को तैयार हो जाय। आखिर एक दिन उन्होंने कई घन्टे बैठकर एक षडयन्त्र के अनुसार यह निश्चय किया, कि वह यह समाचार फैला दे कि गोपाल की हृदयगति बंद होजाने के कारण देहान्त होगया, ताकि वह चमेली को बहला-फुसला कर उसके धन दौलत समेत किसी दूसरे नगर में ले जायें। अतः इसी षडयंत्र के अनुसार सायंकाल के समय राजा चमेली के पास पहुँचा। उसने ठट्ठा मार कर हंसते हुये छमेली से कहा।

"चमेली आज हमारी और तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगई।"
"मैं आपका मतलब नहीं समझी।"
चमेली ने आश्चर्य जनक शब्दों में पूँछा।

"मतलब यह कि हमारे और तुम्हारे बीच की दीवार समाप्त होगयी।"

राजा ने फिर एक जोर का ठट्ठा लगाते हुये कहा।
"यह आज आप क्या गोल मालब ातें कर रहे हैं।"
चमेली ने बड़ी उत्सुकता के साथ पूँछा।

"चमेली ! तुम्हें यह सुनकर खुशी होगी कि गोपाल अब इस दुनियां में नहीं है।"

राजा ने बनावटी हँसी हँसकर कहा।
"यह आप क्या कह रहे हैं। ऐसी मजाक अच्छी नहीं होती है।"
"चमेली !तुम जिसे मजाक समझ रही हो वह सच्चाई है।"
"यह आप किस आधार पर कह रहे हैं।"

"चमेली अभी गोपाल के दफ्तर से एक आदमी आया था। उसने मुझे बताया कि कल सायंकाल को गोपाल जब खाना खाने के पश्चात् चारपाई पर सोने को गया तो अकस्मात उसके हृदय की गति बंद हो गई और उसकी मृत्यु होगई।"

"लेकिन यह समाचार दफ्तर का आदमी घर पर देने क्यों नहीं आया।"

"वह तो घर पर ही आ रहा था, किंतु मुझे रास्ते में मिल गया और मुझसे उसने गोपाल के मरने का सारा समाचार बता दिया ताकि मैं तुम्हें वह समाचार बता दूं।"

"तो फिर क्या हमको वहाँ चलना होगा जहाँ गोपाल की मृत्यु हुई है।"

"चमेली अब हमारा और तुम्हारा वहाँ चलना व्यर्थ है, क्योंकि गोपाल जहाँ ठहरा हुआ था, वहाँ के लोगों ने कल रात ही उसका दाह कर्म संस्कार कर दिया।"

"तो फिर अब हमको क्या करना चाहिये।"

"चमेली अब तो हमको खुशी मनाना चाहिए।"

राजा ने फिर ठट्ठा लगाते हुये उत्तर दिया।

"देखिये आप इस प्रकार हँसिये मत। लोग न जाने क्या समझेंगे। यदि मुहल्ले वालों को यह पता लग गया कि गोपाल की मृत्यु पर हम खुशी मना रहे हैं, तो हमारा समाज में रहना दुर्लभ हो जायेगा।"

"चमेली ऐसे समाज पर खाक़ डालिए।"

"आप नहीं जानते हैं कि समाज के बन्धन स्त्रियों के लिये कितने मजबूत हैं। इसीलिये मैं यह चाहती हूँ कि मातमीलिवास पहनकर रोने

पीटने लगूँ, ताकि मुहल्ले वाले जान लें कि मैं बिधवा होगई और अपने पति का मातम मना रही हूँ।"

चमेली ने काली धोती पहनकर मातम मनाना आरम्भ किया। वह जो चूड़ियां पहने हुई थी उन्हें तोड़कर अपने मकान के दरवाजे पर डाल दिया और वह कमरे के बाहर मकान के दालान में आकर फूट २ कर रोने लगी। राजा भी एक तरफ चारपाई पर बैठा हुआ बनावटी आंसू बहाने लगा। चमेली के रोने पीटने का शोरगुल सुनकर मुहल्ले के लोग चमेली के घर आगये। उन्होंने चमेली और राजा से रोने-पीटने का कारण मालूम किया। चमेली ने अपना सर पीटते हुये कहा, "मेरी दुनियां उजड़ गई। मेरा पति इस संसार से चलबसा।" यह कह कर वह मुहल्ले वालों को दिखाने के लिये सर पीट पीटकर रोने लगी। गोपाल की मृत्यु का समाचार मुहल्ले भर में बिजली के प्रकार दौड़ गया। मुहल्ले की औरतें आ आ कर चमेली को ढांढस बंधाती और सान्त्वना देती थी। और चमेली बनावटी रोना रोकर यह सिद्ध कर रही थी कि उसके ऊपर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा है। मुहल्ले के लोगों को गोपाल की मृत्यु का समाचार सुनकर बड़ा दुःख हुआ। गोपाल एक नेक और सज्जन आदमी था। इस लिये मुहल्ले के सब लोग उससे सहानुभूति रखते थे।

चमेली ने इसी प्रकार तीन दिन गोपाल के बनावटी मातम में में व्यतीत किये। मुहल्ले वाले विचारे चमेली की सहानुभूति में लगातार तीन दिन तक खाना बनाकर उस के लिये भेजते रहे। चमेली सुबह से शाम तक बराबर मातमी लिवास में बैठी रहती, और रात होते ही चमेली और राजा खूब पेट भर कर खाना खाते, और खुशी मनाते। ज्योंही मुहल्ले का कोई पुरुष या स्त्री चमेली के घर शोक प्रकट करने को आता, दोनों रोनी सूरत बनाकर बैठ जाते। तीसरे दिन गोपाल की तीजा की रस्म चमेली और राजा ने मिल कर अदा की। मुहल्ले वाले

सुबह से शाम तक मातम परसी के लिये बराबर आते जाते रहे। तीजा होने के दूसरे दिन राजा ने चमेली से वहां से किसी दूसरे स्थान पर चलने को कहा। चमेली राजा के प्रेम में इतनी पागल हो चुकी थी कि वह बिना सोचे समझे तुरन्त ही उसके साथ चलने को तैयार होगई। चमेली ने दोपहर तक अपना सब सामान रुपये और जेवर बक्सों में बन्द किया और राजा के साथ चल दी।

उधर राजा ने अपने सब साथियों को यह सूचना दे दी कि चमेली उसके साथ कहां जा रही है। अतः राजा के साथी राजा के पहुँचने से पहले ही स्टेशन पर पहुँच चुके थे। जैसे ही राजा चमेली का सामान ट्रेन में रखकर चमेली के साथ चलने लगा, उसके साथी भी इधर-उधर ट्रेन में बैठ गये। राजा चमेली को किसी बड़े नगर में ले गया और चमेली को यह समझा दिया कि दो महीने इस नगर में रहने के पश्चात फिर वह उसे अपने मां बाप के पास ले जायेगा और वहीं उन दोनों का विधिवत विवाह भी हो जायेगा। चमेली स्वयं भी राजा के मां बाप के यहां तुरन्त नहीं जाना चाहती थी, क्योंकि उसी नगर में उसके माता-पिता का घर भी था। इसलिये वह गोपाल की मृत्यु के पश्चात इतनी जल्दी राजा से विवाह करने में हिचक रही थी। उसका विचार था कि कुछ दिनों इधर उधर रहने के पश्चात फिर वह और राजा मिलकर यह योजना बनायेंगे कि उन्हें कहा जाना और कहाँ रहना चाहिये। राजा चमेली की हर राय से सहमत था।

राजा और चमेली एक दो दिन तो किसी होटल में ठहरे रहे। राजा के साथी इसी बीच में शहर के भीतर चमेली का सौदा करने के प्रयत्न में रहते। अकस्मात उनकी भेंट नगरके एक बड़े धनी मानी सेठ से होगई, जिसकी आयु लगभग ५०–५५ वर्ष की थी, और जिसकी स्त्री को मरे हुये चार पांच वर्ष हो चुके थे। वह दस बीस हजार रुपया खर्च करके भी किसी सुन्दर लड़की से विवाह करना चाहता था।

और इसी उधेड़-बुन में उसे लगभग एक दो वर्ष बीत गये थे, किन्तु कोई भी लड़की उससे विवाह के लिये तैयार नहीं हुई। बिल्ली के भाग्यों छींका टूटा और स्वयं राजा के साथी सेठ के पास चमेली के विवाह करने का संदेश लेकर गये। सेठ जी को उन्होंने किसी न किसी प्रकार होटल में ले जाकर चमेली को दिखा भी दिया। चमेली के सौन्दर्य को देखकर सेठ जी इतने मोहित होगये कि राजा और उसके साथियों को मुँह मांगा रुपया देने को तैयार थे। अब सेठ जी की खुशी की सीमा न थी। सेठ जी के घर में एक दो नौकरों को छोड़कर और कोई न था। इससे पहिले सेठ जी तीन विवाह कर चुके थे। मगर उनकी तीनों स्त्रियां बिना किसी संतान के मर चुकी थीं। राजा चमेली को यह कहकर सेठ जी के घर लेगया कि सेठ जी उसके पिता के बड़े घनिष्ट मित्र हैं। कुछ दिन राजा भी चमेली के साथ सेठ जी के घर पर रहा। सेठ जी के घर हर प्रकार के ऐश और आराम के साधन थे। आलीशान बंगला, घर में नौकर-चाकर, किसी बात की भी कमी न थी। अब चमेली को यह पूर्ण विश्वास होगया था कि राजा के पिता सेठ जी के घनिष्ट मित्र हैं, इसलिये वह भी इतने ही धनी मानी व्यक्ति होंगे।

अब वह यह समझती थी कि राजा के साथ उसका जीवन बड़े भोग विलास और ऐशोआराम के साथ व्यतीत होगा। इधर सेठ जी जब कभी राजा से चमेली के विवाह की बात छेड़ते, तो राजा यह कह कर सेठ जी को विश्वास दिला देता था कि उसने चमेली को उसके साथ विवाह करने के लिये लगभग तैयार कर लिया है, अब केवल दो चार दिन की बात है। राजा ने सेठ जी को यह भी समझा रक्खा था कि चमेली के विवाह के पश्चात् तुरन्त ही उसका पति मर गया इसलिये वह अभी तक उसके शोक में बेचैन है, और शनैः शनैः उसके हृदय से यह शोक निकलता जा रहा है। राजा ने अपने आपको चमेली

का सम्बन्धी बता रक्खा था। सेठ जी को अब पूर्ण विश्वास था कि चमेली उससे विवाह करने को अवश्य ही राजी हो जायगी। सेठ जी दिन भर चमेली की याद में खोया २ सा रहने लगा। उसका दिल किसी काम में न लगता था। वह अगर अपने कारोबार पर भी जाता तो दिन में न जाने कितनी बार घर आकर चमेली को छुप छुप कर देखने का प्रयत्न करता।

उधर चमेली दिन-प्रतिदिन राजा से विवाह करने पर जोर देती। राजा यह कर चमेली की बात टाल देता था कि वह अपने पिता के मित्र सेठ जी को तैयार कर रहा है कि वह उसके पिता को चमेली के साथ विवाह करने पर रजामन्द कर ले। अब राजा के सामने दो बड़े जटिल प्रश्न थे। एक तो यह कि वह चमेली को किस प्रकार से सेठ जी के यहां से निकाल ले जाये। दूसरे यह कि उसके साथी जो सुबह से शाम तक सेठ जी के घर छाये रहते थे, उनसे उसे कैसे छुटकारा मिले। वह यह समझता था कि यदि वह चमेली को सेठ जी के हवाले करके दो-चार हजार रुपये सेठ जी से ले भी ले तो यह रुपया उसे अपने साथियों में बांटना पड़ेगा। फिर वह यह भी समझता था कि इतने साथियों के बीच कोई यह बात छिपी भी रह सकेगी या नहीं। अतः राजा ने तुरन्त अपने विचार को बदल दिया और अब वह चमेली को सेठ जी के यहां से किसी न किसी प्रकार से निकाल कर ले जाने के प्रयास में रहने लगा। वह यह भी चाहता था कि वह चमेली को अकेला ले जाकर किसी से अच्छी रकम ऐंठ ले, और साथ ही चमेली के पास जो जेवर और रुपये हैं उन्हें भी हड़प कर जाय। अतः उसने एक दिन जबकि उसके साथी सेठ जी के घर से बाहर कहीं बाजार आदि गये हुये थे, चमेली को किसी नुमायश दिखानेके बहाने अपने साथ चलने पर तैयार किया।

साथ ही उसने सेठ जी को भी यह कह कर राजी कर लिया कि वह चमेली का दिल बहलाने के लिये उसे एक दो घन्टे के लिये नुमाइश

में लिए जा रहा है। सेठ जी को राजा की बातों पर पूर्ण विश्वास था। उसने चमेली की नुमाइश में जाने की आज्ञा दे दी । राजा ने सेठ जी की आंखों को बचाकर चमेली को तांगे में बिठाया और चमेली के जेवर और रुपये के सूटकेस भी तांगे में यह कहकर रख लिए कि इन सूट केसों को घर में अकेले छोड़ जाना ठीक नहीं हैं। चमेली को लेकर राजा शहर के किसी दूसरे मुहल्ले में पहुँचा। वह और चमेली एक रेस्टोरेंट में बैठ गये। राजा ने चमेली को यह कह कर वहीं बिठा दिया कि वह नुमाइश के प्रवेश का टिकट लेकर अभी थोड़ी देर में उसके पास आता है। राजा शहर में इधर उधर चक्कर लगाता रहा। अकस्मात उसकी निगाह एक साइन बोर्ड पर पड़ी जिसमें लिखा था "डांसिग होम"। वह छत के ऊपर चढ़ गया जहां साइन बोर्ड लगा था। जब वह छत पर पहुँचा तो उसने वहां के प्रबंधक से भेंट की। प्रबंधक ने उसे बताया कि वहाँ उच्च कोटि का नृत्य सिखाया जाता है, और प्रत्येक सायंकाल को ६ बजे से साढ़े ८ बजे तक नृत्य होता है, जिसका टिकट ५) से लेकर ५०) तक है। राजा फौरन ताड़ गया कि यहां उसका उद्देश्य पूरा हो सकता है। अतः वह प्रबन्धक महोदय को एक अलग कमरे में ले गया और वहाँ उसकी उनसे बहुत देर तक बात चीत होती रही। बातचीत समाप्त होने के बाद मैनेजर ने राजा की मुलाकात एक बाई से कराई जो वहाँ की निदेशक थी। तीनों में कुछ देर तक बात हुई। फिर राजा रेस्टूरेंट में वापस आ गया जहाँ चमेली नुमाइश में जाने के लिए उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। राजा ने चमेली को आकर यह बताया कि नुमाइश के खुलने का समय रात के ८ बजे से होता हैं। राजा ने उससे यह भी बताया कि वहां गाना-बजाना और नृत्य भी होते हैं। उस समय तक वह दोनों उसी रेस्टोरेंट में चाय और खाना आदि खाकर निवृत्त भी हो चुके थे। अतः रात के ८ बजे तक राजा और चमेली उसी रेस्टोरेंट में ठहरे रहे। ठीक ८ बजे राजा चमेली को एक टैक्सी में बिठाल कर डांसिग होम में ले आया। कुछ देर तक चमेलो और राजा नाच व रंग की महफिल देखते रहे। रातको १० बजे जब नृत्य समाप्त हुआ और नृत्य देखने वाले सब अपने २

घर लौट गये तो चमेली ने राजा से भी वापस लौट चलने को कहा। राजा ने धीरे से यह कह कर चमेली को उत्तर दिया, "अच्छा तुम यहीं बैठो मैं नीचे से टैक्सी लेकर आता हूं।"

"बहुत अच्छा।"

यह कहकर राजा छत से नीचे उतर गया। वह कुछ ही देर में टैक्सी लेकर वापस आ गया। उसने चमेली से जेवर और रुपयों का सूट केस ऊपर से ले जाकर टैक्सी में रक्खा। चमेली यह समझ रही थी कि सूट केस रखने के बाद राजा उसे ऊपर छत पर बुलाने आयेगा। किंतु राजा वहाँ से कहाँ चला गया यह किसी को पता नहीं। चमेली का सौदा नाच घर के मैनेजर से पहिले ही हो चुका था। अतः नाच घर के मैनेजर ने चमेली को वहाँ से न जाने कहाँ गायब कर दिया। सेठ जी एक दो दिन तक तो चमेली के इन्तजार में आंखें बिछाये बैठे रहे, किन्तु दो दिन के बाद भी जब चमेली और राजा वहां नहीं लौटे तो वह समझ गये कि उन्हें धोका दिया गया। अतः वह बेचारे अपने अरमानों का खून करके बैठ रहे। राजा के साथियों ने भी दो-चार दिन राजा और चमेली की तलाश में बहुत दौड़-धूप की, मगर फिर वह भी थक कर बैठ गये, और अपने २ घर चले गये।

दो सप्ताह के बाद गोपाल दफ्तर का काम समाप्त करके अपने शहर लौटा। जब वह स्टेशन से उतर कर अपने घर पहुँचा तो उसने मकान के दरवाजे पर ताला लगा पाया। वह समझा कि चमेली मुहल्ले में किसी के घर चली गई है। इस समय कुछ अंधेरा हो चुका था। अतः गोपाल ने अपने बराबर वाले पड़ोसी के मकान के दरवाजे के बाहर उसकी कुंडी खटखटा कर आवाज दी। गोपाल की आवाज से उसका पड़ोसी मकान में से निकल कर आया, और जब उसने अपने दरवाजे के बाहर गोपाल को खड़ा देखा तो वह बड़ी जोर से चीख कर "भूत है भूत है" कहता हुआ अपने घर के अन्दर घुस गया। गोपाल पड़ोसी की

चीख पुकार सुनकर हक्का बक्का सा रह गया। वह नहीं समझ पा रहा था कि आखिर माजरा क्या है। गोपाल के पड़ौसी की चीख पुकार से मुहल्ले के और भी कई लोग लाठियां ले ले कर निकल आये। उन्होंने गोपाल को चारों तरफ से घेर लिया। गोपाल को बड़ा आश्चर्य हो रहा था कि मुहल्ले वाले क्यों उसके साथ ऐसा व्यवहार कर रहे हैं। उसने जोर से आवाज देकर मुहल्ले वालों से कहा—

"भाइयो मैं गोपाल हूँ।"

"गोपाल तो कई दिन हुये मर गया। तुम गोपाल का भूत मालूम होते हो।"

मुहल्ले वालों ने चिल्ला कर कहा।

"आपका यह ख्याल गलत है। मैं जीवित हूँ।"

इतने में ही मुहल्ले के कुछ और लोग भी बिजली की टार्च और जलती हुई मशालें लेकर वहां आ गये। टार्च और मशालों की रोशनी में देखा तो वास्तव में गोपाल ही खड़ा था। उन सब को आश्चर्य ही रहा था कि आखिर गोपाल की मृत्यु का समाचार क्यों उड़ाया गया। गोपाल की स्त्री गोपाल की मृत्यु पर मातम कर चुकी थी, और मुहल्ले में गोपाल की मृत्यु का समाचार फैल चुका था। मुहल्ले वालों ने उसकी मृत्यु के संबंध में सब बातें बताईं, और यह भी बताया कि चमेली एक सप्ताह हुआ, उसके मरने का समाचार पाकर अपने को विधवा बना चुकी है, और अब न जानें कहां चली गई है। गोपाल को यह जानकर बड़ा दुःख और आश्चर्य हुआ। वह नहीं समझ पा रहा था कि आखिर उसकी मृत्यु का समाचार क्यों और किसके द्वारा फैलाया गया। उसे चमेली के चले जाने का और भी अधिक दुःख था। उसने मुहल्ले वालों की सहायता से मकान का ताला तोड़ा और जब वह मकान के भीतर घुसा तो उसने मकान को खाली पाया। केवल मकान में कुछ चारपाइयां और फटे पुराने कपड़े पड़े हुये थे। गोपाल ने बहुत कुछ प्रयत्न किया चमेली के पता

लगाने का , किंतु किसी को मालूम हो तो चमेली का पता लगे । मुहल्ले के किसी व्यक्ति को चमेली के जाने का कानों कान तक पता न था। गोपाल ने वह रात तो अपने मकान में ज्यों त्यों काटी । वह रात भर परेशानी की दशा में इधर से उधर चारपाई पर करवटें बदलता रहा। सुबह होते ही उसने अपने सब साथियों और सम्बन्धियों से चमेली के संबंध में जबाबी तार किये किन्तु उसका कहीं पता न चला। वह निराश होकर चमेली के माता-पिता के घर गया। वहां उसने चमेली के संबंध में पूँछ तांछ की, और जब उन्हें चमेली के गायब होने का समाचार मिला तो उनके सर पर भी गम का पहाड़ टूट पड़ा। चमेली अपने माता-पिता की इकलौती लड़की थी। उन्हें ऐसा लगा कि जैसे उनकी दुनियां ही लुट गई हो। चमेली के मां बाप दोनों ही चमेली के शोक में घुल २ कर सूख कर कांटा हो गये, और कुछ ही महीनों में वे दोनों इस संसार से चल बसे।

गोपाल चमेली के गम में पागल जैसा हो रहा था। वह महीनों चमेली के शोक में आंसू बहाता रहा। दफ्तर में भी उसका मन नहीं लगता था। उसके साथियों ने भी चमेली को ढूँढ़ने में कोई कसर उठा न रक्खी थी, किन्तु चमेली का किसी को पता न चला। एक वर्ष तक गोपाल और उसके साथी चमेली को ढूँढने में लगातार प्रयत्न करते रहे, किंतु अंत में निराश होकर बैठ रहे। गोपाल के दफ्तर के साथियों और मित्रों ने गोपाल को सांत्वना दी और उससे दूसरा विवाह करने का आग्रह किया। गोपाल यह तो समझ चुका था कि चमेली ने कोई षडयंत्र रचा है। इसी लिए वह यहां से भाग गई है, किंतु फिर भी वह दूसरा विवाह करने पर राजी नहीं हो रहा था। गोपाल को उसके साथियों और मित्रों ने समझा बुझा कर दूसरा विवाह करने पर राजी कर लिया, और गोपाल का विवाह अपने शहर से दूर दूसरे नगर की एक लिखी पढ़ी योग्य और सुशील लड़की से ठहरा दिया।

गोपाल का दूसरा विवाह निश्चय हो गया। विवाह की मूहूर्त

आई। गोपाल के साथियों तथा संबंधियों ने बड़ी धूम धाम से गोपाल की बारात निकाली। गोपाल की ससुराल वाले भी धनी-मानी व्यक्ति थे। उन्होंने भी बारात के आदर-सत्कार में कोई कसर उठा न रक्खी थी। गोपाल का विवाह-संस्कार बाजे-गाजे और गाने बजाने की महफिल के साथ हुआ। जब गोपाल मंडप से उठा तो वह भी अपने इष्ट मित्रों की इच्छानुसार गाने बजाने वाली महफिल में सम्मिलित हो गया। गोपाल के ससुराल वालों ने इस अवसर पर नगर की प्रसिद्ध वेश्या को नाचने और गाने के लिए बुला रक्खा था। नाच-गाना आरम्भ हुआ। गोपाल की दृष्टि जैसे हो नाचने वाली वेश्या की ओर पड़ी और गोपाल की आंखें जैसे ही नाचने वाली वेश्या से चार हुईं, गोपाल गश खाकर गिर पड़ा। नाचने वाली वेश्या भी गोपाल को देखते ही ठठक कर रह गई और सर पकड़ कर बैठ गई यह वेश्या चमेली थी। गोपाल के इष्ट मित्रों को आचार्य था कि आखिर यह बात क्या है। उन्होंने गोपाल के मुंह पर पानी छिड़का तो कुछ देर बाद गोपाल होश में आया। किंतु जब उसने आंखें खोलीं तो चमेली वहां पर उपस्थित नहीं थी। वह तुरंत ही वहां से चली गई। गोपाल ने आंखें फाड़ २ कर चारों तरफ देखा किंतु उसे चमेली कहीं दिखाई नहीं दी। तब से अब तक गोपाल और चमेली की भेंट कहीं नहीं हुई।

———

'विरासत'

श्री हीरालाल की गणना बहुत बड़े नेताओं में थी। कोई भी ऐसा महीना नहीं होता था जब कि उन्हें १०-२० सार्वजनिक सभाओं में भाषण न देना पड़ता हो। उनका घर उनके फोटों और रंग बिरंगी जयमालाओं से सजा रहता था। उनके भाषण हर दूसरे तीसरे दिन समाचार पत्रों में छपते रहते थे। भाषण देने में तो वह इतने निपुण थे कि जनता को जब हंसाना चाहते हंसाते और जब रुलाना चाहते तो रुला देते। उनके सैंकड़ों अनुयायी थे जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य शाही के विरुद्ध भारत की आजादी की लड़ाई में भाग लिया था। नाना प्रकार की जेल यातनायें सहन की थीं। उनमें से बहुत से तो बेचारे अपना सब कुछ खो बैठे। यद्यपि नेता जी तो सदैव जेल में भी ए क्लास में ही रक्खे जाते थे, किन्तु उनके यह अनुयायी सी क्लास में ही रहते थे, और जेल में कड़ी से कड़ी मेहनत और यातनायें सहन करते थे। इन यातनाओं के सहन करने के पश्चात भी इन अनुयायियों की देश भक्ति, बहादुरी और सचाई में कोई अन्तर नहीं पड़ता था। जब भारत स्वतंत्र हो गया तो भी यह लोग हीरालाल को ही अपना नेता और सच्चा शुभ चिंतक समझते रहे। हीरालाल तो अंग्रेजी साम्राज्य शाही समाप्त होने के पश्चात न जाने कितने पदों पर आसीन रहे किन्तु बेचारे यह अनुयायी लोग उस समय भी एक स्वयं सेवक के अतिरिक्त कुछ न बने। उन्हें जो भी आदेश अपने नेता हीरा लाल की ओर से मिलता था वह उसे तन मन से पूरा करने की कोशिश करते थे। उनका यह पूर्ण विश्वास था कि जिस प्रकार उन्होंने हीरालाल के नेतृत्व में अपनी आजादी की लड़ाई लड़ी है। इसी प्रकार उन्हीं के पीछे चल कर वह अपने देश की उन्नति कर सकते हैं। उन्होंने हीरालाल की प्रतिष्ठा और ख्याति के बढ़ाने में कोई कसर उठा न छोड़ी थी। वह जलसे और जलूसों में हीरालाल की जै २ कार करते और उनके सम्मान

में उन पर हार फूल बरसाते। इस प्रकार हीरालाल की प्रतिष्ठा और ख्याति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती गई। जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ ही दिनों में हीरालाल अपने क्षेत्र के सबसे बड़े नेता और सरकार के मंत्री बन गये। अब हीरासाल की ख्याति में और भी चार चांद लग गये।

हीरालाल कुछ समय तक तो इस प्रतिष्ठा और सम्मान का श्रेय अपने अनुयायियों को देते रहे, और उनकी आव भगत करते रहे। लेकिन कुछ ही दिनों बाद हीरालाल की मनोवृति इतनी बदल गई कि वह साधारण व्यक्तियों से मिलना जुलना ही ना पसंद करने लगे, उन्होंने अपने चपरासियों को आदेश दे दिया कि कोई भी व्यक्ति चाहे उनका कितना ही घनिष्ठ मित्र अथवा संबंधी हो, उसे बिना उनकी आज्ञा प्राप्त किए मुलाकात करने न भेजा जाय। परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही समय में उनके वे सब अनुयाई और मित्र जो उनकी जै २ कार करते थे उदासीन होकर बैठ गये। अब हीरालाल की घनिष्ठता बड़े २ सरकारी अधिकारियों, मिल-मालिकों और सेठ साहूकारों से बढ़ने लगी। कुछ ही दिनों में श्री हीरालाल की मित्र मंडली में केवल वही लोग रह गये जो बड़े आदमी थे। अब हीरालाल जी के यहां किसी भी साधारण व्यक्ति का पहुँचना आसान नहीं था।

हीरालाल की केवल एक ही लड़की थी मुन्नी और कोई संतान न थी। उन्होंने उसे बड़े लाड़ प्यार से पाला था। जब वह ब्रिटिश साम्राज्य के समय में जेल गये थे, तो वह अपनी लड़की को अपने बड़े भाई के पास छोड़ गये थे। उसके पालन पोषण एवं पढ़ाई लिखाई के लिए काफी रुपया भी दे गये थे। उनके भाई ने लाला जी की लड़की मुन्नी को कालेज होस्टल में प्रवेश कर दिया था। मुन्नी होस्टल में बड़े ऐशो आराम के साथ उस समय तक रहती रही जब तक कि हीरालाल जेल से नहीं छूट गये। जब हीरालाल जेल से छूट कर आये और वह राजनैतिक

सभाओं में भाषण देने जाते, तो मुन्नी भी उनके साथ अवश्य ही जाती थी। हीरालाल जी का अब स्थान २ पर स्वागत होता था, और मुन्नी हीरालाल जी के साथ जहां पर भी जाती वह यही इच्छा रखती थी कि उसका भी इतना ही स्वागत हो, जितना उसके पिता का होता है। वह यह भी चाहती थी कि जो सरकारी अधिकारी हीरालाल के मातहत हैं, वह उसके भी आदेशों का इसी प्रकार पालन करें, जैसे उसके पिता के आदेशों का पालन करते हैं। मुन्नी का स्वभाव बचपन से ही चिड़-चिड़ा था, और हीरालाल के मंत्री हो जाने के पश्चात् सोने पर सुहागा के तुल्य और भी अधिक चिड़चिड़ा हो गया था। वह बात २ पर सरकारी अधिकारियों को डांटती-फटकारती और प्रति दिन के सरकारी कार्यों में दखल देती। हीरालाल उसको लाड़ प्यार की वजह से कुछ भी नहीं कहते थे। इससे मुन्नी का साहस और भी अधिक बढ़ गया था। वेचारे सरकारी अधिकारी दिल ही दिल में घुटते रहते थे। किंतु हीरालाल के डर के कारण अपनी जुबान नहीं खोलते थे। जैसा भी मुन्नी आदेश करती, उसी के अनुसार कार्य करने लग जाते थे। हीरालाल के कुछ साथी और नेता मुन्नी के इस प्रकार के व्यवहार और कार्यों से बहुत अप्रसन्न और खिन्न थे. किंतु कुछ कहते नहीं बन पड़ता था। हीरालाल मुन्नी से स्वयं भी इतने डरते थे कि उनकी क्या मजाल थी जो मुन्नी से आधी बात भी कह सकें। वह तो रात दिन इसी धुन में थे कि उन्हीं के प्रकार मुन्नी भी किसी बड़े पद पर आसीन हो सके और उन्हीं के प्रकार नेतागीरी कर सके।

हीरालाल मुन्नी को आगे बढ़ाने के संबंध में सुबह से शाम तक योजनायें बनाते रहते। इस संबंध में वह प्रायः अपने साथी और खुशामदी लोगों से भी परामर्श करते रहते थे, हीरालाल इसी उधेड़बुन में थे कि बिल्ली के भागों छीका टूटा, और कौंसिल में स्त्री की एक सीट रिक्त हुई।

इस सीट के लिए किसी भी पढ़ी लिखी स्त्री को नामांकित करने का अधिकार गवर्नर महोदय को था। फिर क्या था। हीरालाल और मुन्नी दोनों ने दौड़ भाग करना आरम्भ कर दिया। किंतु उस क्षेत्र के कुछ राजनैतिक और सामाजिक कार्य कर्ताओं ने एक दूसरी स्त्री रजनी के नाम का प्रार्थना पत्र भी इसी सीट के लिए गवर्नर महोदय के पास भेज दिया। रजनी ब्रिटिश शासनकाल में गांधी जी के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के अपराध में कई बार जेल गई थी। रजनी के पति का परिणाम यह हुआ कि जेल की यातनायें सहन करते २ उसकी मृत्यु हो गई। विधवा होने के पश्चात भी रजनी ने हिम्मत नहीं हारी और वह लगातार सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में तन मन धन से लगी रही। इसी लिए उस क्षेत्र की जनता ने एक मत होकर रजनी के नाम का प्रस्ताव गवर्नर महोदय के पास भेजा था। जिस प्रकार मुन्नी के लिए हीरालाल प्रयत्न कर रहे थे, उसी प्रकार रजनी के लिए उस क्षेत्र का एक सामाजिक और राजनैतिक नवयुवक कार्यकर्ता श्याम भी प्रयत्न कर रहा था। श्याम एक गरीब परिवार का नवयुवक था किंतु गांधी जी के असहयोग आंदोलन में कई बार जेल जाने के कारण और जनता की अथक सेवायें करने के कारण, वह अपने क्षेत्र का सर्व प्रिय नेता समझा जाता था। उस क्षेत्र के स्त्री-पुरुष सभी श्याम कीं सेवाओं से प्रभावित थे। अतः श्याम के इस प्रस्ताव का कि रजनी को कौंसिल में भेजा जाय, सारी जनता ने अनुमोदन किया।

उधर मुन्नी के लिए हीरालाल ने दिन और रात दौड़-धूप करके उसे कौंसिल में नाम जद कराने का अथक परिश्रम किया। हीरालाल के खुशामदी लोगों और कुछ बड़े आदमियों ने हीरालाल के स्वर में स्वर मिलाकर मुन्नी को कौंसिल में भेजने के प्रस्ताव का जोरदार शब्दों में समर्थन किया। परिणाम यह हुआ कि मुन्नी को गवर्नर ने कौंसिल का मेम्बर नामजद करने की घोषणा कर दी।

कौंसिल में नामजद होते ही मुन्नी खुशी के मारे फूले नहीं समाती

थी। उसे ऐसा लगा, जैसे कि वह बाप के जीवन में ही अपने बाप की गद्दी की उत्तराधिकारी बन गई हो। अब मुन्नी का दिमाग और भी चिड़चिड़ा हो गया। वह इस प्रकार अपने को घमंड में चूर रखने लगी कि साधारण स्त्री-पुरुषों से तो बात करना भी अपनी मर्यादा के विरुद्ध समझती थी। जरा २ सी बातों पर बड़े २ सरकारी अधिकारियों और समाज सेवकों को डांटती फटकारती रहती। वह अपने को कौंसिल के मेम्बर होते ही बहुत बड़ा नेता समझने लगी। लोग उसके मुँह पर तो कुछ नहीं कहते थे किंतु उसके पीछे उसकी बुराई करते थे, और साथ ही हीरालाल की कुनबापरस्ती को भी बुरी निगाह से देखते थे। मुन्नी की नामजदगी और रजनी की अवहेलना यह दोनों ऐसी बातें थीं कि जिसके कारण उस क्षेत्र की जनता में हीरालाल के विरुद्ध असंतोष और घृणा की लहर दौड़ गई। उन्हें बड़ी निराशा हुई कि रजनी जैसी योग्य और देश भक्त स्त्री को मुन्नी के मुकाबले में स्थान न मिल सका।

मुन्नी को अभी मेम्बर हुये कुछ अधिक समय नहीं बीता था कि मुन्नी ने अपने ठाट-बाट और बनावट के द्वारा यह सिद्ध करने की कोशिश की कि क्षेत्र में उसके मुकाबले की कोई अन्य स्त्री नहीं है। अब हीरालाल और मुन्नी दानों का साधारण जनता और साधारण साथियों से संबन्ध विच्छेद हो गया। किंतु मुन्नी और हीरालाल दोनों के पास प्रातःकाल से सायंकाल तक बड़े सेठ साहूकार और मिल मालिकों की भीड़ रहती थी। यह लोग मुन्नी और हीरालाल की अनुचित खुशामद करके अपना उल्लू सीधा करते रहते थे। और जो भी चाहते उनसे करा लेते थे। इसके विपरीत न जाने कितने बेचारे साधारण व्यक्ति मुसीबत के मारे हुये धक्के खा २ कर हीरालाल के दरवाजे से निराश लौट जाते थे।

हीरालाल प्रत्येक वर्ष मुन्नी की साल ग्रह बड़ी धूम धाम से मनाते थे, जब से वह मंत्री हुये थे तब से तो और भी अधिक धूम धाम से मुन्नी की साल ग्रह मनाई जाती थी। हजारों प्रतिष्ठित और बड़े

आदमी तथा सरकारी अधिकारी मुन्नी को अच्छी से अच्छी वस्तुओं की भेंट साल ग्रह के अवसर पर करते थे। इस वर्ष मुन्नी की साल ग्रह विशेष तौर से धूम-धाम के साथ मनाने का प्रबन्ध हुआ था, इस लिए कि मुन्नी इसी वर्ष कौंसिल की सदस्य नामजद हुई थी। महीनों पहिले से मुन्नी की साल ग्रह का प्रबंध हो रहा था। जब साल ग्रह का दिन आया उस दिन हीरालाल का बगला दुल्हन की तरह सजाया गया था। हजारों प्रकार के रंगीन बिजली के बल्ब लगाये गये। झंडियों और बंदनबारी से तमाम बंगला सजा हुआ था। दरवाजे पर नौबत बज रही थी। ४ बजे ठीक साल ग्रह का उत्सव था। अत: हजारों की संख्या में सेठ साहूकार, बड़े अधिकारी तथा मिल-मालिक मुन्नी के लिए बड़े २ बहुमूल्य तोहफे लेकर आये। रजनी भी इस साल-ग्रह के अवसर पर मुन्नी को बधाई देना चाहती थी। वह समझती थी कि सदस्य हो जाने से सारी स्त्री जाति का मान बढ़ा है। दूसरे वह यह भी विचार करती थी कि कहीं मुन्नी यह न समझ बैठे कि वह मुन्नी के मुकाबले में उम्मीदवार थी, अतः उसने मुन्नी के प्रति उचित उदारता नहीं दिखाई। उसके हृदय में इस बात का तनिक भी गम नहीं था कि उसके मुकाबले में मुन्नी सदस्य होगई। वह तो इसको बहुत बड़ी बात समझती थी कि कौंसिल में स्त्री जाति का प्रतिनिधित्व हुआ। अतः इन्हीं विचारों के अनुसार वह बिना बुलाये ही मुन्नी को मुबारिकबाद देने हीरालाल के घर पहुँच गई। जब वह मुन्नी के घर पहुँची तो देखा कि नगर के बड़े २ लोग और सरकारी अधिकारी मुन्नी को बहुमूल्य वस्तुयें भेंट कर रहे हैं, और मुन्नी का घर इस प्रकार की भेंटों से भरा हुआ है। रजनी के पास तो भेंट देने को कुछ नहीं था। वह तो केवल इस अवसर पर मुन्नी को बधाई देने आई थी, किन्तु उसने यह सोचा कि इस अवसर पर जबकि सभी लोग मुन्नी को भेंट दे रहे हैं, उसका खाली बधाई देना ही उचित न होगा। कुछ सोचने के पश्चात उसे याद आया कि वह अपनी उंगली में एक चाँदी की अगूठी पहने हुये है। अतः उसने अपनी अंगूठी

मुन्नी को भेंट करने का निश्चय किया। वह मुन्नी के पास पहुँचने को आगे बढ़ी। रजनी साधारण खद्दर के कपड़े पहने हुये थी। इसलिये कुछ व्यक्ति तो यह समझे कि शायद यह हीरालाल के घर की कोई नौकरानी है। रजनी ने मुन्नी के पास पहुँचते ही मुन्नी को बधाई दी और अपनी उंगली से चाँदी की अंगूठी निकाल कह मुन्नी को भेंट के रूप में देने लगी। मुन्नी रजनी से पहिले से ही बहुत अप्रसन्न थी। उसे यह बात बहुत अखरी कि रजनी जैसी साधारण स्त्री उसके मुकाबले में कौंसिल की उम्मीदवार हुई। वह रजनी को अपने सामने देखते ही आग बबूला हो उठी और उसने गुस्से में आँखें लाल करते हुये रजनी की ओर देखकर कहा।

"रजनी ! तुम्हें इतनी भी तमीज नहीं है कि यह समझ सको कि सालग्रह में किसी को पहनी हुई वस्तु नहीं दी जाती है।"

रजनी एक बहुत नेक किन्तु बहुत बहादुर स्त्री थी। वह कभी अंग्रेजी शासन से नहीं डरी तो भला मुन्नी के रोब में आने वाली कहाँ थी। उसने तुरन्त ही मुन्नी को मुंह तोड़ उत्तर देते हुये कहा।

"मुन्नी ! मैं तो समझती थी कि कौंसिल की मेम्बरी से तुम्हें अक्ल आगई होगी किंतु तुम्हें तो बात करने की तमीज भी नहीं है।

"रजनी ! अपनी औकात से बात करो। जानती हो तुम किससे बात कर रही हो।" मुन्नी ने तेवर चढ़ाकर कहा।

"हां जानती हूँ। एक ऐसी स्त्री से, जो यह भी नहीं जानती कि मनुष्यों से किस प्रकार बात की जाती है।"

रजनी ने भी क्रोध में आकर जवाब दिया।

"अच्छा तो आप यहां मेरे मेहमानो के सामने मेरी बेइज्जती करने आई हो।"

"मुन्नी ! मैं तुम्हें आगाह करती हूँ कि यह झूठी शान किसी दिन तुम्हें और तुम्हारे बाप को ले डूबेगी।"

"रजनी ! मुंह सँभालकर बात करो। अगर आगे कुछ कहा तो धक्के दिलवा कर घर से निकाल दूँगी।"

"मुन्नी ! तेरी क्या मजाल जो मुझसे आँख भी मिला सके। मैं तो जाती हूँ, लेकिन इतना बताये जाती हूँ कि तुम झूठी शान के अंगारों पर खड़ी हो, और यह अंगारे तुम्हें बहुत जल्दी भस्म कर देंगे।"

यह कहकर रजनी वहाँ से चली गई। किंतु मुन्नी का तमाम शरीर क्रोध की आग में जल रहा था। उसे सबसे बड़ा दुःख यह था कि रजनी ने उसकी सहेलियों और अतिथियों के समक्ष उसकी बेइज्जती की। वह क्रोध से काँपने लगी। उसकी सालग्रह की खुशी उसकी मानसिक वेदना में बदल गई। उसकी आँखों से आंसू बह निकले। जब हीरालाल को यह सब कुछ मालूम हुआ तो उन्हें भी रजनी पर बड़ा क्रोध आया। मगर अब रजनी अपने घर जा चुकी थी।

उधर रजनी ने श्याम और श्याम के अन्य साथियों को एकत्रित करके मुन्नी द्वारा किये गये अपमानों का समाचार सुनाया। श्याम और श्याम के साथी रजनी को एक देवी समझते थे। उसकी नेकी और उसकी शराफत से प्रभावित थे। उन्होंने मुन्नी के इस अशोभनीय व्यवहार की चर्चा नगर और नगर के आस-पास के क्षेत्रों में की, जिसका परिणाम यह हुआ कि उस क्षेत्र की जनता में हीरालाल और मुन्नी के प्रति क्रोध और विरोध की लहर दौड़ गई। उन्होने मिलकर दृढ़ निश्चय किया कि कि अगले चुनाव में वह हीरालाल के विरोध में कोई कसर उठा नहीं रक्खेंगे।

कुछ ही वर्ष बाद हीरालाल का दूसरा चुनाव हुआ। हीरालाल के विरुद्ध जनता में पहिले से ही विरोध की लहर दौड़ रही थी। चुनाव से कुछ

दिन पहले हीरालाल ने अपने उन पुराने साथियों और अनुगाइयों को बुलाने का संदेश भेजा जो किसी समय हीरालाल के नेतृत्व का झंडा उठाये हूये थे। किन्तु उनमें से हर एक ने हीरालाल के संदेश को ठुकरा दिया। इसके विपरीत उन्होने अपने क्षेत्र से हीरालाल के मुकाबले में रजनी को खड़ा किया। हीरालाल और मुन्नी ने अपने को विजयी बनाने के लिये रुपयों की थैली खोल दी। लोगों को तरह २ के प्रलोभन दिये किंतु सब व्यर्थ सिद्ध हुये। हीरालाल को चुनाव में इतनी करारी हार हुई कि उनकी जमानत भी जब्त होगई। मुन्नी की सदस्यता का समय भी समाप्त हो चुका था। अतः दोनों आसमान से जमीन पर आगये, किंतु अब उन्हें कोई नगर में घास भी नहीं डालता था। हीरालाल के मन्त्री पद के समय में जो भी बड़े बड़े सेठ साहूकार और सरकारी अधिकारी उनके मित्र थे वह यदि कभी अकस्मात रास्ते या बाजार में हीरालाल को मिल भी जाते तो मुँह फेरकर निकल जाते। हीरालाल का पेशा लीडरी के अतिरिक्त कुछ न था। लीडरी के समाप्त होते ही हीरालाल का सितारा गर्दिश में आ गया और अब उनकी दशा देखकर लोगों को दया आती है। लोगों को कहना है कि मुन्नी स्वयं तो डूबी ही किंतु हीरालाल को भी ले डूबी।

जनाज़ा

वशीर अपने मालिक लालमुहम्मद का बड़ा ही बफादार नौकर था। लाला मुहम्मद नगर के प्रसिद्ध व्यापारी थे। नगर में उनकी आढ़त की दूकान सबसे बड़ी और प्रसिद्ध थी। वशीर जब दूकान का कार्य समाप्त करके सायंकाल को दूकान से छुट्टी पाता तो सीधे अपने मालिक के घर जाता, और लगभग रात्रि के ९–१० बजे तक लाल मुहम्मद की सेवा सुश्रुषा में ही लगा रहता। न केवल लाल मुहम्मद बल्कि उसके बीबी बच्चों की सेवा करना, उसने अपनी दिनचर्या बना रक्खी थी। अक्सर वह रात्रि को अपने मालिक लाल मुहम्मद के पैर दबाता रहता। जब लाल मुहम्मद सो जाते थे तो वह अपने घर जाता। अक्सर वशीर की बूढ़ी स्त्री खाना बनाये हुये रात तक उसकी प्रतीक्षा में बैठी रहती थी। जब वशीर घर पहुँचकर खाना खा लेता तो उसके बाद ही वह बेचारी खाना खाती। वशीर और उसकी स्त्री दोनों ही रात्रि को बहुत देर से सोते थे। सुबह को भी वशीर प्रातः काल ही उठ बैठता और शीघ्र से शीघ्र अपने मालिक के घर पहुँचता। फिर वहां से दूकान की चाबियां लेकर दूकान खोलता। वशीर की बूढ़ी स्त्री के अतिरिक्त एक उसकी छोटी बच्ची थी, जिसका नाम जोहरा था। जोहरा दोपहर को अपने पिता वशीर के लिये दूकान पर ही खाना ले जाती थी। वशीर और उसकी स्त्री दोनों ही का जोहरा बुढ़ापे का सहारा थी। जोहरा बहुत ही समझदार और होशियार लड़की थी। वशीर बेचारा बहुत ही गरीब, किन्तु सज्जन व्यक्ति था। उसे लाल मुहम्मद की दुकान से केवल ५०) मासिक वेतन मिलता था, और वह इन्हीं ५०) में अपना, अपनी स्त्री एवं अपनी लड़की की गुजर-बसर करता था। उस बेचारे के पास जोहरा को स्कूल भेजने के लिये भी

साधन नही थे और न रुपया, किन्तु फिर भी जोहरा को पढ़ने लिखने का इतना शौक था कि वह सुबह से सायंकाल तक जब भी घर के काम काज से अवकाश पाती, लिखने पढ़ने में व्यस्त हो जाती। इस प्रकार उसने अपने घर पर ही लिखना पढना सीख लिया था। जोहरा के पड़ोस में एक वकील साहब का मकान था। उनका लड़का शमीम कालेज का एक छात्र था। शमीम बड़ा ही नेक और शरीफ लड़का था। अक्सर जब भी वह जोहरा के घर जाता, जोहरा को लिखने पढ़ने की सामग्री किताबें, आदि दे आता। अक्सर जोहरा भी लिखने पढ़ने को शमीम के घर चली जाती। शमीम जोहरा की नेकी और शराफत से बहुत प्रभावित था। वह अक्सर दिल ही दिल में सोचता था कि यदि जोहरा कहीं किसी बड़े आदमी की लड़की होती तो न जाने उसकी कितनी मान्यता होती।

वशीर का मालिक लाल मुहम्मद जितना ही धनी और बड़ा आदमी था उतना ही कंजूस और चिड़चिड़े दिमाग का था। वशीर सुबह से शाम तक लाल मुहम्मद की सेवा में लगा ही रहता।' किन्तु फिर भी यदि कभी वशीर को दूकान पर पहुँचने में आधा घन्टे की भी देर होजाती तो वह बुरी तरह उसे डांटता-फटकारता था। वशीर बेचारा नीचे को गर्दन दबाये खामोशी से अपने मालिक की डांट-फटकार सहन करता रहता था। जोहरा जोकि प्रतिदिन दोपहर को वशीर को खाना पहुँचाने दूकान पर आती। उसे कभी लाल मुहम्मद दो नये पैसे भी देदें उसमें भला इतनी उदारता कहां। यदि किसी कारण वश वशीर के यहाँ किसी दिन खाना न बनता या जोहरा को खाना पहुँचाने में देर हो जाती, तो लाल मुहम्मद कभी खाना खाते समय वशीर से यह न पूँछता कि वह उसके खाने में से ले ले। कभी २ वशीर बेचारा दिन भर भूखा प्यासा कार्य में लगा रहता किन्तु लाल मुहम्मद कभी उसे खाना खाने या दो चार आने पैसे देकर नाश्ता करने को

नहीं पूछता। ईद, शब्बरात और न जाने कितने ऐसे त्यौहार होते कि वशीर को इनाम इकराम देना तो अलग रहा, कभी खाने तक को नहीं पूछता। ईद के दिन लाल मुहम्मद नगर के बड़े २ अधिकारियों और अपने इष्ट मित्रों की दावत करता। उस दिन वशीर सुबह से शाम तक लाल मुहम्मद के मेहमानों को खिलाने पिलाने में ही लगा रहता था, किन्तु सायंकाल को बेचारा खाली पेट ही अपने घर चला जाता। कभी २ जोहरा भी वशीर के साथ लालमुहम्मद के घर आती और लाल मुहम्मद के बीबी बच्चे खाना खाते रहते किंतु कभी जोहरा से खाने की बात नहीं पूछते थे। जोहरा लालमुहम्मद के स्वभाव को अच्छी प्रकार जान गई थी। वह कभी २ अपने पिता से लालमुहम्मद की कंजूसी की शिकायत भी करती रहती थी, किन्तु वशीर सदेव जोहरा को यह कहकर खामोश कर देता था "बेटी अपने मालिक को जिसका हम नमक खाते हैं कभी बुरा नहीं कहना चाहिये" जोहरा अपने पिता को इन शब्दों को सुनकर चुप हो जाती।

वशीर की आयु लगभग ६४–६५ वर्ष की हो चुकी थी। वशीर की स्त्री की आयु भी ६० वर्ष से कम न थी। दोनों को बुढ़ापे में यह चिंता थी कि किसी प्रकार उनके जीवन में जोहरा का विवाह हो जाय किंतु गरीबी और लाचारी की यह दशा थी कि बेचारे वशीर के पास १००–५० रुपये भी नहीं थे, जिनसे जोहरा का विवाह कर दे। बहुधा वशीर की स्त्री ने वशीर को यह परामर्श दिया कि वह अपने मालिक लाल मुहम्मद से १००–२०० रुपये उधार लेकर जोहरा का विवाह कर दे किंतु वशीर में इतना साहस कहाँ था कि जोहरा के विवाह के लिये अपने मालिक से रुपया उधर मांग सके। गरीबी और लाचारी ने वशीर अहमद और उसकी स्त्री को और भी अधिक बुड्ढा एवं कमजोर बना दिया था। अब जोहरा जवान होचुकी थी। इसलिये जोहरा के मां-बाप को दिन प्रतिदिन जोहरा के विवाह की चिंता रहने लगी। जोहरा की

माँ तो इस चिंता में कभी २ रात भर इधर से उधर करवटें ही बदलती रहती। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर जोहरा के विवाह के लिये कहां से रुपया लाया जाये।। उधर वशीर का यह हाल था कि उसे जो ५०) प्रतिमास वेतन के मिलते उनसे दूसरा महीना लेना ही कठिन पड़ जाता था। अक्सर दूसरे महीने का वेतन मिलते समय तक १०)–२०) रुपया आटे दाल वाले दूकानदार का उधार हो जाता था। वशीर वेतन मिलते ही इस उधार को चुकाता। इससे उसकी साख दूकानदार पर होगई थी, और इसलिये दूकानदार १०–२० रुपये के सामान को उधार देने में कभी हिचकिचाता नहीं था। जोहरा की माँ जोहरा के विवाह की चिंता में घुल-घुलकर वीमार रहने लगी। नगर में एक गरीबों का अस्पताल था जहाँ गरीबों को मुफ्त दवा मिलती थी। जोहरा अक्सर इसी अस्पताल से अपनी माँ को दवा लाकर देती थी। किंतु जोहरा की माँ की बीमारी घटने की बजाय बढ़ती ही गई। अब उसे नया रोग दिल की धड़कन का पैदा होगया। जोहरा बेचारी सुबह से शाल तक माँ की सेवा सुश्रुषा में ही लगी रहती और न जाने दिन भर में कितनें चक्कर अस्पताल के लगाती। वह खुशामद करके डाक्टर को भी कभी २ अपने घर ले जाकर अपनी माँ को दिखाती। अब घर का सारा कार्य जोहरा के सर पर ही आ पड़ा। वही खाना पकाती, फिर बशीर को खाना देने दूकान पर जाती और उसके साथ २ सुबह से शाम तक न जाने कितनी बार अस्पताल में जाकर डाक्टर को अपनी मां का हाल बताती और दवा लाती। दिन रात वह खुदा ने यही दुआ मांगती रहती कि किसी प्रकार उसकी मां की बीमारी समाप्त हो। किंतु मर्ज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की।

एक दिन जबकि वशीर दूकान पर चला गया था। केवल जोहरा ही घर पर अकेली मां की की चारपाई पर बैठी हुई उसका पंखा डुला

रही थी कि अकस्मात उसकी मां को दिल की धड़कन का इतना बड़ा दौरा पड़ा कि उसके लेने के देने पड़ गये। जोहरा ने अस्पताल जाकर डाक्टर को बुलाया और बहुत कुछ दौड़ भाग की, किन्तु दवा ने कुछ असर न किया और एक घन्टे के अन्दर ही जोहरा की मां संसार को छोड़ कर चली गई। जोहरा घर में अकेली थी। वह मां की मृत्यु पर धाड़े मार २ कर रोने लगी। उसके रोने चिल्लाने की आवाज से मुहल्ले के एक दो लोग आ गये। जोहरा ने उनसे अपने बाप बशीर को दुकान से बुला लाने की प्रार्थना की। उनमें से एक दो भागे हुए लाल मुहम्मद की दुकान पर गये और बशीर को बुलाकर घर ले आये। जोहरा का पिता वशीर भी अपनी स्त्री की मृत्यु के दुख में सिसक २ कर रोने लगा। मुहल्ले के कुछ स्त्री पुरुषों ने जोहरा और वशीर को ढाढ़स बंधाया। वशीर ने जोहरा को समझाने बुझाने और उसे सांत्वना देने की बहुत कोशिश की किन्तु जोहरा की हिचकी बंधी हुई थी। उसे ऐसा लग रहा था कि जैसे कि उसक दुनिया ही उजड़ गई हो। उसके सर पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा उसकी आंखों तले अंधेरा सा छा रहा था। वशीर ने बहुत कुछ प्रयत्न करके जोहरा को उसकी मां की चारपाई से अलग हटाया।

अब वशीर के सामने अपनी स्त्री के अंतिम संस्कार करने और दफन करने का प्रश्न था। उसे वेतन मिले हुये २० दिन के लगभग व्यतीत हो चुके थे। उसके पास पाँच रुपये भी न थे जिनसे वह अपनी स्त्री का कफ़न लाता, बल्कि इस महीने में जोहरा की मां की बीमारी के कारण उस पर १०-१५ रुपये मुहल्ले वालों के उधार हो गये थे। एक सप्ताह से वशीर के घर केवल एक ही समय चूल्हा जलता था। दुकानदार के भी १०-१५ रुपये उधार हो चुके थे। अतः अब वशीर के सामने यह समस्या थी कि वह अपनी स्त्री के दफन करने और कफन आदि लाने के लिए कहाँ से रुपया लाये। इन सब कार्यों के लिए ५० रुपये से कम की आवश्यकता न थी। वह ५०) कहाँ से लाये यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। जोहरा स्वयं जानती थी कि उसके पिता के पास उसकी मां के दफनाने

के लिए पैसा नहीं है। अतः उसने बड़ी बेचैनी के साथ अपने अंचल से आंसुओं को पोछते हुए अपने पिता से कहा,

"अब्बाजान ! अम्मां के दफन करने का क्या इन्तजाम होगा।"

"बेटी ! मैं भी यही सोच रहा था क्या करूँ, मेरे पास तो ५) भी नहीं" वशीर ने अपना माथा ठोकते हुये कहा।

"अब्बा जान। मां के दफन करने में कितना रुपया खर्च होगा।" जोहरा ने सिसकते हुए पूछा।

बेटी ! कम से कम ५० रुपया !"

"अब्बा जान ! ५०) कहाँ से आयेंगे ?"

जोहरा ने रोते हुए कहा।

"बेटी ! क्या बताऊँ" !

"अब्बाजान ! क्या हमारे मालिक अम्मी जान के कफ़न के लिए हमें ५०) भी उधार न दे सकेंगे !"

"हां बेटी ! मेरी समझ में भीयही आ रहा है। तुम यहां बैठो, मैं मालिक के पास रुपये उधार लेने जाता हूँ।"

वशीर यह कहकर अपने मालिक के घर की ओर चल दिया। इस समय शाम हो चुकी थी। इसलिए दुकान बन्द हो गई थी। उधर जोहरा के मुहल्ले के स्त्री पुरुष जोहरा के घर आकर जोहरा को ढाढ़स बंधा रहे थे। मुहल्ले में केवल वकील साहब को छोड़ कर शेष सब गरीब और मजदूर लोगों के ही झोपड़े थे, इसलिए इन वेचारों के पास केवल जवानी हमदर्दी को छोड़कर और जोहरा की सहायता के लिये कुछ न था। वसीर जब लाल मुहम्मद के घर पहुँचा तो लाल मुहम्मद अपने कमरे में सोने के लिए जा चुका था। वशीर ने लाल मुहम्मद के नौकर की बहुत कुछ खुशामद की कि वह मालिक को उसके आने की सूचना दे दे ताकि वह ५०) उधार लेकर अपनी स्त्री को दफन कर सके। नौकर को वशीर की दशा पर रहम आ गया और वह डरते २ छत पर गया जहाँ लाल

मुहम्मद सो रहे थे, नौकर कमरे की कुन्डी खटखटाने लगा। लाल मुहम्मद कुन्डी के खटखटाने की आवाज से जाग उठा और उसने भीतर से ही आवाज देकर पूछा —

"कौन है।"

"हजूर ! में हूँ आपका नौकर।"

"क्या बात है।"

"हजूर ! वशीर की बीबी का अन्तकाल हो गया है। वह उसे दफन करने के लिए कुछ रुपया उधार लेने आया है।"

" कह दो कि हम नौकरों की बीबी बच्चों के मरने के लिए कर्ज नहीं देते हैं। हम उनकी तनख्वाह देने के ही जिम्मेदार हैं। कर्ज के लिए शहर में सैकड़ों आदमी पड़े है। "

नौकर बेचारा उलटे पांव छत्त से उतर कर नीचे आ गया। उसने वशीर को अपने और लाल मुहम्मद के बीच हुई सारी बातों को कह सुनाया। वशीर को लाल मुहम्मद की बात सुनकर ऐसा लगा, जैसे कोई जले पर नमक छिड़क दे। वह बेचारा निराशा के समुद्र में डूब गया। उसे यह समझ में नहीं आ रहा था कि वह घर जाकर जोहरा को क्या बताये। उसके पैर आगे को नहीं बढ़ रहे थे, किन्तु फिर भी वह दिल पर पत्थर रखे हुए घर की तरफ लौटा। घर पहुँचते ही जोहरा ने उससे पूछा।

"अब्बाजान ! क्या रुपये मिल गये।"

"नही बेटी, '

वशीर ने भरी आवाज से कहा।

"तो क्या मालिक ने साफ इनकार कर दिया है।"

"साफ इन्कार ही नही वल्कि कुछ खरी खोटी भी सुनाई।"

"अब्बाजान ! क्या उसे हमारी हालत पर रहम नही आया '

"बेटी ! दौलत मंदों के दिल में रहम कहाँ। '

"अब्बाजान ! अब क्या होगा"

"बेटी ! मेरी समझ में खुद कुछ नही आ रहा है ।"

"अब्बाजान ! आप फिक्र न करें मैं अपनी ओढ़नी का कफन अम्मी जान पर डालती हूँ । आप जनाजें की तैयारी कीजिए ।

"बेटी ! खुदा की यही मर्जी है ।"

जोहरा ने अपनी ओढ़नी मां के ऊपर डाल दी । बशीर ने अपने पड़ोसी मजदूरों की सहायता से अपनी स्त्री का जनाजा उठाया । जिस समय जोहरा की मां का जनाजा उठा, जोहरा चीख २ कर रोने लगी । वह रोती पीटती जनाजे के साथ कब्रिस्थान की ओर चली । मुहल्ले के जितने भी स्त्री और पुरुष वहाँ एकत्रित थे, सब जोहरा और बशीर की दयनीय दशा पर आंसू बहा रहे थे । ज्यों ही जनाजा कुछ दूर आगे बढ़ा, और वकील साहब के दरबाजे पर पहुँचा । रोने पीटने की आवाज सुनकर शमीम एक दम घर से बाहर निकल आया । उसने जनाजे के साथ जोहरा और बशीर को देखा तो उसे बड़ा दुख हुआ, किन्तु उसे यह मालुम नही था कि यह जनाजा किसका है । अतः उसने जोहरा से पूछा कि यह जनाजा किसका है ।

"मेंरी मां का"

जोहरा ने रोते हुए उत्तर दिया ।

"लेकिन जनाजे पर कफन भी नहीं पड़ा है।"

"इसलिए कि मेरे बाप के पास कफन खरीदने को पैसे नहीं थे ।"

"जोहरा । लेकिन तुमने मुझे क्यों नहीं बताया !"

"मैं आप को क्या बताती' जब अब्बाजान के मालिक ने ही ५०) उधार देने से इन्कार कर दिया ।"

"जोहरा मैं गैर नही हूँ । जनाजा रोक दो । पहिले कफ़न आ जाने दो फिर जनाजा उठेगा ।"

यह कहते हुए शमीम ने जनाजे को रोक दिया ।

"नही शमीम ! अब जनाजा उठ चुका है। इसे मत रोको।"

"नही जोहरा ! मेरे होते हुए तुम्हारी मां वे कफन नही दफनाई जा सकती।"

यह कहकर शमीम ने वशीर से प्रार्थना की कि वह जनाजा रोक दे।

बशीर ने शमीम को समझाने की कोशिश की कि अब जनाजा उठ चुका है। इसलिए उसे रोकना उचित न होगा। किन्तु शमीम ने वशीर से जनाजा रोकने का आग्रह करते हुये कहा,

"अब्बाजान ! आप नहीं जानते कि एक पड़ोसी का रिश्ता सौ रिश्तेदारों के बराबर होता है।"

"बेटा ! तुमने यह कहकर मेरे टूटे हुये दिल को जोड़ दिया, लेकिन रात बहुत हो चुकी है। इसलिए इस गरीब की बीबी को वे कफन ही दफन हो जाने दो।"

"नहीं ! मेरे होते हुए यह नही हो सकता है।"

"बेटा शमीम ! जो तुम्हारी मर्जी हो, वैसा करो। मुझे तुम्हारी हमदर्दी ने वैसे ही हमेशा के लिए खरीद लिया है।"

"जोहरा के अब्बा ! ऐसा कहकर मुझे शर्मिन्दा न कीजिए।"

शमीम ने यह कहकर जनाजा रोक लिया और कुछ ही देर में उसने अपने नौकर को भेजकर जोहरा की माँ के लिए कफन, काफूर और दफन करने की अन्य वस्तुओं को मंगवा लिया। जोहरा की मां के जनाजे पर बहुत शानदार कफन डाला गया। उस पर काफूर छिड़का गया और फूलों से जनाजे को भर दिया गया। शमीम के पड़ोस के १०-२० और भी शमीम के नौजवान साथी जनाजा उठाने केलिए इकट्ठे हो गये। जोहरा की माँ का जनाजा उठा। वशीर और जोहरा दिल ही दिल में शमीम के ऐहसानों से दबे जा रहे थे। कब्रिस्तान में ले जाकर जोहरा की मां को शमीम और उसके साथियों ने दफन किया, और उसकी पक्की कब्र

वनबाई । जोहरा की मां को दफन करने के पश्चात वशीर, जोहरा और शमीम तथा उसके साथी मातम पुरसी के लिए जोहरा के घर तक आये। जोहरा की आखों से अब भी आँसू बन्द नहीं हो रहे थे। वशीर और शमीम दोनों ने जोहरा को सांत्वना देने की बहुत कोशिश की। कुछ देर तक शमीम वशीर से एकान्त में बातचीत करता रहा। जब वह चलने लगा, तो उसने सौ रु० का नोट वशीर के हाथ पर रखते हुए कहा।

"जोहरा के अब्बाजान ! आप इन रुपयों को कबूल करके। मुझ पर ऐहसान कीजिए।"

"शमीम ! तुम्हारे ऐहसानों से तो मैं वैसे ही दब चुका हूँ। अब तुम इतना बड़ा एहसान करके मुझे अपने ऐहसानों के बोझे से और मत दबाओ।"

"जोहरा के अब्बा, एक दूसरे की मदद करना हर इन्सान का फर्ज है। यह एहसान नहीं बल्कि फर्ज की अदायगी है। काश यह फर्ज मैं जोहरा की मां का जनाजा उठने से पहिले अदा करता"

शमीम ने १००) का नोट जबरदस्ती वशीर की जेब में डाल दिया।" और शमीम वशीर के घर से जोहरा और वशीर से विदा लेकर चल पड़ा। जोहरा और वशीर दोनों ही शमीम को दरवाजे तक पहुँचाने आये। दरवाजे पर पहुँचते ही शमीम ने वशीर और जोहरा को सर झुका कर आदाब-अर्ज किया, और शमीम अपने घर की ओर चल दिया। वशीर दिल ही दिल में शमीम की शराफत नेकी और सहानुभूति की तारीफ कर रहा था। वशीर के लिए १००) एक बहुत बड़ी रकम थी। उसने अपने हृदय में यह इरादा किया कि वह इन रुपयों से ही जोहरा का निकाह किसी योग्य लड़के को ढूँढ कर पढ़वा देगा। अतः उसने जोहरा के लिए पति ढूँढने का इरादा भी दिल में कर लिया। बहुत देर तक वशीर और जोहरा शमीम की उदारता और सहानुभूति की तारीफ एक दूसरे से करते रहे। बहुत रात गये दोनों अपनी २ चारपाई पर जा पड़े। वशीर अहमद और जोहरा दोनों में से कोई भी रात को सोया नहीं। दोनों की आखों

में आँसू डबडबाते रहे। वशीर रात भर जोहरा के लिये कोई अच्छा लड़का ढूँढने का स्वप्न ही देखता रहा वह यह सोचकर और भी अधिक गमगीन ही उठता था कि जोहरा जैसी योग्य, सुन्दर एवं सुशील लड़की के लिये वह अपनी गरीबी की दशा में कैसे कोई अच्छा लड़का पा सकता है। रात भर जोहरा और वशीर अपनी अपनी चारपाइयों पर इधर से उधर करवटें ही बदलते रहे। दूसरे दिन मुहल्ले में जिन लोगों को भी जोहरा की माँ की मृत्यु का समाचार मिलता गया, वह शोक मनाने के लिये वशीर के घर आते रहे। वशीर के मुहल्ले वालों के आने जाने का दूसरे दिन सुबह से शाम तक, तांता ही लगा रहा। शमीम भी दूसरे दिन जोहरा और वशीर के घर उससे सहानुभूति प्रकट करने गया। वशीर और जोहरा ने शमीम की बड़ी आवभगत की और उसके प्रति आभार प्रकट किया। अब वशीर को यह विश्वास होगया कि शमीम जोहरा के लिये कोई अच्छा पति ढूँढने की अवश्य ही कोशिश करेगा। अतः अवसर पाकर वशीर ने शमीम की ओर देखकर कहा।

''बेटा शमीम! तुम्हारे एहसानों को मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकता, लेकिन अभी तुम्हें मेरे ऊपर एक और एहसान करना है।

"जोहरा के अब्बा! मुझे अपना ही समझकर हुक्म दीजिये।"

बेटा! तुम जानते हो कि जोहरा अब शादी के काबिल हो गई है। तुम उसके लिये शौहर ढूँढने में मेरी मदद करो ताकि तुमने जो १००) मुझे इनायत किये हैं। उनसे मैं जोहरा की शादी करदूँ।"

"लेकिन जोहरा के अब्बा! यह रुपये तो मैंने जोहरा की माँ की मौत के रसूमात को अदा करने के लिये दिये थे न कि जोहरा की शादी को।"

"बेटा ! मैं गरीब आदमी हूँ। मौत के रसूमात तो १०–२० रुपये में ही अदा हो जायेंगे। मैं सोचता हूँ कि लगे हाथ इन रुपयों से जोहरा की शादी कर दूं।"

"जोहरा के अब्बा ! शादी कहीं १००) में होती है।"

"गरीब आदमी और कहाँ से लेकर शादी में खर्च करे। तुम जानते हो कि मुझे केवल ५०) मासिक वेतन मिलता है। उसी में गुजर-बसर करता हूँ।" "लेकिन अगर जोहरा की शादी बिना कुछ खर्च किये होगई तो ?"

"ऐसा लड़का कहाँ मिलेगा।"

"मिलेगा। वह जो जोहरा की नेकी और शराफत से वाकिफ होगा।"

"बेटा ! समाज में हर चीज दौलत से तोली जाती है। नेकी और शराफत से नहीं।"

"लेकिन इन्सान की असली दौलत तो उनकी नेकी और शराफत है।"

"ऐसा समझने वाले बेटा ! समाज में कितने लोग हैं।"

"हैं, अभी कुछ हैं।"

"अगर बेटा तुम्हारी निगाह में ऐसा कोई लड़का है तो जरूर बताओ।"

"जोहरा के अब्बा ! क्या मैं अपने को जोहरा के लिये पेश कर सकता हूँ।"

शमीम ने शरमाई हुई निगाहों से कहा।

"बेटा ! यह तुम क्या कह रहे हो। तुम एक बड़े आदमी के लड़के हो और जोहरा एक गरीब मजदूर की लड़की।"

"नहीं, जोहरा की नेकी और शराफत उसकी सबसे बड़ी दौलत है।"

"लेकिन बेटा ! तुम्हारे वालिद वकील साहिब क्या यह शादी पसन्द करेंगे।"

"जरूर पसंद करेंगे ! उनका दिल लालमुहम्मद की तरह पत्थर का नहीं।"

"बेटा ! क्या जोहरा इतनी खुदकिस्मत हो सकती है।"

"होसकती नहीं बल्कि है।"

"अगर ऐसा ही है तो बेटा ! मैं तुम्हारी मर्जी को अपने सर आंखों पर तसलीम करता हूँ।"

"लेकिन आपको मेरी एक शर्त मानना पड़ेगी।"

"एक नहीं, हजार।"

"तो सुनिये ! आपको आज से लालमुहम्मद की नौकरी से स्तीफा देना पड़ेगा।"

"लेकिन बेटा ! गुजर-बसर का जरिया फिर क्या होगा ?"

"मैं कमाऊँगा और आप खायेंगे। इसलिये कि आज से आप मेरे भी अब्बा जान हैं।"

"बेटा ! इतने ऐहसान मुझपर न लादो कि मैं उनका बोझा न उठा सकूं।"

"अब्बा जान। यह कहकर आप मुझे गैर समझ रहे हैं।"

"नहीं शमीम ! तुम मेरी आँखों की रोशनी हो।"

"तो फिर आप मेरी बात मानिये।"

"शमीम जो तुम्हारी मर्जी हो। मुझे इन्कार नहीं है।"

"बशीर ने शमीम के आग्रह पर लाल मुहम्मद की नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। जोहरा और शमीम का विवाह होगया। वकील साहब

ने बड़ी धूमधाम से विवाह किया। जोहरा को लिखने पढने का पहिले से ही बहुत चाव था। अब शमीम के साथ रहकर वह काफी लिख पढ़ गई। जोहरा और शमीम का जीवन एक दूसरे के लिये आनन्द का जीवन बन गया, किंतु जिस दिन से बशीर ने लाल मुहम्मद की नौकरी से त्याग पत्र दिया, लाल मुहम्मद को दूसरा कोई भी इतना वफादार नौकर नसीब न हो सका। परिणाम यह हुआ कि लाल मुहम्मद का कारोबार ठप्प होता गया और कुछ ही दिनों में उसे दूकान में इतना भारी घाटा हुआ कि उसका दिवाला ही निकल गया। उसकी दूकान और मकान दोनों ही नीलाम होगये। गरीबी और लाचारी में लाल मुहम्मद के इष्टमित्र और सम्बन्धी भी उस को छोड़ कर चले गये। लाल मुहम्मद बुढ़ापे की दशा में आज भी फटे-पुराने कपड़ों में अक्सर शहर की गलियों में घूमता नजर आता है। सुबह से शाम तक इधर-उधर दूकानों से माँगकर अपने खाने पीने के लिये कुछ पैसे इकट्ठे कर लेता है। शहर वालों को आश्चर्य है कि लाल मुहम्मद की इतनी दौलत एक साथ कहाँ चली गई।

———

दौलत की पूजा

ला० रामदयाल अपने नगर के प्रसिद्ध दलालों में से थे, वह व्यापार की दलाली के अतिरिक्त शादी विवाह कराने की भी दलाली करते थे, यही नहीं बल्कि यदि किसी को नौकरी की तलाश होती थी तो उसमें भी ला० रामदयाल दखल रखते थे, इस प्रकार से वह प्रत्येक मास में अच्छी खासी रकम दलाली के द्वारा ऐंठ लिया करते थे। ला० रामदयाल का यह व्यवसाय बिना कौड़ी पैसा खर्च किये चलता था। जहाँ तक कि खरीदने और बेचने की दलाली का सवाल था, मकानों की खरीद और फरोख्त से लेकर जानवरों तक की खरीद और फरोख्त की दलाली ला० रामदयाल के हाथ में थी। थोड़े ही दिनों में ला० रामदयाल दलाली के इस व्यवसाय से इतने धनी बन गये कि उन्होंने नगर में अपने रहने के लिये एक आलीशान बंगला वनबा लिया और सवारी के लिये मोटरकार खरीद ली। ला० रामदयाल के बंगले और मोटर को देखकर इन्कमटैक्स व सेलसटैक्स अधिकारी अक्सर ला० राम दयाल की आमदनी का ब्यौरा पूछने जाते, किन्तु ला० रामदयाल को भी वह आर्ट याद था कि ऐसी लच्छेदार बातें बनाते और सबज़ बाग दिखाते कि उन्हें उल्टे पाँव लौटना ही पड़ता। अब जब से लाला ने मोटर खरीदी थी तब से तो इन्कमटैक्स व सेल्सटैक्स अधिकारी उनके और भी अधिक मुरीद बन गये थे। लाला तो सुबह से शाम तक शहर में दलाली के चक्कर में पैदल ही गश्त लगाते रहते थे किन्तु लाला की मोटरकार सेल्स टैक्स व इन्कम टैक्स अधिकारियों की सेवा में सुबह से शाम तक चलती रहती थी।

कुछ ही साल में लाला रामदयाल अपने नगर के सबसे बड़े धनी मानी व्यक्ति बन बैठे। वह जिस बंगले में रहते थे, उसके चारों तरफ और भी कई बंगले उन्होंने किराये पर उठाने को बनवा रक्खे थे। इतनी धन दौलत की प्राप्ति के पश्चात् लाला जी की यह प्रबल इच्छा हुई कि किसी प्रकार सम्मान और प्रतिष्ठा की खोज की जाय। किन्तु बेचारे अधिक लिखे पढ़े तो थे नहीं केवल बचपन में दर्जा चार तक मुन्डी और हिन्दी का अभ्यास किया था। अंग्रेजी में अपना नाम लिख लेते थे, मगर जब से ला० जी दौलतमन्द हुये और बंगले में रहने लगे, तब से ऐसी चड़क-फड़क की पोशाक पहिनते थे कि लोग उन्हें देखकर यह समझते थे कि लाला लिखे-पढ़े और योग्य व्यक्ति हैं। बहुत कम लोगों को यह मालूम था कि लाला जी की योग्यता केवल दर्जा चार तक है। सम्मान और प्रतिष्ठा कमाने की धुन में लाला जी सुबह से शाम तक यही सोचते रहते थे कि आखिर किस प्रकार क्या किया जाय। आखिर में वह इस परिणाम पर पहुँचे कि इन सबमें नेतागीरी सबसे सस्ती है। अतः उन्होंने सफेद खद्दर के कुर्ते, शेरवानी और गाँधी टोपियों के कई जोड़े सिलवाकर रख लिये, और उन्हें पहनना आरम्भ कर दिया। लाला जी मोटे ताजे और थोंद वाले व्यक्ति थे। रंग भी गोरा चिट्टा। इसलिये यह खद्दर के कपड़े लाला जी के शरीर पर बहुत सजे हुये लगने लगे। जब वह मोटर में बैठकर इन कपड़ों को पहनकर नगर की बाजार में से निकलते थे तो जो लोग उन्हें नहीं जानते थे, वह लाला जी को कोई बहुत बड़ा नेता समझते थे, और चौराहे पर खड़े बेचारे पुलिस के सिपाही लाला जी की मोटर को आते देखकर दूर से ही सलूट देने लगते थे।

शनैः-शनैः लाला रामदयाल अपने नगर की होने वाली राजनैतिक सभाओं व जलसों में भी भाग लेने लगे। इन सभाओं में जब वह जाते तो नगर के बड़े-बड़े नेताओं और अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करते। इस बहाने लाला जी की भेंट नगर के कई बड़े नेताओं और बड़े सरकारी

अधिकारियों से हो गई। अब लाला जी ने इन नेताओं और अधिकारियों के घर जाकर उन्हें सलाम झुकाना आरम्भ किया, और कुछ ही समय में लाला रामदयाल अपने शहर के अधिकारियों और नेताओं की जी हजूरी वाले दल में शामिल हो गये। इस प्रकार धीरे-धीरे लाला जी की गणना नगर के नेताओं में होने लगी। बिल्ली के भाग्य से छींका छूटा और अकस्मात म्युनिस्पेलिटी के चेयरमैन का चुनाव भी आरम्भ हो गया। लाला के पास धन की कमी तो थी नहीं और फिर तिक्ड़म और जी हजूरी में किसी से पीछे न थे। अतः रुपये के जोर पर लाला जी अपने नगर की म्युनिस्पलिटी के चेयरमेन चुन गये। फिर क्या था। ला० जी के दोनों हाथों में लड्डू, अभी तक तो लाला जी के हाथ में नगर की दलाली ही थी, किन्तु अब नगर का सारा व्यवसाय भी लाला जी के हाथ में आ गया। नगर के सभी ठेके और व्यवसाओं में लाला जी अपने इष्टमित्रों के द्वारा खूब धन कमाते। सुबह से शाम तक लाला जी के बंगले पर जी हजूर और खुशामदी लोगों की भीड़ लगी रहती। लाला जी तो चेयरमैन होने के बाद यह समझ बैठे, जैसे कि उन्हें संसार की बादशाहत मिल गई। उन्होंने अपनी चेयरमैनी के कार्यकाल में ऐसा रिश्वत और घूस खोरी का बाजार गर्म किया कि कमाल हासिल कर लिया। अबतक किसी चेयरमैन ने नगर में इतने खुलेआम घूसखोरी और ठेकों आदि से धन नहीं कमाया था जितना कि लाला जी ने कमाया। नगर का सारा व्यवसाय लाला जी सम्बन्धियों और इष्ट-मित्रों के हाथ में आ गया।

लाला रामदयाल का परिवार बहुत छोटा सा था। उनकी स्त्री के अतिरिक्त उनकी एक लड़की सरला और एक लड़का उमेश था। लड़की का विवाह तो लाला जी अपनी दलाली के समय में ही कर चुके थे। उमेश की आयु उनके चेयरमैन के चुनाव के समय ७-८ वर्ष से अधिक न थी। लाला जी तो दिन रात चेयरमैनी की रंग रेलियों में ही मस्त रहते, इसलिये उन्हें धन कमाने के अतिरिक्त और किसी बात की खबर

न थी। उन्हें उमेश की शिक्षा के सम्बन्ध में ध्यान देने या सोचने का कोई अवसर ही न मिलता था। परिणाम यह हुआ कि उमेश एक-एक कक्षा में ३-३ साल तक फेल होता रहा। घर पर कई प्राइवेट मास्टरों के पढ़ाने के पश्चात् भी वह हाईस्कूल पास न कर सका। उसका सम्पर्क भी बदचलन और आवारा लड़कों से होगया। जिसका परिणाम यह हुआ कि उमेश अपने नगर का सबसे आवारा लड़का बन गया। वह दिन-भर गुण्डे और बदमाश साथियों के साथ शहर में इधर से उधर मटरगश्त करता रहता। यहीं तक नहीं था बल्कि दिन-प्रतिदिन वह गली और कूँचों में लोगों से झगड़ा करता रहता। लाला जी के डर के कारण किसी को इसके विरूद्ध शिकायत करने का साहस न था। इसके अतिरिक्त उमेश की टोली में कुछ पुलिस के लोग भी शामिल थे, जो उमेश के रुपये पैसे से मौज उड़ाते और रंग रेलियाँ करते रहते थे कोई दिन ऐसा नहीं जाता जबकि १०-२० साथियों को उमेश खाना न खिलाता हो या चाय न पिलाता हो। इस प्रकार लाला जी की दलाली की कमाई से उमेश और उसके साथी खूब ही गुलछर्रे उड़ाते थे।

नगर में एक प्रसिद्ध वैश्या थी जो सुन्दर वाई के नाम से प्रसिद्ध थी। नगर के बहुत से धनी मानी लोगों को उसने अपने जाल में फाँस रक्खा था। सुबह से शाम तक उसके कोठे पर बड़े-बड़े आदमियों की भीड़ लगी रहती थी। उमेश के साथी एक दिन अवसर पाकर उमेश को सुन्दर वाई के कोठे पर ले गये। वहाँ उन सबने सुन्दर वाई का मुजरा सुना और वाह-वाह के नारों से उसके गाने की तारीफ के पुल वाँध दिये। जो कुछ भी रुपया उमेश की जेब में था, वह भी उसने सुन्दर वाई पर निछावर कर दिया। सुन्दर वाई को लोगों को अपने जाल में फाँसने की कला खूब ही याद थी। अतः जब उसे यह पता लगा कि उमेश नगर के चेयरमैन और एक बड़े धनी-मानी व्यक्ति का लड़का है, तो उसने उमेश को अपने प्रेम के जाल में फासने के लिये नाना प्रकार के यत्न करना

आरम्भ कर दिये। परिणाम यह हुआ कि उमेश भी सुन्दर बाई के जाल में फँस गया। बस फिर क्या था वह प्रतिदिन सायंकाल अपने साथियों की चौकड़ी समेत सुन्दर बाई के कोठे पहुँचता, और उसके गाने और मुजरे को आधी-आधी रात तक सुनता रहता। शराब कबाब की महफिल भी गर्म रहती, और आधी रात के बाद जब वह अपने घर पहुँचता तो उसकी यह दशा होती थी कि नशे के हालत में पैर लड़खड़ाने लगते थे और कुछ कहना चाहता था कुछ मुँह से निकलता था इसी दशा में वह अपने कमरे में चारपाई पर जा पड़ता।

उमेश की माँ एक पुराने और धार्मिक विचार की स्त्री थी। वह कभी स्वप्न में भी अपने बेटे के लिये शराब पीने या किसी वेश्या के घर जाने की बात नहीं सोच सकती थी। कुछ दिनों तक तो वह कुछ समझी ही नहीं किन्तु जब उसने लगातार उमेश को इसी दशा में देखा तो उसके हृदय में कुछ शंका उत्पन्न हुई। उसने उमेश से इस सम्बन्ध में सीधे बातें की। उसने देखा कि उमेश के मुँह से शराब की दुर्गन्ध निकल रही है। और नशे में उसके मुँह से शब्द टूट-टूटकर निकल रहे हैं। उसे बड़ा दुःख हुआ। उसे आश्चर्य था कि उमेश इस दशा को क्यों पहुँच गया। उसने घर के नौकरों चाकरों से उमेश के सम्बन्ध में पता लगाने का आदेश दिया। कुछ ही दिनों में उमेश की माँ को उमेश के सम्बन्ध में सारी बातों का पता लग गया। वह बहुत घबराई। उसने मन्दिर में जाकर भगवान से उमेश को सद्बुद्धि देने की प्रार्थना की। उसने उमेश को भी बहुत कुछ समझाने बुझाने का प्रयत्न किया किन्तु मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। उमेश दिन प्रतिदिन और भी अधिक बिगड़ता गया। वह सुबह से शाम तक न जाने कितना रुपया इन्हीं राग रंगों, शराब और नशे में व्यय कर देता था। उमेश की माँ ने अपने पति लाला रामदयाल को भी उमेश के कार्यों से अवगत कराने की, चेष्टा की किन्तु लाला रामदयाल को इतना साहस कहाँ था कि वह उमेश से आधी बात भी कहते, और कहते भी तो उमेश

उनकी सुनने वाला कहाँ था। लाला रामदयाल उमेश और उसके साथियों से इतना डरते थे कि सदैव उमेश की हाँ में हाँ मिलाते थे। धीरे-धीरे उमेश ने ला० रामदयाल की तिजौरी की चाबी भी प्राप्त करली थी। फिर क्या था? उमेश के खर्च की कोई सीमा न रही। न जाने कितना धन उसने अकेली सुन्दर बाई पर ही लुटा दिया अब यह दशा थी कि सुन्दर बाई जो भी फरमाइश करती उमेश उसे तुरन्त पूरा करता। न जाने कितने सोने चाँदी के आभूषण खरीदकर उमेश ने सुन्दर बाई को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया था। अब सुन्दर बाई की यह इच्छा थी कि किसी प्रकार उमेश की सम्पत्ति और रुपये पर पूर्णतया अधिकार किया जाय। ऐसा करने के लिये और उसने उमेश को अपने जाल में फंसाने के लिये न जाने कितनी चालें चली, न जाने कितने प्रेमपत्र लिखे। सुन्दर बाई अपनी चालों में सफल हो गई। यहाँ तक कि उसने उमेश को अपने साथ विवाह करने को तैयार कर लिया।

उमेश की माँ प्रातःकाल से सायंकाल तक चिन्ताओं में डूबी रहती थी। जब कभी अवसर मिलता तो ला० रामदयाल को भी उमेश की ओर ध्यान देने के लिये आग्रह करती और कभी-कभी क्रोध में आकर लाला को खरी खोटी बातें भी सुनाने लगती, किन्तु लाला तो दौलत पैदा करने में इतने व्यस्त थे कि उन्हें इन बातों के सुनने या समझने का अवकाश ही कहाँ था। उमेश की माँ जब कभी ज्यादा परेशान होती, तो वह लाला को डाटती फटकारती, मगर लाला तो पूरे चिकने घड़ा थे जिन पर उमेश की माँ की किसी बात का प्रभाव ही नहीं होता था। एक दिन जबकि उमेश की माँ ने लाला को बहुत कुछ समझाने की कोशिश की तो, बजाय इसके कि कुछ उचित उत्तर देते उल्टे बिगड़कर उमेश की माँ से कहा—

"उमेश की माँ, तुम्हें उमेश के अलावा घर में और किसी बात का ध्यान ही नहीं रहता, जब सुनो उमेश बिगड़ गया, उमेश को समझाओ

यही बातें करती रहती हो। तुम्हारी बातें सुनते-सुनते मेरे तो कान पक गये।"

"उमेश के पिता जी ! किसी दिन आप पछतायेंगे, और जिस धन दौलत की लिपस्या में आप दिन रात लगे रहते हैं वह भी आपके हाथ में न रहेगी।"

"उमेश की माँ ! तुमने तो अपना दिमाग गिरवी रख छोड़ा है। तुम्हें यह नहीं मालूम कि आजकल जमाने में दौलत की पूजा होती है जानती नहीं।"

लेकिन शायद आप यह भूल गये हैं कि हमारा बच्चा हमारी सबसे बड़ी दौलत है, यदि वही बिगड़ गया तो हम दौलत पर क्या खाक डालेंगे "

"उमेश की माँ ! तुम तो अब उपदेश भी देने लगीं।"

"मैं उपदेश नहीं दे रही हूँ, बल्कि यह बता रही हूँ कि उमेश अब आपके हाथ से निकल चुका है।"

"क्या मतलब" ?

मतलब यह है, कि वह शराव पीता है, रात को आधी-आधी रात तक सुन्दर वाई के घर रहता है।"

"ओह हो ! तो क्या हुआ। जवानी में लड़कों की ऐसी ही हालत होती है। जब उमेश का विवाह हो जायेगा अपने आप ठीक हो जायेगा।"

"तो फिर क्यों नहीं शादी का जल्द प्रबन्ध करते हो।"

"मैं क्या मना करता हूँ, जब चाहो शादी की महूरत तय करलो।"

"आप मर्द होकर लड़की तलाश नहीं कर सकते तो मैं औरत

होकर क्या कर सकती हूँ।"

"तुम नहीं जानती, उमेश की माँ ! औरतें लड़की ढूँढने में जितना होशियार होती हैं—पुरुष नहीं ।"

"तो आपका मतलब यह है कि मैं लड़की ढूँढने के लिये मारी-मारी फिरूँ ।"

"यह कौन कहता है—मेरा मतलब तो यह है कि घर में इतने नौकर चाकर हैं उनसे तुम यह काम ले सकती हो।"

"लेकिन आप उमेश से तो पूछ लीजिये कि वह तैयार है ।"

"उमेश की माँ, यह काम भी तुम्हीं ठीक प्रकार से कर सकती हो।"

लाला रामदयाल और उनकी स्त्री में इस प्रकार की बातें हो ही रही थी कि सामने से उमेश आता दिखाई दिया। लाला रामदयाल तो उमेश को देखते ही खिसक गये किन्तु उमेश की माँ बैठी रही । उसने इस अवसर को उचित समझकर उमेश की ओर देखकर कहा—

"उमेश, आज मैं तुमसे एक बात पूछना चाहती हूँ।"

"ऐसी कौन सी बात है।"

"यह कि मैंने तुम्हारे विवाह की महूरत तय करदी है।"

"नहीं माँ ! अभी शादी नहीं होगी।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि मैं किसी से शादी का वचन दे चुका हूँ।"

"बिना माँ-बाप से पूछे हुये।"

"माँ ! आप तो समझती नहीं । अब जमाना बिल्कुल बदल गया है और अब शादियाँ लड़के और लड़की की मर्जी से ही होती हैं।"

"वह कौन लड़की है ?"

"यह मत पूछो"

"क्यों नहीं पूछूं, क्या मुझे इतना भी अधिकार नहीं है।"

"इसलिये कि शायद तुम्हें वह लड़की पसन्द न होगी।"

"क्यों नहीं होगी।"

"मैं कहता हूँ कि वह हरगिज पसन्द नहीं होगी।"

"क्या वह अन्धी है, कानी है, लूली लंगड़ी या गूंगी बहरी है।"

"नहीं, ऐसा नहीं है"

"तो फिर क्या है।"

"अगर माँ तुम जिद्द करती हो तो सुनलो, वह सुन्दर बाई है।"

"सुन्दरबाई ! इस शहर की वेश्या।"

उमेश की माँ ने आश्चर्यजनक शब्दों में पूछा।

"हाँ-समाज में उसे वेश्या कहते हैं लेकिन वह हजारों से अच्छी..." अभी उमेश ने पूरा वाक्य कहा भी न था कि उमेश की माँ को गश आ गया और वह बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। सब नौकर-चाकर भाग कर आगये और उन्होंने जल्दी से उमेश की माँ को झट चारपाई पर लिटाकर उसे होश में लाने के लिये उसके मुँह पर पानी छिड़कना शुरू किया। बाहर जाकर किसी ने लाला जी को समाचार दिया तो वह भागे हुये तुरन्त ही घर में आ गये। लाला जी को आता देखकर उमेश वहाँ से खिसक गया। उमेश की माँ को कुछ ही देर बाद होश आया। उसने ला० रामदयाल को अपने सामने खड़ा हुआ पाया। उमेश की माँ ने उसके और उमेश के बीच हुई सारी बातों को लाला रामदयाल को कह सुनाया। लाला रामदयाल को बड़ी परेशानी और चिन्ता हुई, किन्तु वह कर भी क्या सकते थे इसलिये कि पानी सर से ऊँचा निकल चुका था।

उमेश की माँ उसी दिन से बीमार पड़ गई, और फिर दिन प्रतिदिन उसकी दशा चिन्ताजनक होती गई। लाला रामदयाल ने बड़े-बड़े डाक्टर और वैद्यों को बुलाकर उमेश की माँ को दिखाया किन्तु उसकी बीमारी में कोई अन्तर न पड़ा कुछ ही दिनों में उमेश की मां इस संसार से कूँच कर गई। लाला रामदयाल को अपनी स्त्री के मरने का बहुत दु:ख था। उन्हेंने कई दिन तक शोक मनाया। मुहल्ले के लोगों को जितनी लाला जी से घृणा थी उतनी ही लाला जी की स्त्री से सहानुभूति थी। इसलिये उन्हें भी बड़ा दुख हुआ। मुहल्ले के स्त्री और पुरुष एक सप्ताह तक लगातार लाला जी के घर शोक प्रकट करने आते रहे, किन्तु उमेश के हृदय पर उसकी माँ की मृत्यु का कोई प्रभाव न पड़ा। वह सुन्दरवाई के प्रेम में इतना अंधा बन चुका था कि अब उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसके और सुन्दर वाई के बीच में उसकी माँ रूपी दीवार जो खड़ी थी वह अब समाप्त हो गई। इसलिये बजाय दु:ख के उसके हृदय को एक प्रकार की प्रसन्नता हुई। अब उसने सुन्दर वाई से विवाह करने की बात बिल्कुल पक्की करली। अब उसे घर से पूरी आजादी थी, जितना चाहे खर्च करे जितना चाहे इष्ट-मित्रों को लुटाये! न कोई पूछने वाला न कोई देखने वाला। सुन्दर वाई को भी प्रसन्नता हुई, और वह समझ गई कि वह उमेश के बाप की सम्पत्ति और धन दौलत पर आसानी से अधिकार कर सकती है। अत: उसने शीघ्र उमेश से विवाह करने का आग्रह किया। उमेश जवानी के नशे में बिना किसी प्रकार का आगा पीछा सोचे हुये सुन्दर वाई को अपने घर ले आया।

लाला रामदयाल को उमेश की यह हरकत बिलकुल पसन्द न थी। उनकी चिन्ता की सीमा न रही। उन्होंने अपने इष्टमित्रों नोकर चाकरों के द्वारा उमेश को समझाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया किन्तु सब व्यर्थ रहा। लाला की आँख भी अपने नौकर चाकरों और इष्टमित्रों के सामने झेपती

थी किन्तु वह कर ही क्या सकते थे। उमेश ने उनकी एक न सुनी और सुन्दरबाई के साथ अपने विवाह की घोषणा करदी। विवाह के दिन उमेश की तमाम चिन्डाल चौकड़ी के मित्र उमेश के घर एकत्रित हुये। खूब उत्सव मनाया गया। दिन भर शराब और कबाब का दौर चलता रहा। तरह-तरह की मिठाईयाँ और पकवान बनाये गये, मगर ला० रामदयाल उस दिन, दिन भर शर्म से मुँह छिपाये म्युनिस्पलिटी के दफ्तर में बैठे रहे। उमेश को लाला जी की चिन्ता भी क्या थी, तिजौरी की चावियाँ तो उसके पास थीं। फिर क्या था मालमुफ्त दिले बेरहम। खूब दिल खोल कर खर्च किया। हजारों रुपये के आभूषण और कपड़े सुन्दरबाई के लिये खरीदे गये। तमाम नगर में उस दिन उमेश और सुन्दरवाई के विवाह का चर्चा रहा।

उमेश और सुन्दरवाई के विवाह के पश्चात कुछ ही दिनों में लाला रामदयाल की चेयरमैनी का समय भी समाप्त हो गया। उन्हें चेयरमैन का चसका ऐसा लग चुका था कि वह बावजूद इन सब चिन्ताओं के दोबारा के लिये चेयरमैनी के उम्मीदवार बने। उन्होंने चेयरमैनी को प्राप्त करने को रुपये को पानी की तरह बहाया, किन्तु लाला जी अपने बुरे कामों और उमेश और सुन्दरवाई के विवाह की बदनामी के कारण इतने लज्जित हो चुके थे, कि लोगों की निगाहों में गिर गये, और चुनाव में उनकी जमानत जब्त हो गई। लाला जी को अपनी हार का बड़ा दुःख हुआ। सबसे बड़ा दुख तो उन्हें इस बात का था कि उनके रुपये पैसे प्राप्त करने के साधन ही नष्ट हो गये। अब लाला जी की तिजौरी भी खाली हो चुकी थी। कुछ तो उमेश की रंगरेलियों से और रही सही उनके चुनाव से। जो कुछ थोड़ा बहुत रुपया और सामान रह भी गया उसे सुन्दर बाई ने दबा लिया। लाला जी दलाली का व्यवसाय पहले ही समाप्त कर चुके थे दूसरा व्यापार नहीं था जो करते। परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे गरीबी और लाचारी का शिकार होने लगे सबसे बड़ा दुख उन्हें अपनी कमाई हुई दौलत के चले जाने का था।

उधर सुन्दर बाई ने जब यह देखा कि अब लाला के पास मकान को छोड़कर और कुछ नहीं रहा तो उसने अपनी चालों से उमेश को बाध्य किया कि वह मकान को अपने नाम में रजिस्टरी करा ले। लाला बेचारे में इतना साहस कहाँ था कि उमेश की बात पर ना करते। उन्होंने चुपके से कागज पर अपने हस्ताक्षर कर दिये, किन्तु जिस दिन उन्होंने मकान उमेश के नाम किया, उस दिन उन्हें रात भर नींद नहीं आई। अब उन्हें अपनी बेईमानी और भ्रष्टाचार द्वारा कमाई हुई दौलत का एहसास हो रहा था। किन्तु अब क्या हो सकता था जब चिड़ियाँ चुग गई खेत। लाला को इसी चिन्ता में तपेदिक होगई। अब उनके पास कुछ भी नहीं था जिससे अपना इलाज कराते। गुजर-वसर करना ही कठिन होरहा था, उमेश सुन्दर वाई के कहने में इतना अधिक था कि वह लाला के पास फटकना भी गवारा नहीं करता था। अब सुन्दर बाई को एक और अवसर मिला और उसने उमेश को यह कहकर लाला से अलग करने का प्रयत्न किया कि लाला को तपेदिक का रोग है अतः उनके साथ एक ही मकान में उन दोनों का रहना सुरक्षित नहीं है। उसने उमेश को यह परामर्श दिया कि वह इस मकान को बेचकर किसी दूसरे शहर में जाकर रहने लगे। अतः उमेश ने किसी को कानोकान खबर न होने दी और मकान वेच दिया। जो भी रुपया मिला उसे सुन्दरबाई ने अपने वक्स में रखलिया और वह दोनों लाला को मकान में अकेला छोड़कर दूसरे शहर में चले गये।

मुहल्ले के कुछ लोगों ने लाला जी की दशा चिन्ताजनक देखकर अस्पताल में भर्ती करा दिया। मुहल्ले में लाला के प्रति किसी को कोई सहानुभूति तो थी नहीं। इसलिये उनके पास कौन आता जाता। परिणाम यह हुआ कि लाला जी एक लावारिस की प्रकार अस्पताल में पड़े रहे। इसी बीच उनकी दशा बहुत चिन्ताजनक हो गई। किसी ने लाला जी के सम्बन्ध में उमेश को तार दे दिया कि उनकी दशा बहुत चिन्ता जनक है, उमेश घर पर नहीं था। जव वह लौटकर आया तो सुन्दरबाई ने वह तार

दिखाते हुये उमेश से कहा "यह तार है जिसमें आपके पिता जी की दशा चिन्ताजनक लिखी है।"

"आखिर क्या किया जाये?"

"मेरा विचार है कि हमें दुनियादारी बरतना चाहिये, इसलिये आपको उन्हें देखने जरुर चला जाना चाहिये ताकि लोग हमारे खिलाफ उँगली न उठा सकें।"

"अगर तुम्हारी यह इच्छा है तो मैं जाकर देखे आता हूँ।"

दूसरे दिन सुबह उमेश सुन्दर वाई से आज्ञा लेकर लाला जी को देखने चला गया। बेचारे लाला अस्पताल में एक लावारिस व्यक्ति की तरह पड़े हुये थे। उमेश के पहुँचने से कुछ घन्टे पूर्व ही लाला जी की मृत्यु हो चुकी थी। जब उमेश अस्पताल के दरवाजे पर पहुँचा तो सेवा समिति के स्वयं सेवक लाला जी की अर्थी श्मशान भूमि को लिये जा रहे थे। उमेश ने जब यह देखा कि उसके पिता की अर्थी जा रही है, तो वह आँख बचा कर पीछे की तरफ से खिसक गया और उल्टे पाँव अपने नगर की ओर चल दिया। वह नहीं चाहता था कि वह अपने पिता के शहर में किसी आदमी के आँखों के सामने पड़े ताकि लोग उसे बुरा-भला कहे। इसीलिये वह चोरों की तरह आँख छिपाये हुये वहाँ से खिसक गया और रेल पर बैठकर सीधे अपने घर आपहुँचा। जब वह अपने घर पर आया तो उसने घर के दरवाजे पर ताला लगा हुआ देखा। वह समझा कि सुन्दर वाई मुहल्ले में किसी के घर उठने बैठने को चली गई है। उसने मुहल्ले वालों से सुन्दर वाई के सम्बन्ध में मालूम किया तो कहीं उसका पता न लगा। काफी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद उसने दरवाजे का ताला तोड़ा और वह घर के भीतर घुसा तो उसने देखा कि घर में कोई सामान। नहीं सब सन्दूक गहने और नकद रुपयों के वहाँ से गायब हैं। वह समझ गया कि सुन्दर बाई ने उसे धोखा दिया है। उसे बड़ा धक्का लगा। वह सर पकड़कर वहीं बैठ

गया। वह इतना लाचार और मजबूर अपने को पा रहा था जैसे कि उसकी दुनिया ही लुट गई हो। उसके पास १०-२० रुपये के अतिरिक्त और कुछ भी न था। अब उसे अपने गुनाहों और अपने माँ-बाप के दिल दुखाने और उनकी मृत्यु की हृदय विदारक घटनायें याद आ रही थीं। किन्तु अब सब बेकार था। उसने पुलिस में भी रिपोर्ट लिखवाई मगर सुन्दरवाई का कोई पता न लग सका।

सुन्दर वाई को गायब हुये दसों वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। आज तक उसका किसी को पता न लग सका कि वह कहाँ गई। उमेश कभी-कभी शहर की सड़कों पर फटे पुराने कपड़े पहने घूमता हुआ दिखाई दे जाता है, किन्तु वह कहाँ रहता है, किस प्रकार अपनी गुजर वसर करता है यह कोई नहीं जानता।

'पाप का घड़ा'

पूरन अपने समय का सबसे बड़ा सफल इन्कमटैक्स आफीसर समझा जाता था। उसकी गणना बड़े कुशल अधिकारियों में थी। पूरन को यदि हरफनमौला कहा जाय तो कुछ अनुचित नहीं। वह इतना खुशामदी था कि जब अपने अधिकारियों से मिलने का अवसर पाता तो उनकी तारीफ के पुल बाँध देता था। इसीलिये पूरन के उच्चाधिकारी पूरन से सदैव खुश रहते थे। केवल यहीं तक नहीं, वह अपने उच्चाधिकारियों की स्त्रियों और उनके घर की अन्य महिलाओं को भी प्रसन्न रखने का पूरा प्रयत्न करता। किसी से वहिन जी, किसी से माता जी तथा किसी से भावी जी कहकर सुबह से शाम तक उनकी आवभगत में ही लगा रहता। वह अपने अधिकारियों के बच्चों की सहानुभूति भी उन्हें लाड़-प्यार करके प्राप्त कर लेता था। वह जब किसी मेले या प्रदर्शनी में जाता तो अधिकारियों के बच्चों को मिठाई खिलौने और न जानें कितने प्रकार की भेंट लेकर आता। इस प्रकार से उसने अपने सभी अधिकारियों पर अपना प्रभाव जमा रक्खा था।

नगर के सभी बड़े-बड़े सेठ साहूकार और दौलतमन्द लोग पूरन के मित्र थे। उन सब पर पूरन का इतना भय था कि उनमें से किसी की यह मजाल नहीं थी कि वह पूरन के किसी आदेश को टाल सके। सुबह से शाम तक पूरन के घर इन लोगों का ताँता बंधा रहता था। कोई दिन ऐसा नहीं बीतता था जबकि पूरन के घर किसी न किसी सेठ साहूकार या बड़े आदमी के घर से डाली अथवा भेंट न आती हो। पूरन की सवारी के लिये बड़े से बड़ेआदमियों की मोटरें पूरन के इशारे पर पहुँच जाती थीं। वह कहीं भी जाता मोटर उसके लिये तैयार रहती थी। यहीं तक नहीं

बल्कि पूरन के जो बच्चे स्कूल में पढ़ते थे उनको भी स्कूल को पहुँचाने एवं लाने के लिये सेठ और साहूकारों की मोटरें आया करती थीं। अकसर पूरन के घर लोग मेले और बाजार आदि के लिये इन्हीं लोगों की मोटरें लेकर जाते थे और यह लोग बिना चूँ चपड़ किये हुये प्रसन्नता पूर्वक अपनी मोटरों को भेजते थे। पूरन का वेतन केवल ५००) मासिक था। किन्तु पूरन के ठाट बाट किसी राजा और नवाब से कम न थे। उसने रहने के लिये नगर में एक आलीशान बंगला किराये पर ले रक्खा था। उसका बंगला जिस प्रकार से सजा रहता था उसे देखकर बड़े-बड़े रईस लोग भी रश्क करते थे। नौकरों और चाकरों की तो कमी ही न थी। कुछ तो पूरन के अपने दफ्तर के नौकर थे। और कुछ नगर के सेठ और साहूकार अपने नौकरों को पूरन के यहाँ कार्य करने को भेज देते थे। पूरन लाल का रहन-सहन और ठाट-बाट का खर्चा किसी दशा में भी ४०००) मासिक से कम न था। पूरन की स्त्री एक दिन में न जाने कितनी बार साड़ियाँ बदलती, उसे और काम ही क्या था। पूरन के बच्चे भी सुबह से शाम तक दिन में कई बार अपनी पोशाकें बदलते थे। पूरन लाल ने कई बवरची खाना बनाने को रख छोड़े थे। सब्जी बनाने वाला और गोश्त पकाने वाला बाबरची अलग २ रख छोड़े थे जिन की गणना नगर के प्रसिद्ध और निपुण बाबरचियों में थी। पूरन के घर हर दूसरे तीसरे दिन दो-तीन मुर्गे काटे जाते थे। और भी नाना प्रकार के पकवान और खाने सुबह से शाम तक घर बनते ही रहते थे। पूरन के घर अतिथियों की भी क्या कमी थी। उसकी ससुराल के ४-६ व्यक्ति रोजाना बने ही रहते थे। कम से कम १५-२० व्यक्तियों का भोजन पूरन के घर प्रतिदिन बनता था। फिर जब कभी वह अपने उच्चा-धिकारियों की दावत करता तो शराब-कवाब के दौर काफी रात गये तक चलते रहते थे। जब कभी पूरन का कोई उच्चाधिकारी पूरन के दफ्तर के निरीक्षण के लिये आता, तो पूरन उसे अपने ही घर ठहराते। और

उसका इतना आदर और सत्कार करते, तथा उसे अच्छे से अच्छा खाना खिलाकर सदैव के लिये अपना गुलाम बना लेते थे। इस प्रकार पूरन अपने सभी अधिकारियों को अपने प्रभाव में रख छोड़ा था।

पूरन ने नगर के सब बड़े-बड़े आदमियों और सेठ साहूकारों को को खुली छूट दे रक्खी थी कि वह जिस प्रकार चाहे अपनी आमदनी करें और जो कम से कम इन्कमटैक्स हो सकता था वह उन पर लगाता था। लगभग सभी बड़े व्योपारियों ने दोहरे बही खाते बनवा रक्खे थे। एक तो वह वही खाते थे जिन में व्यापारियों का सही हिसाब-किताब होता था और दूसरे नकली वही खाते जिनमें कम से कम आय और अधिक से अधिक व्यय दिखाकर कम से कम इन्कमटैक्स लगता था। यह सब कुछ पूरन लाल के परामर्श से ही होता था। परिणाम यह हुआ कि जिस साहूकार को १००००) इन्कमटैक्स देने चाहिये वह केवल २०००) में ही छुटकारा पा लेता था। किन्तु ऐसा करने में पूरन इन लोगों से बड़ी लम्बी-लम्बी रकमें ऐंठ लेता था। थोड़े ही दिनों में इन्कम-टैक्स की इस कमाई से पूरन लखपती बन गया। यदि कोई भी सेठ साहूकार पूरन की इच्छानुसार उसे घूस नहीं देता था अथवा कभी अपने मोटर आदि के देने में ज़रा सी भी ढील बर्तता, तो पूरन उनपर इतना डाँटकर इन्कमटैक्स लगाता कि उसके होश उड़ जाते, और फिर वह ऐसे व्यक्तियों से अपने घर और अपने दफ्तर के सैकड़ों चक्कर लगवाता था। कभी उनसे दूसरा हिसाब-किताब बनाकर लाने को कहता। कभी जांच के लिये किसी इन्सपेक्टर को भेज देता। कोई न कोई बहाना ऐसे लोगों को परेशान करने के लिये वह आये दिन बनाता रहता था। पूरन के क्लर्क और चपरासी तो पूरन से भी दो कदम आगे थे। वह पूरन का इशारा पाते ही ऐसे लोगों को वह नाच नचाते कि बेचारे कुछ ही दिनों में परेशान होकर पूरन की खुशामद करने लगते। और मुँह माँगा रुपया पूरन को घूस में देते। जो ऐसा नहीं करता ऐसों को पूरन बरवाद कर

देता श्रौर न जाने कितनों को फांसकर जेल भिजवाता। दो चार लोग इस प्रकार जब पूरन के क्रोध का शिकार हो गये तो फिर नगर में किसी को यह साहस न रहा कि पूरन का विरोध करे।

पूरन लाल एक श्रोर तो बड़े-बड़े सेठ श्रौर साहूकारों को खुली छूट देकर उन पर कम से कम इन्कमटैक्स लगता। दूसरी श्रोर वह बेचारे मामूली तनख्वाहों के नौकरों श्रौर छोटा-मोटा इन्कम टैक्स देने वाले साधारण व्यक्तियों के साथ ऐसी सख्ती बर्तता कि उनकी अक्ल ठिकानें श्रा जाती। वह समझता था कि साधारण इन्कम टैक्स देने वाले व्यक्तियों के साथ रियायत करने से उसे कोई लाभ नहीं होगा। इसी कारण ऐसे लोगों के हिसाब-किताब की कड़ी जांच होती थी श्रौर अधिक से अधिक जो भी इन्कम टैक्स उन पर लग सकता था, वह उन पर लगाया जाता था। बहुत से बेचारे तो पूरन लाल के निर्णय पर खून का सा घूंट पीकर रह जाते, इसलिये कि उनकी एक न चलती।

पूरन के तीन लड़कियाँ श्रौर दो लड़के थे। इसके अतिरिक्त पूरन श्रौर उसकी स्त्री, इन्ही सात व्यक्तियों का पूरन का परिवार था। पूरन की सबसे बड़ी लड़की सुदामा जिसकी आयु लगभग १७-१८ वर्ष की हो चुकी थी। पूरन ने उसके लाड़-प्यार श्रौर उसकी पढ़ाई-लिखाई में बहुत रुपया व्यय किया था। सुदामा कालेज में पढ़ती थी किंतु कालेज के अति-रिक्त १००) मासिक का प्राइवेट अध्यापक उसे घर पर पढ़ाने आता था। सुदामा को कालेज लाने श्रौर लेजाने के लिये एक बहुत फर्स्ट क्लास कार एक मिल मालिक महोदय ने पूरन को दे रक्खी थी। यदि किसी दिन यह मोटर किसी कारणवश न श्रा पाती तो मिल मालिक महोदय रोडवेज की टैक्सी भेजकर सुदामा को कालिज पहुँचाते श्रौर बुलाते। सुदामा ने जब बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की तभी से पूरन को यह धुन सवार हुई कि सुदामा के लिये कोई बहुत बड़े धनी परिवार का पढ़ा लिखा

होनहार लड़का ढूँढा जाय। पूरन ने अपने सभी इष्ट-मित्रों से सुदामा के लिये लड़का ढूँढ़ने का आदेश दिया। भाग्यवश उन्हें एक बहुत बड़े धनी-मानी व्यक्ति का लड़का मिल गया जो उसी वर्ष आई० ए० एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था। पूरन के पास धन की क्या कमी थी। लड़के के बाप ने जितना धन मांगा पूरन तुरन्त उसे देने को तैयार हो गये। अतः विवाह की मुहूर्त निश्चित हो गई। पूरन को विवाह में किसी वस्तु के खरीदने की आवश्यकता नहीं थी। न जानें कितने सेठ साहूकार पूरन के इशारे पर विवाह के लिये हजारों रुपये की वस्तुयें अपने रुपये से खरीद कर लाये थे। बारात का दिन आया। बड़ी धूम-धाम से बरात आई! पूरन और उसके मित्रों ने बारात का इतना शानदार स्वागत किया कि किसी राजा या नबाव की भी बारात का इतना बड़ा स्वागत न हुआ होगा। नगर के लगभग सभी बड़े आदमी सेठ साहूकार और मिल-मालिक अपनी मोटरों समेत पूरन के दरवाजे पर बारात के स्वागत को उपस्थित थे। हर बाराती के लिये तफरीह और सैर करने के लिये एक मोटर कार तैनात थी। बारातियों के लिये अच्छा से अच्छा खाना और अन्य वस्तुयें उपलब्ध थीं। जितने बारात के लोग नहीं थे उनसे कहीं अधिक तो पूरन के यहाँ नौकर चाकर और चपरासियों की भीड़ थी। कोई भी ऐसा बड़ा आदमी नगर का नहीं था जिसने अपने एक दो नौकर पूरन के घर विवाह के प्रबन्ध के लिये न भेज रक्खे हों। विवाह के किसी खर्चे में भी पूरन की एक कौड़ी भी व्यय नहीं हुई। बल्कि हजारों रुपया नकदी और आभूषणों के रूप में सुदामा के भेंट करने के लिये पूरन के घर आ गया। बारात बड़ी धूम-धाम से दरवाजे पर आई। खाना खिलाया गया। खाने के पश्चात् बारातियों द्वारा पान की फरमाइश हुई। पूरन ने प्रसिद्ध बनारसी पान वाले श्यामलाल की दूकान से बारातियों के लिये पानों का प्रबन्ध कर रक्खा था। श्यामलाल की दूकान का पान नगर में प्रसिद्ध था। होली दीवाली तथा अन्य ऐसे ही

अवसरों पर लोग श्यामलाल की दूकान से पान खरीदते। इस प्रकार श्यामलाल की आय लगभग १००) माहवार थी। श्यामलाल और उसका लड़का निर्मल तथा स्त्री तीनों का व्यय और गुजर-बसर का साधन केवल यही दूकान थी। श्यामलाल बड़ा ईमानदार और भला आदमी था। वह कभी किसी को धोका नहीं देता था। यदि कभी उसकी दूकान पर पर अच्छे बनारसी पान नहीं होते तो वह अपने ग्राहकों को स्पष्ट शब्दों में बता देता था। वह उधार का लेन-देनन हीं क ता था। पूरन की लड़की की बारात दरवाजे पर खड़ी थी। जैसे ही बारात वालों की ओर से पानों की फरमाईश हुई, पूरन ने अपने दो नौकरों को तुरन्त ही श्यामलाल के यहां पान लेने को भेज दिया। श्यामलाल ने आवश्यकतानुसार पान लगाकर पूरन के नौकरों को दे दिये। किन्तु जब उसने पैसे मांगे तो नौकरों ने यह दिया कि यह पान पूरनलाल इन्कमटैक्स आफीसर के यहां जा रहे हैं। पूरन यह समझता था कि श्यामलाल जब उसका नाम सुनेगा तो कभी भी पैसे नहीं मांगेगा, और उसके रोब में मुफ्त पान लगाकर भेज देगा। मगर श्यामलाल जितना ही ईमानदार था उतना ही निडर भी था। उसने पूरन के नौकरों से स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि वह बिना पैसे लिये हुये पान नहीं देगा और न उसके यहां किसी भी व्यक्ति का उधार खाता चलता है। पूरन के नौकर तुरन्त ही भागे हुये पूरन के पास पहुँचे और उन्होंने पूरन को बताया कि श्यामलाल पानों के नकद दाम मांग रहा है। नकद दामों का नाम सुनकर पूरन आग बबूला हो उठा और क्रोध में आपे से बाहर होगया। उसने क्रोध से दांत पीसते हुये कहा।

"अच्छा श्यामलाल की यह हिम्मत। मालूम होता है कि चीटीं के भी पर निकल आये।"

बारात दरवाजे पर खड़ी थी। और पूरन यह समझ रहा था कि

अगर पान समय से पहले न आये तो उसकी बेइज्जती होगी। अतः उस समय तो उसने १०) का नोट निकाल कर नौकर को दे दिया। लेकिन दिल में यह ठान लिया कि श्यामलाल से इसका बदला लिया जावेगा।

पूरन की लड़की की बारात चली गई। बारात के बिदा होने के दूसरे ही दिन पूरन अपने दफ्तर के दो-तीन सिपाही और चपरासियों के साथ श्यामलाल की दूकान पर जा पहुँचा। श्यामलाल और उसका लड़का निर्मल दोनों ही दूकान पर बैठे हुये थे। पूरन ने दूकान पर पहुँचते ही श्यामलाल को आड़े हाथों लिया और श्यामलाल की ओर देखकर डांटते हुये कहा।

"श्यामलाल तुम्हारी यह हिम्मत कि तुमने हमारे नौकरों से गुस्ताखी की।"

"हुजूर; यह आप क्या कह रहे हैं। मैंने तो उनसे सिर्फ पानों के दाम मांगे थे।"

"अभी मैं तुमको पैसे मांगने का मजा चखाता हूँ। तुम्हें जब मालूम होगा जब तुम पर ५००) सालाना इन्कमटैक्स बंधेगा। और जेल की हवा खानी पड़ेगी।"

"श्रीमान इन्कमटैक्स आफीसर साहब! आप तो बिला वजह आपे से बाहर हुये जा रहे हैं। मैंने किसी की चोरी तो नहीं की है जो आप जेल की हवा खिलायेंगे।

"चोरी ही नहीं बल्कि बेईमानी की है। हजारों रुपये पानों की आय से कमाते हो मगर सरकार का इन्कमटैक्स नहीं देते हो।"

"यह आप क्या कह रहे हैं। आप मेरा रजिस्टर देख लीजिये। मुश्किल से १००) महिने की आय है और उसमें भी हम तीन लोग न जानें किस प्रकार अपनी गुजर-बसर करते हैं।"

"बकवास मत करो। मैं सब कुछ जानता हूँ। तुमने यह फर्जी रजिस्टर इन्कमटैक्स से बचने के लिये बना रक्खे हैं।"

पूरन को इस प्रकार आपे से बाहर देखकर निर्मल से न रहा गया। वह स्कूल का छात्र। इसीलिये उसे यह नागवार हो रहा था कि उसके पिता से इस प्रकार की गाली गलौज वाली बातें की जायें। कुछ देर तक तो वह चुप रहा। किन्तु जब पूरन ने श्यामलाल को चोर और बेईमान कहना आरम्भ किया तो उसका खून क्रोध से खौलने लगा और उसने पूरन की ओर देखकर कहा।

"श्रीमान जी! मेरे पिता जितनी शराफत से बात कर रहे हैं उतनी ही असभ्यता पर आप उतर रहे हैं। अगर आपने अब कोई शब्द उनकी शान में कहा तो अच्छा नहीं होगा।"

"ओह?" एक मेढ़क को भी जुकाम हुआ। कल का छोकड़ा मेरे मुँह लग रहा है। मेरे मुँह लगने का नतीजा तुझे जब मालूम होगा जब तेरा बाप हथकड़ी पहनकर जेल जायेगा। और यह दूकान नीलाम होगी।"

"मुँह सँभालकर बोलिये। आपको शर्म नहीं आती। जो मेरे पिता से ऐसी बात करते हो। क्या तुम्हारा यही पेशा है कि ईमानदार आदमियों को जेल भेजो और बेईमानों से रिश्वत लेकर मजा उड़ाओ।"

"तुम्हारी यह हिम्मत, मैं अभी इस गुस्ताखी का मजा चखाता हूँ।" पूरन और निर्मल में इस प्रकार बातें होते हुये देखकर श्यामलाल ने निर्मल को खामोश करने का प्रयत्न किया। उसने नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ते हुये पूरन से कहा।

"इन्कमटैक्स आफीसर साहब यह अच्छा है। इसके मुँह मत लगिए।" यह कहकर श्यामलाल ने निर्मल को डाँटकर आगे बात बढ़ाने से रोक लिया। किन्तु पूरन फिर भी क्रोध में आपे से बाहर था। वह सीधा दूकान से अपने दफ्तर पहुँचा और उसने अपने इन्सपेक्टरों को आदेश दिया कि वह श्यामलाल की दूकान के सब रजिस्टर तथा कागज अपने अधिकार में करलें। साथ ही श्यामलाल का चालान इन्कमटैक्स की चोरी में करने सिपाहियों को लेकर श्यामलाल की दुकान पर पहुँच गया। उसने दूकान के समस्त कागज अपने अधिकार में कर लिये। और सिपाहियों को संकेत किया कि वह श्यामलाल को गिरफ्तार करलें। सिपाहियों ने श्यामलाल को गिरफ्तार करके हथकड़ी पहना दी और उसे थाने में ले गये और हवालात में बन्द कर दिया।

श्यामलाल की गिरफ्तारी की सूचना नगर भर में बिजली के प्रकार फैल गई। लोगों को आश्चर्य था कि श्यामलाल जैसा ईमानदार और भला आदमी भी इन्कमटैक्स की चोरी में पकड़ा जा सकता है। लोगों को इस बात पर भी आश्चर्य था कि श्यामलाल की हैसियत इन्कमटैक्स देने योग्य हो गई जबकि वह एक साधारण पानों की दूकान करने वाला व्यक्ति है। श्यामलाल की गिरफ्तारी की खबर जब उसके घर पहुँची तो उसकी स्त्री धाड़ें मारकर रोने लगी। निर्मल घर पर ही था। उसे भी बड़ा दुःख हुआ। वह समझ गया कि यह सब पूरन ने ही किया है। उसने अपनी माँ को ढ़ाढ़स बंधाने की कोशिश की और विश्वास दिलाया कि वह किसी न किसी प्रकार अवश्य अपने पिता को छुड़ाने का प्रयत्न करेगा, और इन्सपेक्टर से इस बेइज्जती का बदला लेगा। मुहल्ले के भी बहुत से स्त्री-पुरुष श्यामलाल की स्त्री के रोने पीटने की आवाज सुनकर आ गये। उन्होंने भी अपनी सहानुभूति उसके प्रति प्रकट की।

श्यामलाल के जेल चले जाने के पश्चात निर्मल मुहल्ले के

कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को लेकर श्यामलाल की जमानत के लिये थाने में गया। किंतु थाने में पूरन का इतना प्रभाव था कि उसकी जमानत न हो सकी। श्यामलाल को जेल जाना पड़ा। उस पर मुकद्मा चला। पूरन और उसके दफ्तर के कर्मचारियों ने न्यायालय में पूरन के विरुद्ध दिल खोलकर गवाही दी। श्यामलाल ने भी अपनी सफाई में कई गवाह पेश किये। किन्तु पूरन के मुकाबले में उनकी गवाही नहीं मानी गई। परिणाम यह हुआ कि श्यामलाल को ६ माह की कड़ी कैद और १०००) जुर्माना की सजा हुई। जिस समय न्यायालय द्वारा सजा का हुक्म सुनाया गया श्यामलाल की स्त्री बेहोश होकर गिर पड़ी। निर्मल और उसके साथियों ने उसके ऊपर पानी छिड़का और उसे होश में लाने की बहुत कोशिश की किन्तु सब कोशिशें अकफल रहीं। वह होश में न आ सकी। उसकी हृदय की गति बन्द हो गई।

निर्मल बेचारा अकेला ही रह गया। वह हाईस्कूल का छात्र था। घर में कोई उसे धैर्य बाँधने वाला भी नहीं था। मुहल्ले के कुछ सज्जन व्यक्ति कभी-कभी उसके घर आकर सान्तवना देने का भी प्रयत्न करते। निर्मल कई सप्ताह तक अपनी माँ की मृत्यु और पिता के जेल जाने पर आँसू बहाता रहा। उसके सर पर मुसीबत का पहाड़ टूट रहा था। नगर में लोग पूरन को बुरा भला कहते और गालियाँ देते थे। स्थान-स्थान पर यह चर्चा थी कि १०) पानों की कीमत माँगने पर पूरन ने श्यामलाल को जेल भेजा। नगर के लोगों में पूरन के इस व्यवहार को घृणा की दृष्टि से देखा जारहा था। किन्तु नगर में पूरन का भय और आतंक इतना जबरदस्त था कि किसी का साहस पूरन के विरूद्ध आवाज उठाने का नहीं पड़ रहा था। नगर के धनी मानी सेठ साहूकार पूरन के आतंक से अपनी जुबान भी नहीं खोल सकते थे।

निर्मल कुछ समय तक इसी प्रकार शोक के सागर में डूबा रहा। कुछ दिनों के पश्चात मुहल्ले के लोगों और अपने इष्ट-मित्रों के आग्रह

करने पर उसने स्कूल जाना आरम्भ कर दिया । निर्मल का एक सहपाठी, निर्मल से बहुत सहानुभूति रखता था। वह प्रातःकाल से सायंकाल तक निर्मल के साथ रहता और उसे सान्त्वना देने की पूरी कोशिश करता । छुट्टी के दिन निर्मल को अपने घर पर ले जाता और घन्टों उसे समझाता बुझाता रहता था । निर्मल अपने मित्र की सहानुभूति से बहुत आभारी था । और दिल ही दिल में उसका कृतज्ञ भी था ।

निर्मल की माँ की मृत्यु को अभी पूरे ६ महीने नहीं बीते थे कि दीवाली का त्यौहार आ गया । नगर में सदैव से दीवाली का त्यौहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था । नगर के समीप ही दीवाली का एक बहुत बड़ा मेला लगता था । जहाँ बच्चे बूढ़े स्त्री और पुरुष सभी एकत्रित होते थे । हर वर्ष इस मेले में हजारों रुपये की आतिशबाजी और पटाके आदि की बिक्री हो जाती थी । आतिशबाजी की ध्वनि से मेला गूँज उठता था । जिन नागरिकों के पास बन्दूकें अथवा रिवाल्वर होते थे । वह उन्हें उस दिन आतिशबाजी के प्रकार ही छोड़ते रहते थे । नगर के लोगों में यह प्रथा-सी बन गई थी जिनके पास बन्दूकें हों वह मेले में अवश्य छोड़ेंगे । निर्मल के मित्र के पिता के पास भी बन्दूक का लाइसेन्स था । निर्मल के मित्र ने अपने पिता की बन्दूक और कारतूसों की पेटी को अपने कन्धे में डालकर निर्मल के साथ मेले की ओर प्रस्थान किया । जब निर्मल और उसका साथी मेले में पहुँचे तो सायंकाल हो चुकी थी । आतिशबाजी और बन्दूकों के फायरों की आवाज से सारा मेला गूँज रहा था । निर्मल के मित्र ने भी अपनी बन्दूक से कई फायर किये । और निर्मल से भी एक दो फायर कराये । रात के ६ बजे के लगभग जब मेला समाप्त होने लगा तो निर्मल और इसका मित्र घर की ओर चल दिये । मेले से नगर लगभग १ मील दूर था । बीच में कुछ खेतों के अतिरिक्त और कुछ न था । जैसे ही निर्मल मेले के बाहर पहुचा । उसने देखा कि इन्कमटैक्स आफीसर पूरनलाल अपने हाथों में

खिलौने दबाये हुये जा रहा है। निर्मल ने दबी जुबान से अपने मित्र से पूरन की ओर संकेत करते हुये कहा।

"यह हैं, मेरी माँ का खूनी, और मेरे बाप को जेल भेजने वाला पूरन इन्कमटेक्स आफीसर। आज मैं इससे बदला लेकर रहूँगा।"

"लेकिन तुम इससे कैसे बदला ले सकते हो।"

"मुझे तुम अपनी बन्दूक दे दो। अभी बदला लेता हूँ।"

"लेकिन बन्दूक का फायर होते ही तुम पकड़ जाओगे।"

"नहीं! आज हजारों फायर हो रहे हैं। उनकी आवाजों में मेरे फायर की कौन सुनेगा।

"निर्मल सोच समझ कर कार्य करो।"

"मैं कहता हूँ कि तुम मुझे अपनी बन्दूक दे दो। मैंने बहुत सोच लिया है।" निर्मल ने यह कहकर अपने मित्र के हाथ से बन्दूक ले ली। बन्दूक भरी हुई थी। निर्मल ने अपने मित्र से वहाँ से भाग जाने को कहा। किन्तु उसने निर्मल को अकेला छोड़कर भागने से साफ इन्कार कर दिया। दोनों पूरन के पीछे हो लिये। ज्यों ही पूरन मेले से दूर एक खेत में पहुँचा निर्मल ने उसे आवाज देकर रोका।

"पूरन ठहर जाओ।"

"तुम कौन हो।"

"पूरन ने पीछे मुड़ते हुये देखकर कहा।

"मैं हूँ तुम्हारी मौत का यम दूत।"

यह कहकर निर्मल ने बन्दूक का फायर कर दिया। गोली दनदनाती हुई पूरन की छाती में लगी। और वह हाय करके भूमि पर गिर पड़ा। और फिर उठ न सका। निर्मल का मित्र निर्मल को वहाँ से लेकर भागता

हुआ अपने नगर में आ गया। चारों ओर बन्दूकों और पटाखों की इतनी आवाजें हो रही थीं कि किसी को यह पता भी न लगा कि बन्दूक किसने छोड़ी है। निर्मल जब अपने घर पहुँचा तो उसने खुशी के सैकड़ों चिराग जलाये। कुछ ही देर में निर्मल का मित्र भी उसके घर पहुँच गया। वह रात भर निर्मल के ही घर पर रहा। इसलिये कि निर्मल पर यदि कोई मुसीबत आये तो वह उसकी सहायता कर सके। किन्तु नगर में पूरन के गोली लगने का किसी को कानो कान भी पता न चला। पूरन के घर उसकी स्त्री और बच्चे रात्रि के १० बजे तक बड़ी बेचेनी के साथ की प्रतीक्षा करते रहे। वह सब इस प्रतिक्षा में थे कि पूरन मेले से मिठाई और खिलौने लेकर आये तो लक्ष्मी की पूजा करके दीपक जलाये जायं। किन्तु जब पूरन रात्रि के १० बजे तक मेले से नहीं लौटा तब पूरन के घर वालों को कुछ चिन्ता हुई। उन्होंने नौकर-चारकों को पूरन को ढूँढने के लिये भेजा। इन लोगों ने शहर और मेलों का कोना-कौना छान डाला किन्तु पूरन का कहीं पर पता न लगा।

दीवाली की रात्रि थी। इसलिये नगर का कोना-कोना बिजली के बल्ब और चिरागों की रोशनी से जगमगा रहा था। बच्चे दीवाली की खुशी में पटाखे और आतिशबाजी छोड़ रहे थे। किन्तु पूरन के घर में अभी तक अंधेरा छाया हुआ था। पूरन के स्त्री और बच्चे सभी पूरन की प्रतीक्षा में बेचैन बैठे थे। नगर के कोने-कोने में पूरन को ढूँढा जा रहा था किन्तु कहीं पूरन का पता न चला। रात-भर इन्कमटैक्स विभाग के नौकर-चाकर और चपरासी पूरन को ढूँढ़ने में व्यस्त रहे। पूरन के स्त्री और बच्चों ने भी वह रात्रि बड़ी चिन्ता और बेचेनी के साथ गुजारी। प्रातः होते ही पूपन के गुम होने की सूचना पुलिस को भी दे दी गई। पुलिस ने भी नगर और नगर के चारों ओर पूरन के ढूँढने में काफी दौड़-धूप की। तार और टेलीफोन से इधर-उधर के थानों और चौकियों पर भी सूचना भेज दी गई। पूरन के पता लगाने वाले को

५००) का पुरस्कार देने की घोषणा भी कर दी गई। अभी यह सब दौड़ धूप जारी थी कि किसी ने कोतवाली में आकर सूचना दी कि शहर के बाहर खेत में किसी व्यक्ति की लाश पड़ी है जिसे चील कौवे नोच-नोचकर खा रहे हैं। यह समाचार पाते ही कोतवाल कुछ सिपाहियों समेत तुरन्त उस स्थान पर पहुँच गया। जहाँ लाश पड़ी थी किन्तु लाश को चील और कौओं ने इतना खराब कर दिया था कि उसका पहिचानना असम्भव हो रहा था। पूरन के गुम होने की सूचना तो थी ही, इसलिये पूरन के घर वालों को भी बुलाया गया। किन्तु चील और कौओं ने लाश में मांस जरा भी न छोड़ा था। केवल हड्डियों का ढाँचा पड़ा हुआ था। इसलिये वह भी न पहिचान सके कि यह लाश पूरन की है। पुलिस ने लावारिस समझकर लाश को करीब के कब्रिस्तान में दफन करवा दिया।

निर्मल का पिता श्यामलाल ६ मास का कारावास काटकर जेल से छूटा। निर्मल ने श्यामलाल का स्वागत अपने आँसुओं के फूल चढ़ाकर किया। श्यामलाल और निर्मल दोनों ही एक दूसरे से मिलकर सिसक-सिसक कर रोने लगे। उन्हें निर्मल की माँ की मृत्यु बार-बार आँसू बहाने पर मजबूर कर रही थी। श्यामलाल ने निर्मल को ढ़ाढ़स बंधाया और सान्तवना दी। श्यामलाल की पानों की दूकान फिर शहर में उसी प्रकार चलने लगी जैसे पहिले चलती थी। निर्मल श्यामलाल का हाथ बटाता और कालिज से छुट्टी पाने के पश्चात सुबह शाम दूकान पर बैठता किन्तु पूरन का घर ऊजड़ गया। पूरन की तीन लड़कियाँ जवान विवाह के योग्य हो चुकी थीं लेकिन पूरन का कमाया हुआ पैसा न जाने किधर चला गया कि उनके विवाह के लिये पूरन की स्त्री दूसरों के सामने हाथ फैलाने लगी। पूरन ने जो रुपया छोड़ा था उसको पूरन के लड़कों ने अपने एशो-आराम और शराब एवं कबाब में पानी की तरह बहा दिया। पूरन की स्त्री और बच्चे आज जिस प्रकार नगर की गलियों में फटे हाल

दिखाई देते हैं उसे देखकर लोगों को आश्चर्य होता है और लोग समझ नहीं पाते हैं कि पूरन का कमाया हुआ रुपया, धन और दौलत कहाँ चला गया। नगर में जितने मुँह उतनी ही बातें सुनने में आती हैं। कोई कहता है कि पूरन को किसी ने गोली मार दी, किसी का विचार है कि वह रेल से दबकर मर गया। कुछ कहते हैं कि बेईमानी से रुपया कमाने वाले को गरीबों का श्राप लगजाता है और इसीलिये पूरन के पाप का घड़ा फूट गया। किन्तु यह सब ख्याल और विचार ही है। पूरन कहाँ गया यह कोई नहीं जानता।

——

-। घर की रानी ।-

पंडित भीमसेन का घर भटियार खाना बना हुआ था। सुबह से से शाम तक भीमसेन के वीवी बच्चों और लड़के लड़कियों में वह लड़ाई-झगड़ा और कुहराम मचा रहता था कि मुहल्ले वाले भी तंग आ गये थे। पंडित भीमसेत बेचारे स्वयं तो बहुत सीधे-सादे और नेक व्यक्ति थे किन्तु उनकी स्त्री पंडित भीमसेन और अपने लड़के लड़कियों को वह खरी खोंटी सुनाती कि एक साँस में सेकड़ों गालियों की बौछार कर देती। उनकी स्त्री के संस्कार उनके लड़के लड़कियों पर वैसे ही पड़े थे। उनमें जब आपस में झगड़ा होता तो ऐसा लगता था कि जैसे कि बाजार में कुँजड़ों की लड़ाई हो रही हो। कोई समय ऐसा मुश्किल से ही व्यतीत होता होगा जबकि पं० भीमसेन के यहाँ किसी न किसी से गाली गलौज और लड़ाई झगड़ा न होता हो। सबसे अधिक झगड़ा करने में पं० भीमसेन की लड़की पद्मा ने अपनी माँ से विरासत प्राप्त की थी। वह अपनी माँ से भी ४ कदम आगे थी। न केवल अपने भाई-बहिनों से झगड़ा करती, बल्कि मुहल्ले वालों को भी आड़े हाथों लेती। पं० भीमसेन बड़े ही परेशान और चिन्तित थे। किन्तु वह इतने कमजोर थे कि किसी से कहते नहीं बन बन पड़ता था।

पद्मा की आयु लगभग १७-१८ वर्ष की हो चुकी थी। वह विवाह के योग्य थी। पद्मा को पद्मा की माँ ने इतना सर पर चढ़ा रक्खा था कि घर में किसी की मजाल नहीं थो कि कोई उस से आधी बात भी कहे। मुहल्ले के सब भले आदमी पद्मा और पद्मा की माँ से डरते थे। अगर पं० भीमसेन पद्मा को कभी डाँटने का प्रयत्न करते तो पद्मा की माँ उन्हें आड़े हाथों लेती और वह शोर मचाती कि सारे घर को सर पर

उठा लेती थी। पद्मा के भाई-बहिन भी पद्मा से इतने परेशान थे कि वह दिन-रात भगवान से प्रार्थना करते कि कब पद्मा का विवाह हो और पद्मा इस घर से निकले। पद्मा के विवाह के लिये पं० भीमसेन ने लड़का ढूँढने के लिये बहुत दौड़-धूप की। किन्तु नगर में हर जगह पद्मा की लड़ाई की शोहरत थी। इसलिये कोई भी लड़का पद्मा के लिये नहीं मिल रहा था। अतः पं० भीमसेन ने नगर से दूर पद्मा के लिये पति ढूँढ़ने का प्रयत्न किया। बहुत दौड़-धूप के पश्चात् एक लड़का प्रेमचन्द पद्मा के विवाह के लिये पं० भीमसेन ने ढूँढ निकाला। पं० भीमसेन यह चाहते थे कि शीघ्र से शीघ्र पद्मा के विवाह की महूर्त निश्चित कर दी जाय। अतः पं० भीमसेन ने प्रेमचन्द के पिता से आग्रह करके विवाह की महूर्त शीघ्र से शीघ्र निकलवाने का प्रयत्न किया।

प्रेमचन्द बहुत ही नेक और सज्जन नवयुवक था। वह एक साधारण परिवार का लड़का था। और किसी सरकारी दफ्तर में क्लर्क था। प्रेमचन्द अपने दफ्तर और मुहल्ले में अपनी सज्जनता नेकी और सहानुभूति के लिये प्रसिद्ध था। प्रेमचन्द के माता-पिता पं० भीमसेन से बातें करके इस परिणाम पर पहुँचे कि पं० भीमसेन की लड़की ऐसी ही सज्जन और नेक होगी जैसे पं० भीमसेन। अतः उन्होंने प्रेमचन्द के विवाह अनुमति पद्मा से दी।

पद्मा और प्रेमचन्द के विवाह की महूर्त निश्चित हो गई। पद्मा की माँ ने पद्मा के विवाह की तैयारियाँ बड़े जोर-शोर के साथ प्रारम्भ कर दी। वह विवाह के प्रबन्ध में जरा-जरा सी त्रुटियों पर पं० भीमसेन को डाँटती-फटकारती और झगड़ा करती रहती थी। पं० भीमसेन ने बड़े धैर्य के साथ जब पद्मा डोली में बैठने लगी तो पद्मा की माँ ने पद्मा के सर पर हाथ रखते हुये कहा।

"पद्मा डरने की बात नहीं। ससुराल में इसी प्रकार निडर बनकर

रहना जैसे यहाँ रही है।" यह कहकर पदमा की माँ ने उसे डोली में विठा दिया। पद्मा की माँ ने पद्मा को विदा करते समय प्रेमचन्द से भी यह शब्द कहे।

"प्रेमचन्द ! मैंने अपनी लड़की पद्मा को बड़े लाड़-प्यार से पाला है। तुम इसे घर की रानी बनाकर रखना।"

प्रेमचन्द बेचारा क्या कह सकता था। वह चुप रहा। पद्मा जब भीमसेन के घर से चली गई तो पं० भीमसेन के लड़के और लड़कियाँ सब प्रसन्न थे कि उनका घर लड़ाई झगड़े से आधा पाक हुआ। उधर पद्मा जब अपनी ससुराल पहुँची तो उसने प्रेमचन्द के सब भाई-बहिनों पर अपना रोब जमाने का प्रयत्न किया किन्तु उसने यह देखा कि प्रेमचन्द के सब भाई-बहिन आपस में बड़े प्रेम और सद्भावना के साथ रह रहे हैं। सुबह से सायंकाल तक प्रेमचन्द के भाई-बहिन भैया-भैया कहते-कहते नहीं थकते थे। प्रेमचन्द भी उनसे बहुत प्रेम करता था। और उसका व्यवहार अपने भाई-बहिनों के प्रति बड़ा ही सहानुभूतिपूर्ण और उदार था। प्रेमचन्द के घर का नक्शा पद्मा के घर के वातावरण से बिल्कुल ही उल्टा था। पद्मा भला यह कहाँ सहन कर सकती थी कि उसके पति के चारों ओर उसके भाई-बहिन उसे घेरे रहे। वह द्वेष की आग में जलने लगी। उसके बचपन के संस्कारों ने उसके हृदय में इस प्रकार के वातावरण के विरुद्ध ईर्ष्या की ज्वाला जला दी। उसे ऐसा लगा जैसी कि वह आसमान से उठाकर पृथ्वी पर ढकेल दी गई हो। वह तो प्रेमचन्द के घर यह विचार लेकर आई थी कि वह अपने पति को लेकर घर वालों से अलग रहेगी किन्तु वहाँ तो वातावरण ही दूसरा था। पद्मा के सास-ससुर भी पदमा को हाथों हांथ लेते और सायंकाल को सब लोग मिलकर हँसी-खुशी की बातें करते थे। सब एक साथ खाना खाते और एक दूसरे के प्रति सद्भावनायें भी रखते। जब किसी दिन प्रेम सिनेमा या थियेटर जाता तो सब भाई-बहिन एवं माता-पिता को पद्मा

के साथ ले जाता। पद्मा को भला यह कहाँ गवारा था। वह तो यह चाहती थी कि प्रेम केवल उसी को लेकर जाये और किसी को भी अपने साथ न ले जाय। वह यह भी चाहती थी कि प्रेम सब भाई-बहिनों को ठुकरा कर उससे अकेले कोठरी में बैठा बातें करता रहे। पद्मा कुछ दिनों तक तो चुप रही। वह खून का सा घूँट पीकर प्रेम और प्रेम के भाई-बहिनों का घुल-मिलकर रहना सहन करती रही। किन्तु आखिर वह अपने असली रूप में आगई। वह जब कभी भी प्रेम को अपने भाई-बहिनों और माता-पिता के साथ उठते-बैठते और हँसते-बोलते देखती तो द्वेष की भावनाओं से उत्तेजित होकर वहाँ से उठकर अलग कमरे में चली जाती और रोनी सूरत बनाकर बैठी रहती। वह दिल ही दिल में कुढ़ती रहती और आग बबूला होती रहती। प्रेम इतना नेक और सज्जन लड़का था कि वह अपने भाई-बहिन के सामने पद्मा से बात करने में झेंपता। किन्तु पद्मा इतनी निर्लज्ज थी कि अक्सर प्रेम के माँ-बाप के सामने ही प्रेम का हाथ पकड़कर उससे अपनी बात कहने को खड़ी हो जाती। प्रेम बेचारा झेंपता रहता था।

विवाह के पश्चात् पद्मा जब दूसरी बार अपनी ससुराल गई तो वह अपने हृदय में यह ठानकर गई थी कि वह इस बार अवश्य ही प्रेम को उनके मां-बाप और भाई बहिनों से अलग करके छोड़ेगी और यदि प्रेम ने ऐसा न किया तो वह उस को घर में रहना दूभर कर देगी। अतः ससुराल पहुँचने पर कुछ ही दिनों पश्चात उसने धीरे-धीरे प्रेम को अपनी ओर आकर्षित करना आरम्भ किया। साथ ही प्रेम के मां-बाप और भाई बहिनों से उपेक्षा का व्यवहार भी उसने आरम्भ कर दिया। उसने एक दिन अवसर पाकर प्रेम से स्पष्ट शब्दों में कहा।

"आपको याद है कि मेरी माँ ने मेरे विवाह के समय आप से क्या वचन माँगा था।"

"तुम्हीं बताओ क्या बचन माँगा था।"

"अच्छा आप इतनी जल्दी भूल गये।"

"यदि मैं भूल भी गया हूँ तो तुम मुझे याद दिला दो!"

"आपको याद नहीं कि मेरी माँ ने कहा था कि पद्मा को रानी बनाकर रखना।"

"पद्मा! क्या तुम इस घर की रानी नहीं हो। क्या तुम्हें यहाँ कोई तकलीफ है"

"आप मेरी तकलीफ का अन्दाजा नहीं लगा सकते!"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा!"

"आप मेरा मतलब क्यों समझने लगे!"

"पद्मा! आखिर तुम कहना क्या चाहती हो।"

"मैं जो कहना चाहती हूँ, उसे आप कान खोलकर सुन लीजिये। मैं इस घर में किसी के साथ रहना पसन्द नहीं करती हूँ।"

"क्या मतलब!"

"मतलब यह है कि मैं आप के माँ-बाप और भाई-बहिनों के साथ एक दिन भी रहना नहीं चाहती।"

"क्यों!"

"इसलिये कि मुझे उन सबकी तावेदारी स्वीकार नहीं।"

"किन्तु उन्होंने तो आजतक तुमसे आधी बात नहीं कही।"

"मुझे उनकी सूरत से नफरत है।"

"पद्मा! मुँह संभाल कर बोलो। अगर तुम्हें उनसे नफरत है तो मुझे तुमसे नफरत है।" प्रेम ने क्रोध में भर कर कहा।

"अच्छा अब मैं समझ गई कि आप अपने माँ-बाप के गुलाम हैं।"

"हाँ मैं गुलाम हूँ! तुम्हें जो कुछ करना हो कर लो।"

"आप नहीं समझते कि मैं क्या कर सकती हूँ। मैं इस घर को नर्क बना सकती हूँ। और देखना अब इस घर में वह कुहराम मचेगा कि आपकी अक्ल ठिकानें आजायेगी और आप को मालूम हो जायेगा कि पद्मा किस माँ की लड़की है।"

"तो क्या तुम्हारी माँ ने तुम्हें ऐसा ही सिखाया था ?"

"मेरी माँ ने मुझे क्या सिखाया है यह तो आप को पता लगेगा।" यह कहकर पद्मा धाड़े मार-मार कर रोने लगी। पद्मा के रोने की आवाज सुनकर प्रेम के माँ-बाप और भाई-बहिन सब दौड़े हुये आये। उन्होंने पद्मा को चुप करने का प्रयत्न किया। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर यह माजारा क्या है। वह यह समझे कि शायद पद्मा और प्रेम में कुछ झगड़ा हो गया है। प्रेम चिन्तित था। वह इसी चिन्ता में मूर्ति के प्रकार चुप खड़ा हुआ था। पद्मा की बातों ने उसके हृदय को बहुत बड़ा आघात पहुँचाया था। उसे बड़ी मानसिक वेदना हो रही थी। प्रेम के माँ-बाप बराबर प्रेम से पद्मा के रोने का कारण पूँछ रहे थे, किन्तु प्रेम को कुछ कहते नहीं बन पड़ रहा था। वह पद्मा की बातों को अपने माँ-बाप और भाई-बहिनों से कहकर उनके हृदयों को चोट नहीं पहुँचाना चाहता था। इसलिये वह बिना कुछ कहे सुनें वहाँ से चला गया।

प्रेम एक नेक और सहनशील स्वभाव का व्यक्ति था। उसने इस बात का भरसक प्रयत्न किया कि पद्मा किसी प्रकार से सीधे रास्ते पर आ जाये। किन्तु मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की, और पद्मा खरी-खोटी सुनाने में अपनी जबान को और भी अधिक तीव्र करती गई। धीरे-धीरे उसने प्रेम के माँ-बाप और भाई-बहिनों से भी झगड़ा करना आरम्भ कर दिया। अब सब समझ गये कि प्रेम और पद्मा के झगड़े का मतलब यह है कि पद्मा उन सब से अलग रहना चाहती है। उन्होंने प्रेम को

समझाना-बुझाना आरम्भ किया और उससे आग्रह किया कि वह पद्मा को लेकर अलग रहने लगे किन्तु प्रेम तो कभी स्वप्न में भी अपने माँ-बाप और भाई-बहिनों से अलग रहने की नहीं सोचता था। वह चिन्ता के सागर में डूब गया। उसे पद्मा से इतनी घृणा हो चली थी कि पद्मा से बात करने को उसका दिल नहीं चाहता था। इसलिये वह बहुत कम घर में रहता था। सुबह और सायंकाल दफ्तर जाने और आने से पूर्व भी अपने घर के बाहर किसी साथी या पड़ोसी के यहाँ चला जाता और वहीं अपना ग़म गलत करता रहता था। प्रेम के घर वाले सब समझते थे कि प्रेम पद्मा के झगड़े के कारण घर से बाहर रहता है। प्रेम के माँ-बाप और भाई-बहिन सभी को बड़ा दुख था किन्तु गरम दूध न उगलने का और न पीने का। बेचारे दिल ही दिल में घुटकर रह जाते थे। प्रेम के माँ-बाप न जानें कितने वर्षों से प्रेम के विवाह के लिये उत्सुक थे। वह प्रेम की बहू से न जानें कितनी-कितनी आशायें लगाये बैठे हुये थे। उनकी आशाओं के किले को पद्मा ने आते ही ढा दिया। प्रेम का घर जो कभी हंसी-खुशी और नई उमंगों का केन्द्र बना हुआ था, वह निराशा और चिन्ता के सागर में डूब गया। प्रेम के माँ-बाप ने पद्मा को समझाने-बुझाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया, किन्तु पद्मा तो अपनी माँ से ऐसे संस्कार लेकर आई थी कि उसकी समझ में कुछ आ ही नहीं सकता था। पद्मा की ईर्ष्या और द्वेष की सीमा तो यहाँ तक पहुँच गई थी कि यदि प्रेम अपने किसी भाई-बहिन को एक दो रुपये भी दे देता तो पद्मा जलकर राख हो जाती, और तुरन्त झगड़ा करने पर उतारू हो जाती। परिणाम यह हुआ कि प्रेम पद्मा के सामने अपने किसी भाई-बहिन को कुछ भी देने का साहस न करता था। पद्मा के कुहराम के डर के कारण उन्हें जो कुछ भी देता, पद्मा से छिपाकर देता। पद्मा यह भी चाहती थी कि उसका पति जो कुछ भी वेतन लाये वह उसी के हाथ पर रक्खे। इन सब बातों को देखकर प्रेम यह समझ चुका था कि पद्मा

जिस घर से आई है उस घर के संस्कारों ने उस पर गहरी छाप लगा दी है। इसलिये उस संस्कार से पद्मा को आसानी से छुड़ाया नहीं जा सकता।

एक दो बार प्रेम पद्मा को लेकर जब ससुराल गया तो पदमा की माँ ने प्रेम को आड़े हाथों लिया और न जाने प्रेम के माँ-बाप को कितनी खरी खोटी सुनाई। पद्मा की माँ की बातों को सुनकर प्रेम का यह विश्वास और भी दृढ़ होगया कि पदमा पर उसकी माँ के संस्कारों का प्रभाव है। उसने एक दो बार जाने के बाद फिर अपनी ससुराल में जाना पसन्द न किया।

प्रेम के माता-पिता पद्मा को दिन-प्रतिदिन के झगड़ों और तानों से तंग आकर प्रेम को यही परामर्श देते कि वह घर का क्लेश समाप्त करने के लिये उनसे अलग रहे। अतः प्रेम अपने माता पिता और भाई-बहिनों को पद्मा के झगड़े से बचाने के लिये अलग रहने पर तैयार होगया और वह पद्मा को लेकर एक दूसरे मकान में चला गया। पद्मा जिस दिन अपने सास-ससुर से अलग होकर प्रेम के साथ दूसरे मकान में गई उसे ऐसा लगा जैसे कि दुनिया की सब दौलत उसे मिल गई हो। बहुत समय के बाद उसकी मनोकामना पूर्ण हुई। किन्तु प्रेम अपने माँ-बाप से जिस दिन अलग होकर आया उसे ऐसा लगा जैसे कि उसकी दुनिया ही उजड़ गई हो। पद्मा की शक्ल उसकी निगाहों में डायन बनकर घूमने लगी। उसे पद्मा से घृणा हो गई किन्तु फिर भी वह अपनी नेकी और शराफत के कारण पदमा को अपने साथ रक्खे ही रहा। पद्मा प्रेम को प्रसन्न करने के लिये दिन-रात प्रेम-पूर्वक बातें करने का प्रयत्न करती, किन्तु प्रेम पर उसकी किसी बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। उसने कई बार सोचा कि वह पद्मा को छोड़ दे, और उसे उसके माँ-बाप के पास भेज दे, किन्तु समाज के डर के कारण वह ऐसा न कर सका।

कुछ दिनों तक तो पद्मा प्रेम से नम्रतापूर्वक बात करती रही किन्तु उसके जो संस्कार पड़ गये थे वह कैसे छूटते। उसने फिर वही पुराना ढंग आरम्भ कर दिया और अब वह जरा-जरा सी बातों पर प्रेम को आड़े हाथों लेती और खरी-खोटी बातें सुनाती। कभी-कभी तो मुहल्ले वालों के सामने ही वह प्रेम का अपमान करने लगती। प्रेम बेचारा अपनी सज्जनता और नेकी के कारण इन सब बातों को सहन करता रहता था। प्रेम चिन्ताओं में घुलने लगा और खोया हुआ सा रहने लगा। पद्मा अपने पति प्रेम की उदासीनता पर दिल ही दिल में घुटती रहती थी। कभी-कभी क्रोध में बकनें भी लगती थी। वह अब भी यह नहीं चाहती थी कि प्रेम का कोई भाई-बहिन तथा माता या पिता उसके घर आये। यदि अकस्मात से उनमें से कोई कभी प्रेम की कुशल पूछने प्रेम के घर आ जाता तो पद्मा उनको उपेक्षित दृष्टि से देखती। उनके आने जाने पर मुँह फुलाकर बैठ जाती। परिणाम यह हुआ कि प्रेम के घर वालों ने प्रेम के घर आना बिल्कुल ही बन्द कर दिया। हाँ प्रेम अवश्य दूसरे-तीसरे दिन अपने माँ-बाप के घर जाकर उनसे मिल आता था, किन्तु जब पद्मा को पता चलता तो वह प्रेम को उल्टी सीधी बातें कह कर उसके दिल को चोट पहुँचाती।

अब पद्मा ने एक और त्रिया-चरित्र करना प्रारम्भ किया और वह यह कि वह अपने को कभी सर में दर्द होने का, कभी पेट में दर्द होने का बहाना बनाकर प्रेम के दफ्तर से आने के समय चारपाई पर लेट जाती, और जोर-जोर से कराहने लगती थी। प्रेम बेचारा दफ्तर से आने के बाद चूल्हा फूँकता और अपने तथा पद्मा के लिये खाना बनाता। पद्मा को इस बात का तनिक भी ध्यान नहीं था कि प्रेम सुबह से शाम तक दफ्तर में सिर खिपाता है और दोनों समय का खाना बनाकर रखता है। प्रेम बेचारा दिन-रात कुढ़ता ही रहता था। उसे पद्मा से छुटकारा पाने का कोई रास्ता दिखाई न पड़ा। फिर सोने पर सोहागा यह था कि

पद्मा जब कभी अपने माँ के घर जाती तो उसकी माँ उसे और भी अधिक बहका और बर गलाकर भेजती थी।

कुछ ही दिनों बाद प्रेम के भाई और बहिनों के विवाह भी हो गये। किन्तु उनमें से कोई भी ऐसी बहू किसी भाई की नहीं थी जो पद्मा के प्रकार का स्वभाव रखती हो। वह सब प्रेम के माता-पिता और भाई-बहिनों की सेवा करने में ही अपना सौभाग्य समझती थी। जो दूषित वातावरण पद्मा ने प्रेम के माँ-बाप के घर में पैदा किया था, प्रेम के इन भाईयों की बहुओं ने उसको कुछ ही दिनों में दूर कर दिया। अब वह घर फिर हंसी-खुशी के वातावरण में बदल गया। प्रेम भी जब कभी अपने माँ-बाप के घर जाता तो उसके छोटे भाइयों की स्त्रियाँ उसकी बड़ी आवभगत करती, और आदर-सत्कार से उसको विदा करती। प्रेम के भाइयों के अब कई-कई वच्चे हो गये थे। वे सब बच्चे प्रेम के आने पर ताऊ "आ गये" यह कहकर उसे लिपट जाते। किन्तु यदि वही बच्चे कभी प्रेम के घर आ जाते तो पद्मा उन्हें देखकर दिल ही दिल में जलती रहती थी, और भगवान को कोसती कि उसने सब को बच्चे दिये हैं मगर उसकी गोद अब तक खाली है।

पद्मा को अब दिन-रात यह चिन्ता रहने लगी कि उसके कोई सन्तान नहीं है। वह इसी चिन्ता में दिन-रात बेचैन रहने लगी। उसने सन्तान के लिये कितने ही पूजा-पाठ कराये और जप किये और महीनों मन्दिर में जाकर माथा टेका, किन्तु फिर भी उसके कोई सन्तान न हुई। प्रेम पद्मा की पूजा-पाट को ढोंग समझकर टाल देता था। वह समझता था कि पद्मा जिस प्रकार सबको धोका देती है, भगवान को भी धोका दे रही है। प्रेम के माँ-बाप की भी यह हार्दिक इच्छा थी कि पद्मा के कोई सन्तान हो जाये। वह समझते थे कि शायद सन्तान होने पर ही पद्मा को कुछ बुद्धि आजाये, और वह प्रेम के साथ सदव्यवहार करने लगे। उन्होंने भी कई बार मन्दिरों में जाकर पद्मा के लिये सन्तान

की प्रार्थना की। आखिर बिल्ली के भागों छींका टूटा और पद्मा के एक लड़की पैदा हुई। पद्मा तो लड़का होने का स्वप्न देख रही थी, किन्तु फिर भी अपने दिल को समझा लिया कि लड़का न सही लड़की ही के पति को वह अपने घर जमाई के प्रकार रख लेगी। इस तरह वह अपने घर को आबाद कर लेगी। पद्मा ने बड़े लाड़ प्यार से अपनी लड़की को पाला और इसी लाड़ प्यार के कारण उसका नाम लड़ैती रक्खा।

प्रेम के माँ-बाप को भी यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि प्रेम के लड़की हुई है। वह दोनों प्रेम के घर पद्मा को वधाई देने आये। पद्मा का दुर्व्यवहार होते हुये भी लड़ैती के लिये अच्छे-अच्छे कपड़े और खिलौनों की भेंट लाये। लड़ैती के पैदा होने के पश्चात भी पद्मा के हृदय में द्वेष की आग नहीं बुझीं। वह जब प्रेम के अन्य भाईयों के लड़कों को हँसता-खेलता देखतीं तो उसके हृदय में द्वेष और ईर्ष्या की ज्वाला जलने लगती। और कभी वह अपनी तकदीर को कोसने लगती कभी भगवान को भला-बुरा कहती कि उसने प्रेम के सब भाईयों को लड़का दिये हैं किन्तु उसे लड़की। फिर भी लड़ैती के लाड़-प्यार से दिनभर पद्मा को अवकाश नहीं मिलता था। इससे प्रेम को कुछ लाभ हुआ और वह यह कि लड़ैती के लाड़-प्यार में दिनभर व्यस्त रहने के कारण पद्मा को प्रेम के लिये खरी-खोटी सुनाने और झगड़ा करने का कम अवसर मिलता था। किन्तु जब भी अवसर मिलता वह प्रेम को रियायत नहीं करती थी। वह अब भी अपने घर में प्रेम के किसी भाई-बहिन या माँ-बाप का आना पसन्द नहीं करती थी। कभी-कभी पद्मा की माँ और पद्मा के पिता भीमसेन पद्मा के यहाँ आ जाते और जब उसके पिता पद्मा की आदत को देखते तो दिल ही दिल में कुढ़ते रहते थे। किन्तु उनमें इतना साहस कहाँ था कि वह पद्मा की माँ के सामने पद्मा से आधी बात भी कह सकें।

लड़ैती के उत्पन्न होने के कुछ ही वर्षों बाद पद्मा के पिता पं०

भीमसेन का स्वर्गवास होगया। भीमसेन के स्वर्गवास होने के एक वर्ष के भीतर ही पद्मा की माँ की मृत्यु हो गई। पद्मा को अपने पिता की मृत्यु का इतना दुख नहीं हुआ जितना कि अपनी माँ की मृत्यु का। वह जब कभी भी अपने इस दुःख को अपने किसी मुहल्ले की सहेली से जिक्र करती तो यहाँ तक कह जाती थी कि उसके माँ-बाप को भगवान ने उठा लिया, किन्तु प्रेम के माँ-बाप न जानें कहाँ से काले कौवे खाकर आये हैं कि उनमें से कोई नहीं मरता। उसकी सहेलियाँ इन बातों को सुनकर अपने घर जा-जाकर पद्मा की खूब हंसी मजाक बनाती, और सारे मुहल्ले में उसकी बदनामी करती थीं किन्तु पद्मा फिर भी अपनी बातों से बाज नहीं आती थी।

लड़ेती को पद्मा ने इतने लाड़-प्यार से पाला कि वह कभी प्रेम के उसे डाँटने-फटकारने की बात सहन नहीं कर सकती थी। प्रेम भी पद्मा और लड़ेती के बीच में कभी दखल नहीं देता था। पद्मा ने लड़ेती की भी आदतें ऐसी ही डाल दी, जैसी उसकी आदतें थीं। लड़ेती अब जवान हो चुकी थी और विवाह के योग्य होगई थी। पद्मा यह चाहती थी कि लड़ेती के लिये कोई ऐसा वर ढूँढा जाय जिसके माँ-बाप तथा भाई और बहिन में से कोई न हो, ताकि वह उसके घर में घर की मालिकन बनकर रह सके। प्रेम इसके विपरीत लड़ेती के लिये भरपूर घर चाहता था। लेकिन पद्मा की इच्छा के विरूद्ध वह कुछ भी नहीं कर सकता था। पद्मा ने प्रेम को अपनी इच्छानुसार लड़ेती के लिए लड़का ढूँढने के लिये आदेश दिया, और लड़ेती की इच्छानुसार प्रेम ने एक ऐसा ही लड़का ढूँढ निकाला जैसा पद्मा चाहती थी।

अभी लड़ेती के विवाह की महूर्त निश्चित नहीं हो पाई थी कि अकस्मात प्रेम के माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। प्रेम को अपने माँ-बाप की मृत्यु पर हार्दिक वेदना और दुःख था। वह महीनों उनके शोक में खोया-खोया सा रहा, किन्तु पद्मा को उनकी मृत्यु से प्रसन्नता हुई।

वह समझती थी कि उनसे छुटकारा मिला और साथ ही उनकी सम्पत्ति में उसे प्रेम के अन्य भाइयों के बराबर का हिस्सा मिलेगा।

प्रेम अपने माँ-बाप की मृत्यु से बहुत दुखी था। वह यह भी नहीं चाहता था कि माँ-बाप की मृत्यु के एक साल के भीतर लड़ैती का विवाह हो, क्योंकि हिन्दू धर्म के अनुसार एक वर्ष तक मरने वाले का शोक मनाया जाता है, किन्तु पद्मा भला कब मानने वाली थी। उसने प्रेम की एक न चलने दी। और शीघ्र से शीघ्र लड़ैती के विवाह की महूर्त निश्चित करदी। विवाह के पश्चात पद्मा ने लड़ैती के पति को अपने ही घर पर घर जमाई बनाकर रख लिया। लड़ैती का पति बड़ा ही लालची और बुद्धू था। वह चाहता था कब उसके सास-ससुर की आँखें बन्द हों, कब उसे उनकी सम्पत्ति पर पूरा अधिकार जमाने का अवसर मिले। वह पद्मा और प्रेम को अपने और लड़ैती के बीच में एक रोड़ा समझने लगा।

लड़ैती के विवाह को अभी पूरे पाँच वर्ष भी नहीं हुये थे कि अकस्मात प्रेम बीमार पड़ा। कुछ सप्ताह बीमार रहने के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गयी। पद्मा को अब लड़ैती और लड़ैती के पति को छोड़कर और कोई सहारा न था। उसने पद्मा को समझा-बुझाकर उसकी सारी सम्पत्ति और मकान अपने नाम लिखवा लिया। प्रेम की मृत्यु के पश्चात् प्रेम के सम्बन्धी और इष्ट-मित्रों ने पद्मा के दुर्व्यवहार के कारण पद्मा के घर आना तो अलग रहा उससे बात करना ही छोड़ दी। प्रेम के इष्ट-मित्र और भाई, प्रेम की मृत्यु का कारण भी पद्मा का दुर्व्यवहार समझते थे। इसलिये वह पद्मा की शक्ल देखना भी गवारा नहीं करते थे।

अभी प्रेम की मृत्यु को एक वर्ष भी न बीता था कि अकस्मात लड़ैती बीमार पड़ गई और बहुत कुछ इलाज होने के पश्चात भी वह अच्छी नहीं हो सकी। उसकी मृत्यु हो गई। पद्मा को लड़ैती के निधन का हार्दिक दुख हुआ। वह कई सप्ताह तक रोती-पीटती और

हाय-हाय करती रही। कुछ दिनों तक तो लड़ेती का पति चुप रहा, किन्तु उसने अपने दूसरे विवाह का प्रबन्ध कर लिया। वह समझता था कि दूसरे विवाह करने से पहिले ही पद्मा को घर से निकाल दे। उसने पद्मा को घर से निकालने के लिये नाना प्रकार की योजनायें बनाई, फिर भी पद्मा हर प्रकार का अपमान सहते हुये घर में ही पड़ी रही। आखिर लड़ेती के पति ने एक दिन पद्मा से स्पष्ट शब्दों में निकल जाने को कह दिया। पद्मा ने उसके बहुत कुछ हाथ जोड़े, खुशामद की और उससे प्रार्थना की कि वह उसे घर की नौकरानी समझकर ही रहने दे, किन्तु लड़ेती के पति ने उसकी एक न सुनी और धक्के देकर उसे घर से बाहर कर दिया।

पद्मा बुढ़ापे में बेवश और लाचार कई घरों की नौकरानी बनकर काम कर रही है। अब उसका शरीर थक चुका है। वह और कुछ काम काज करने के योग्य नहीं रही है। इसलिये मुहल्ले के एक व्यक्ति के यहाँ बर्तन धोती हुई दिखाई देती है। मुहल्ले के लोग पद्मा की दशा देखकर लड़ेती के पति को लानत मालमत करने लगते हैं। किन्तु जिन्होंने पद्मा की जवानी का जमाना देखा है उनके मुंह से यही शब्द निकलते हैं कि भगवान के यहाँ देर है अन्धेर नहीं।

———

दीवाली की रात

राजपुर शहर में सदैव से दीवाली का त्योहार बड़ी सज-धज के साथ मनाया जाता है। यहाँ की दीवाली आस-पास के नगरों और गाँवों प्रसिद्ध है। दीवाली देखने कितने ही लोग इधर-उधर से राजपुर शहर में आते हैं। इस वर्ष भी नगर में दीवाली मनाने की तैयरी बड़े जोर शोर से हुई। नगर में नगर की बाजारों में रंग-बिरंगे बिजली के बल्व गुब्बारे कंडील लगाये गये और शहर बिजली और चिरागों की रोशनी से जगमगा उठा।

श्याम की बूढ़ी माँ भी आज दिन भर दीवली मनाने के लिये मेहनत मजदूरी ही करती रही किन्तु फिर भी तमाम दिन मजदूरी करने के पश्चात उसे केवल बारह आने पैसे मिले। वह जब सेठ जी के यहाँ से कमाकर अपने घर लौटी तो रास्ते में बाजार होती हुई आई। उसने पाँच मिट्टी के दिये और कुछ पैसों का सरसों का तेल इन दियों को जलाने को खरीदा। वह चाहती थी कि बाजार से श्याम को कोई खिलौना और कुछ मिठाई ले चले किन्तु पैसों को बार-बार गिनती थी और फिर ठिठक कर रह जाती थी। उसे उन्हीं पैसों में सायंकाल को श्याम के खाने के लिये आटा दाल भी खरीदना था। आटा दाल लेने के पश्चात उसके पास कुछ भी न बचा, अतः बेचारी निराशा और उदासी की दशा में सीधी घर चली आई। श्याम की आयु १० वर्ष से अधिक न थी। वह जब बहुत छोटा था, उसी समय उसके पिता का स्वर्गवास होगया था। अब केवल उसकी बूढ़ी माँ को छोड़कर और कोई न था। श्याम की माँ के पास कोई और सहारा न था केवल मेहनत मजदूरी करके अपना और श्याम का पेट

पालती । श्याम की माँ दिन भर मुहल्ले के एक दो सेठ साहूकारों के यहाँ मेहनत मजदूरी करती रहती थी और सायंकाल जितने पैसे भी उसे मिल जाते उन्हीं में गुजर-बसर कर लेती । कभी-कभी तो यहाँ तक नौबत आ जाती थी कि जब दिन में श्याम की माँ को कोई मेहनत मजदूरी का काम नहीं मिलता था तो उसके घर चूल्हा नहीं जलता था । वह ज्यों-त्यों करके सुबह की रक्खी हुई एक दो रोटी श्याम को खिला देती थी और बेचारी स्वयं मुँह बाँधे भूखी प्यासी सो रहती ।

श्याम छोटा था किन्तु बड़ा ही होनहार और समझदार लड़का था । वह अपने मुहल्ले के एक स्कूल में पढ़ने जाता था । स्कूल के अध्यापक महोदय ने श्याम की गरीबी पर सहानुभूति प्रकट करते हुये उसकी फीस माफ कर रक्खी थी । और वह इधर-उधर से चन्दा करके किताबें भी खरीदवा देता था । श्याम खूब दिल लगाकर पढ़ता था और कभी अपने अध्यापक की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता था । वह समझदार भी इतना था कि अपनी बूढ़ी माँ से स्कूल के सम्बन्ध में किसी किताब या किसी वस्तु की माँग नही करता था । यहाँ तक कि जिस दिन खाना नहीं बनता वह भूखा प्यासा ही बिना कुछ कहे सुने स्कूल चला जाता और अक्सर स्कूल से लौटकर जब उसकी माँ कहीं से मेहनत मजदूरी करके आटा दाल मोल लाती, और खाना बनाती तब खाना खाता । बहुधा तो ऐसा भी हुआ जब किसी दिन श्याम बिना कुछ खाये पिये स्कूल चला गया तो उसकी माँ ने मुहल्ले के किसी व्यक्ति के घर से आटा दाल लेकर खाना बनाया और श्याम को स्कूल में इण्टरवेल के समय जाकर खिलाया । वह तो केवल एक ही उम्मीद पर जीवित थी कि श्याम बड़ा होकर उसकी गरीबी का सहारा बनेगा ।

दीवाली की शाम से ही श्याम अपनी माँ के घर आने की प्रतीक्षा कर रहा था । उसके घर के दोनों ओर बड़े-बड़े लोगों के मकान थे, जहाँ

सैकडों की संख्या में बिजली के बल्व और चिराग जगमगा रहे थे आतिश-बाजी छूट रही थी । खुशियाँ मनाते हुये बच्चे एक दूसरे को मिटाईयाँ पेश कर रहे थे किन्तु श्याम के घर अभी तक अन्धेरा पड़ा था । श्याम अपनी माँ के इन्तजार में बैठा ही हुआ था कि इतने में ही उसकी माँ आ गई । श्याम माँ को देखते ही माँ-माँ कहकर उसे लिपट गया । माँ के हाथ में जो कुछ भी समान था वह श्याम ने लेकर एक ओर रख दिया । श्याम की माँ जो पाँच दिये बाजार से लाई थी उसने उनमें तेल डालकर जलाना आरम्भ कर दिया और स्वयं श्याम के लिये खाना बनाने लगी । घर में पाँच दियों की रोशनी मालूम ही क्या हो सकती थी जब कि उसके मकान के दोनों ओर रोशनी ही रोशनी थी । श्याम की माँ मुहल्ले को जगमगाता हुआ देखकर दिल ही दिल में अपनी गरीबी और लाचारी पर अफसोस कर रही थी । उसने बाहर निकलकर देखा कि मुहल्ले के बच्चे अच्छे-अच्छे कपड़े पहने हुये मिठाईयाँ लिये जा रहे हैं और खुशियाँ मना रहे हैं। उसका दिल श्याम को देखकर कई बार भर आया किन्तु उसने बड़ी मुश्किल से अपने दिल पर पत्थर रखकर अपने को सान्त्वना दी ।

श्याम की माँ उस दिन अपनी गरीबी और लाचारी पर बहुत देर तक चिन्ता में डूबी रही । अक्सर उसकी आँखों से आँसू भी टपक पड़ते थे जिन्हें वह श्याम से छिपाकर अपने आँचल से पोंछ लेती थी । श्याम अपनी छत पर खड़ा हुआ मुहल्ले में होने वाली दीवाली का दृश्य देख रहा था । उसके घर के चारों ओर मकान तरह-तरह के आराइशों और बन्दरवारीयों से सजे हुये थे । वह देख रहा था कि मुहल्ले के बच्चे अच्छे से अच्छे कपड़े पहने हुये खुशी से इधर-उधर चल फिर रहे हैं । और एक दूसरे के घर मिठाईयाँ बाँटी जा रही थी किन्तु उसके घर किसी एक व्यक्ति ने भी मिठाई का एक अदद भी भेजने की कोशिश नहीं की । वह बच्चा था किन्तु इतनी समझ रखता था कि लोग गरीब आदमियों को कस प्रकार उपेक्षा करते हैं । इसलिये वह चुप था ।

श्याम जब छत से नीचे उतरा तब तक उसके घर के पाँचों दिये बुझ चुके थे। अब घर में अन्धेरा ही अन्धेरा था किन्तु मुहल्ले में अब तक बिजली के बल्ब और चिराग जगमगा रहे थे। श्याम ने अपनी माँ की ओर देखकर कहा—

"माँ! अपने सब चिराग बुझ गये।"

"हाँ बेटा, इनमें जितना तेल था खत्म होगया इसीलिये यह बुझ गये।" माँ ने भरी हुई आवाज में कहा—

"माँ! तो क्या इतना ही तेल बाजार से लाई थीं।"

"हाँ बेटा, आज केवल बारह आने की ही मजदूरी हुई, उसमें आटे दाल को छोड़कर इतने ही पैसे बचे थे।"

"माँ तो आज खाने-पीने का सामान न लाती और दिये और तेल ले आती तो हम एक दिन भूखे रहकर ही दीवाली मना सकते थे।

श्याम की माँ श्याम के इन शब्दों को सुनकर कलेजा पकड़कर रह गई और उसने अनुभव किया कि श्याम के हृदय को ठेस लगी है किन्तु फिर भी उसने अपने दिल को मजबूत करके श्याम को उत्तर दिया—

"बेटा! हम लोग गरीब हैं। गरीबों की दीवाली ही क्या। तू जब पढ़ लिखकर कहीं नौकर हो जायेगा। तो हम भी ऐसी दीवाली मनायेंगे जैसे मुहल्ले के और लोग मना रहे हैं।"

"मां, मुहल्ले के लोग एक दूसरे के घर मिठाई भेज रहैं हैं। हमारे घर लोग क्यों नहीं भेजते।"

"बेटा, हमारे पास किसी के घर मिठाई भेजने के लिये पैसा नहीं है। इसीलिये लोग हमारे घर भी नहीं भेजते। समाज में तो लोग एक दूसरे से बदला चाहते हैं।"

"लेकिनन माँ समाज ऐसा क्यों है?"

"इसलिये कि समाज लोगों का बनाया हुआ है।"

"तो फिर ऐसे समाज को बदलना चाहिये ।"

"हाँ बेटा ! बदलने वाले जरूर बदलेंगे ।

"कौन बदलेगा ।"

"तुम जैसे बच्चे बड़े होकर ।.'

"लेकिन मैं बड़ा होकर भी अकेले इतने लोगों के समाज को कैसे बदल सकता हूँ ।"

"जैसे लोगों ने इकट्ठे होकर यह समाज बनाया है, वैसे ही तुम भी लोगों को इकट्ठा करके उसे बदल सकते हो ।"

"हमारे साथ कौन लोग इकट्ठे होंगे और कैसे इकट्ठे होंगे ।"

"जैसे गाँधी जी के साथ लोग इकट्ठे हुये थे तुम्हारे साथ भी होंगे ।"

श्याम माँ के इन शब्दों को सुनकर चुप हो गया किन्तु रात भर उसे यह विचार बेचैन करता रहा आखिर यह समाज कैसे बदला जा सकता है। वह रात भर अपनी गरीबी लाचारी और अमीरों की खुशहाली के विचार में ही डूबा रहा। श्याम की माँ भी उस दिन रात भर श्याम की बातों से चिंतित और परेशान रही। वह यह सोचती रही बि दीवाली के दिन भी वह शाम को केवल सूखी रोटियों को छोड़कर कोई पकवान आदि न खिला सकी। वह इस प्रकार के विचारों से चिंतित इधर से उधर रात भर करवटें बदलती रही। वह मामूली लिखी पढ़ी थी किन्तु रामायण और गीता के हिन्दी अनुवाद की खूब पढ़ लेती थी और सुबह शाम रामायण और गीता का पाठ भी करती थी। पाठ के अंत में भगवान से अपनी गरीबी दूर करने और श्याम को बुद्धि देने की प्रार्थना करती।

कुछ ही दिनों में श्याम बड़ा होकर हाईस्कूल में पहुँच गया। हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात उसने कई ट्यूशन कर ली, जिससे वह अपना और अपनी मां की गुजर बसर करता। अब उसकी माँ मुहल्ले में किसी के घर काम करने नहीं जाती थी, न श्याम

उसे कहीं जाने देता था। उसने कालेज में अपना प्रवेश कराके एक होनहार और योग्य लड़के की तरह अपने पैरों पर खड़े होकर कालिज की शिक्षा प्राप्त की। कालिज में जब वह किसी लड़के से मिलता या बात करता तो अपनी माँ के दिये हुये उपदेश के अनुसार समाज को बदलने की बात कहता। श्याम ने कालिज में पहुँचकर न जाने कितने ही साथियों को जो श्याम की ही तरह गरीब थे अपनी ओर आकर्षित कर लिया और उन सब ने मिलकर एक सामाजिक संस्था स्थापित की। उसकी माँ को इस बात की बड़ी प्रसन्नता थी कि उसका लड़का होनहार और समाज सुधारक बन कर उसके नाम को ऊँचा कर रहा है।

श्याम और उसके साथी जब कालिज से बी०ए० पास होकर निकले तो उन्होंने इस संस्था को और भी अधिक प्रगतिशील बनाया। श्याम अब कई ट्यूशनें करके दो सौ रुपये मासिक के लगभग कमाता था। इस प्रकार से अपना और अपनी माँ की गुजर-बसर करता था। कुछ रुपया वह प्रतिमास अपनी इस आय में से बचा भी लेता था। वह इस बचे हुये रुपये को समाज सुधार के कार्यों में व्यय करता और असहाय तथा अनाथों की सहायता करता।

अब श्याम और उसके साथी नगर के आदर्श समाज सुधारकों में से गिने जाते हैं। जनता में उनकी बहुत प्रतिष्ठा और प्रशंसा होती रहती है। किन्तु श्याम के मुहल्ले के अमीर और दौलत वाले लोगों पर अब भी श्याम की समाज सुधार योजनाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनके हृदय में वह अब भी किसी गरीब और असहाय व्यक्ति के लिये सहानुभूति उत्पन्न न कर सका।

———

पुलिस का दरोगा

अमरसिंह एक होशियार तन्दुरुस्त और होनहार नवयुवक था। वह कालिज में इतना सर्बप्रिय था कि कई बार कालिज यूनियन का प्रधान चुना गया। वह कालिज की सामाजिक और राजनैतिक हलचलों में सदैव सबसे आगे रहता था। इसके अतिरिक्त वह कालिज के खेल कूद में भी किसी से पीछे न था। उसका सात फिट लम्बा कद और सुडौल शरीर एन० सी० सी० के कैडेटकोर में ऐसा फिट बैठता था कि जब वह फौजी वर्दी पहनकर अन्य कैडेटों के साथ मार्चपास्ट में निकलता तो सबका लीडर मालूम पड़ता था। वह फौज तथा पुलिस में बड़ी रुचि रखता था और उसका यह विचार था कि मनुष्य पुलिस या फौज में भर्ती होकर अपने देश और समाज की अधिक से अधिक सेवा कर सकता है। वह अपने साथियों को भी सदैव पुलिस और फौज में सम्मिलित होने की बातें करता रहता था। उसने अपने कुछ साथियों की सहायता से कालिज होस्टल में एक क्लब की स्थापना की थी और प्रत्येक रबिवार को इस क्लब में अमरसिंह और उसके साथों आपस में विचार विनिमय करते और समाज में फैले हुये भ्रष्टाचार बेईमानी और बुराइयों को दूर करने के उपायों पर वादविवाद करते। कभी २ वह अपने इस क्लब में कालिज के प्रिंसिपल अथवा किसो प्रोफेसर को आमंत्रित करते और उनसे इन समस्याओं पर भाषण देने का आग्रह करते। अमरसिंह के क्लब में लड़के और लड़कियां सभी शामिल थे। अमरसिंह के ही प्रकार कालिज की एक और छात्रा लता भी क्लब के कार्यों में बड़ी रुचि के साथ भाग लेती और अपने प्रोफेसर और प्रिंसिपल के भाषणों को बड़े ध्यान से सुनती थी।

कालिज में कोई ऐसा उत्सव न होता जिसमें अमरसिंह और लता भाग न लेते । इस क्लब में और इन उत्सवों में भाग लेने के परिणाम स्वरूप अमरसिंह नगर में होने वाले सामाजिक और राजनैतिक हलचलों में भी भाग लेने लगा । अब वह अपने कालिज होस्टल के क्लब में कालिज के अतिरिक्त बाहर के सम्मानित और साहित्यिक व्यक्तियों को भी आमंत्रित करता और उनके भाषण अथवा उपदेश क्लब के छात्रों में कराता था । धीरे धीरे यह क्लब नगर के पढ़े लिखे व्यक्तियों के लिये विभिन्न राजनैतिक व सामाजिक समस्याओं पर वादविवाद करने का केन्द्र बन गया ।

अमरसिंह और लता दोनो ने एक ही साथ बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की । दोनों परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात अपने अपने घर चले गये । अमरसिंह की यह हार्दिक इच्छा थी कि वह पुलिस या फौज में भर्ती हो जाय । इस सम्बन्ध में वह कई फौज के कमीशनों में बैठा किन्तु सफल न हो सका । आखिर उसने पुलिस में सब इन्सपेक्टर पुलिस के लिये प्रार्थना पत्र दिया और उसको इन्टरव्यू में बुला लिया गया । वह इन्टरव्यू में सफल हुआ तथा ट्रेनिंग के लिये भेज दिया गया । अमरसिंह के बाप कों बड़ी प्रसन्नता हुई कि उनका लड़का पुलिस का दरोगा बन गया । उन्होंने अमरसिंह के दरोगा बनने के दिन अपने गाँव में सबको मिठाई बाँटी और अपने घर सत्यनारायण की कथा कहलाई । अमरसिंह की माता की मृत्यु तो बचपन में ही हो चुकी थी उसके बाप जीवित थे और उन्होंने अमरसिंह को पढ़ालिखा कर होशियार किया था । अमरसिंह के दरोगा होने के पश्चात अमरसिंह के पिता की यह इच्छा हुई कि अमरसिंह का विवाह किसी योग्य और पढ़ी लिखी लड़की से कर दिया जाय । अमरसिंह के विवाह के सम्बन्ध में कई लोगों ने अमरसिंह के पिता को संदेश भेजे । अमरसिंह के पिता ने छानवीन करके एक पुलिस के बड़े अधिकारी की लड़की से अमरसिंह का विवाह

निश्चित किया। अमरसिंह के पिता ने उन्हें कहला भेजा कि वह उनके घर आकर विवाह के सम्बन्ध में बातें करलें। अतः वह पुलिस अधिकारी महोदय अमरसिंह के घर पहुँचे। जिस दिन वह अमरसिंह के घर पहुँचे अमरसिंह भी घर पर था। अभी अमरसिह और उसके पिता में विवाह के सम्बन्ध में बातें हो ही रही थीं कि पुलिस के अधिकारी महोदय ने अमरसिंह को रोब में लाने के लिये कहा। "आप विवाह की महूर्त निश्चय कर लीजिए—ताकि फिर मैं अमरसिंह को किसी ऐसे थाने पर तैनात करा दूँ जहाँ अच्छी आमदनी हो।"

अमरसिंह आमदनी का नाम सुनकर झल्ला उठा उसने क्रोध में आकर कहा—

"श्रीमान् जी! यदि आप के ऐसे विचार हैं तो आप यहाँ से तशरीफ ले जाइये। मैं ऐसे आदमी की लड़की से कभी विवाह नहीं करना चाहूँगा जो रिश्वत लेना गौरव समझता हो।"

अधिकारी महोदय अपना सा मुँह लेकर चले गये, किन्तु दिल ही दिल में बदले की भावना लेकर गये और कई दिनों तक उनके दिल में अमरसिंह से बदला लेने की आग प्रज्वलित रही किंतु अमरसिंह के विरूद्ध कोई बात ऐसी थी नहीं जिससे वह उसका कुछ बिगाड़ सके। उधर लता के विवाह के सम्बन्ध में भी उसके माता पिता इधर उधर दौड़ धूप करते थे, कोई अच्छा और होनहार वर लता के लिये ढूढ़ने की फिक्र में रहते थे। एक वर्ष तक बराबर लता के पिता ने दौड़धूप की किन्तु वह कोई योग्य और अच्छा लड़का न ढूढ़ सके। लता चूंकि पढ़ी लिखी थी इसीलिये जहाँ कहीं भी या जिस किसी लड़के से भी लता के माँ बाप विवाह करने की बातलता को भी बता देते थे और अवसर लता कुछ न कहकर चुप हो जाती थी। लता स्वयं यह सोंचती रहती थी कि यदि उसका विवाह किसी ऐसे व्यक्ति से होगया जो प्रगतिशील विचार

नी रखता हो तो उसका जीवन ही व्यर्थ होजायेगा। इन्ही विचारों में वह चिंतित रहने लगी और सोचने लगी कि किस प्रकार या तो विवाह से छुटकारा पाया जाय या फिर उसी के विचारों के अनुकूल उसे कोई वर मिले। अक्सर वह इन्हीं विचारों में लीन निराश होने लगती थी किन्तु फिर अपने दिल को समझाती। वह यह समझती थी कि उनके माँ बाप अपनी बदनामी के डर के कारण उसे विवाह से छुटकारा देने के लिये राजी नहीं होंगे। इन्हीं बातों को सोंचकर वह अक्सर चिन्ता के सागर में डूबी रहती। अकस्मात उसे याद आया कि कालिज में अमरसिंह के क्लब की वह सदस्या थी और यदि उसका विवाह अमरसिंह से हो जाय तो दोनों का जीवन आशापूर्ण बन सकता है। बहुत कुछ सोचने के पश्चात वह इस परिणाम पर पहुँची कि वह अमरसिंह को पत्र लिखे किन्तु वह यह सोचकर रुक गई कि न जाने अमरसिंह इस सम्बन्ध में क्या विचार करे, वह क्या समझे। उसे यह पता था कि अमरसिंह का विवाह अभीं तक नहीं हुआ है, किन्तु उसे यह पता नहीं था कि विवाह के सम्बन्ध में अमरसिंह के क्या विचार हैं। कुछ दिनों तक वह इसी सोंच विचार में पड़ी रही आखिर उसने एक दिन दिल में ठान ही लिया कि परिणाम लो कुछ भी हो वह अमरसिंह को अवश्य ही पत्र लिखेगी। अतः उसने संक्षिप्त पत्र अमरसिंह को लिखा। उसी में यह संकेत किया कि यदि उन दोनों का विवाह हो जाय तो जीवन के वह स्वप्न जो कभी कालिज के क्लब में देखे थे पूरे हो सकते हैं।

लता का पत्र पाकर अमरसिंह को फिर उन बातों का स्मरण हो उठा जो वह कालिज के क्लब में बैठकर सोचा करता था। उसे ऐसा लगा जैसे कि भगवान की तरफ से उसे किसी ठीक काम करने की प्रेरणा मिली हो। वह लता का खत पढ़ने के बाद इस निश्चय पर पहुँचा कि भगवान संसार में उससे कुछ और नेक काम कराना चाहता है। उसके खुशी की सीमा न रही। उसने उसी दिन घर आकर अपने

पिता से लता के सम्बन्ध में सब कुछ कह दिया। अमैंरसिंह के पिता तो यह चाहते ही थे कि किसी प्रकार कोई ऐसी योग्य लड़की मिल जाय जो अमरसिंह को पसन्द हो। अतः अमरसिंह के पिता ने तुरन्त ही अमरसिंह का विवाह लता से करने की अनुमति दे दी। अब अमरसिंह खुशी से फूला नहीं समाता था। उसे ऐसा लगा जैसे उसके जीवन की सारी इच्छायें पूरी हो गई हों। अमरसिंह और लता के विवाह की महूरत निश्चित हुई। अमरसिंह के पिता ने अमरसिंह की इच्छानुसार बिना किसी प्रकार का दहेज और भेंट लिये हुये विवाह किया। लता लता और अमरसिंह के विवाह को उस क्षेत्र के लोग एक आदर्श विवाह कहते थे।

अमरसिंह विवाह के पश्चात फिर उसी थाने को लौट गया जहाँ वह तैनात था। कुछ दिनों के पश्चात वह लता को भी अपने साथ ले गया। अमरसिंह को थाने में ही एक छोटा सा क्वाटर मिला हुआ था। उसी में वह दोनों अपनी गुजर बसर कर लेते थे। अमरसिंह जिस थाने में तैनात था उस थाने के सिपाहियों में अमरसिंह का बहुत बड़ा भय था इसलिये कि अमरसिंह किसी से रिश्वत नहीं लेता था, और यदि कभी कोई व्यक्ति उसके किसी सिपाही के सम्बन्ध में रिश्वत लेने की शिकायत करता तो अमरसिंह तुरन्त ही उसके विरुद्ध रिपोर्ट लिखकर उसे मुहत्तिल या बखास्त करा देता था। किन्तु अमरसिंह की इमानदारी का परिणाम यह हुआ कि थाने के सब सिपाही उसके विरुद्ध हो गये वह दिनरात भगवान से दुआ मांगते कि किसी प्रकार अमरसिंह का इस थाने से तबादला हो जाय ताकि वह अपनी मनमानी कर सकें और उनकी रिश्वत का बाजार जो ठंडा पड़ गया था उसमें फिर से गर्मी ला सके। अमरसिंह की ईमानदारी के कारण उसके प्रेम की जनता भी निर्भीक होगई थी। किसी भी सिपाही को यह साहस नहीं था कि किसी व्यक्ति को झूठे इल्जाम में फाँस सके। अमरसिंह के

थाने के सिपाही अमरसिंह के विरुद्ध एक मत होकर षडयंत्र रचने की योजना बनाने लगे। इस योजना के अन्तर्गत सबसे पहला काम उनका यह था कि जब वह किसी बड़े पुलिस अधिकारी से मिलने का अवसर पाते तो दिल भरकर अमरसिंह की बुराई करते। इन शिकायतों पर बहुधा सी० आई० डी० द्वारा जाँच पडताल भी हुई, किन्तु अमरसिंह बेकसूर पाया गया और शिकायत करने वाले सिपाहियों को कड़ी चेतावनी दी गई।

अभी अमरसिंह को थाने में तैनात हुये दो वर्ष से अधिक नहीं बीते थे कि अमरसिंह के सर्किल में एक बहुत बड़ा बेइमान और भ्रष्टाचारी सर्किल इन्सपेक्टर तैनात होकर आया वह जिस थाने में भी जाता था वहाँ के थानेदार से तरह २ की फरमइशों करता। गाय, भैंस के भूसे से लेकर खाने पीने की चीजें अनाज और घी सभी उसके यहाँ दरोगा लोग मुफ्त पहुँचाते थे। जब भी कभी कोई दरोगा इन सर्किल इन्सपेक्टर महोदय से मिलने जाता तो वह उससे अवश्य किसी न किसी वस्तु की फर्मायश करता। अमरसिंह को तो अपने काम से मतलब था। वह कभी भी किसी इन्सपेक्टर या पुलिस ने बड़े अधिकारी से मिलने ही नहींजाता था जब तक कि उसे बुलाया न जाय। न वह किसी की खुशामद या हाजरी देने में विश्वास रखता था। वह समझता था कि मनुष्य को स्वयं अच्छा और ईमानदार होना चाहिये इसी में उसका कल्याण है।

कुछ ही दिनों में नये सर्किल इन्सपेक्टर महोदय की लड़की का विवाह निश्चित हुआ। अतः इन्सपेक्टर ने अपने क्षेत्र के समस्त थाने के दरोगाओं को पांच मन गेहूँ और ५ सेर घी विवाह के लिये लाने का आदेश दिया। अमरसिंह को छोड़कर सभी दरोगा घी और गेहूँ लेकर पहुँचे, बल्कि उनमें से कुछ तो इसके अतिरिक्त भी इन्सपेक्टर की लड़की को बड़ी २ भेंट लेकर विवाह में सम्मिलत हुये। किन्तु अमरसिंह इन्सपेक्टर

के घर बिना किसी भेंट और वस्तु के खाली हाथों ही सम्मिलित हुआ। इन्सपेक्टर को अमरसिंह का इस प्रकार खाली हाथ आना बहुत बुरा लगा और वह आग बबूला हो उठा। किन्तु उस समय उसके घर बहुत से अतिथि एकत्र थे। इसलिये इस समय तो उसने अमरसिंह से कुछ न कहा, किन्तु उसने अपने दिल में यह ठान लिया कि अमरसिंह को अवश्य नीचा दिखाया जाय।

सर्किल इन्सपेक्टर अपनी लड़की के विवाह से फारिग होने के पश्चात् अमरसिंह के थाने में अकस्मात पहुँच गये। उन्होंने थाने का निरीक्षण किया और जरा जरा सी बातों पर अमरसिंह को डांट फटकार बताई। थाने के सिपाही समझ गये कि सर्किल इन्सपेक्टर अमरसिंह से नाराज है। वह तो यह चाहते ही थे कि कोई ऐसा अधिकारी उनके थाने में आये जिससे वह अमरसिंह के विरुद्ध शिकायतें कर सकें। अतः थाने के सब सिपाहियों ने मिलकर सर्किल इन्सपेक्टर से अलग में भेंट करने की इच्छा प्रकट की। इन्सपेक्टर तो चाहता ही था कि अमरसिंह की शिकायत करने वाला कोई मिले। इसलिये उसने सिपाहियों से अलग से भेंट की। सिपाहियों ने दिल भर कर अमरसिंह की शिकायत की। सर्किल इन्सपेक्टर जिस बात की खोज कर रहा था वह उसे बैठे बैठाये मिल गई। अतः सर्किल इन्सपेक्टर ने सिपाहियों को संकेत किया कि वह थाने के क्षेत्र के कुछ लोगों से अमरसिंह के विरुद्ध शिकायतें लिखकर प्रस्तुत कराये। सिपाहियों ने कुछ लोगों से मिलकर १०–२० फर्जी शिकायतें सर्किल इन्सपेक्टर को अमरसिंह के विरुद्ध दिलवाई और तुरन्त ही उन लोगों को शिकायतों के अनुमोदन में सर्किल इन्सटेक्टर के सामने पेशकर दिया। अमरसिंह ने इन शिकायतों की तनिक भी पर्वाह नहीं की और बड़े साहसपूर्ण उन सब का उत्तर सर्किल इन्सपेक्टर महोदय को दिया। उसे विश्वास था कि उसकी इमानदारी और नेकी पर कोई भी व्यक्ति झूठी शिकायतों से खाक नहीं डाल सकता है।

सर्किल इन्सपेक्टर महोदय अमरसिंह के विरुद्ध शिकायतों और अमरसिंह के उत्तर को लेकर चले गये। अमरसिंह को तनिक भी चिन्ता न थी बल्कि उसने अपनी इमानदारी और नेकनियती के अनुसार सिपाहियों पर अधिक कड़ी निगाह रखनी आरम्भ करदी। एक दिन अकस्मात दोपहर के समय वह और लता अपने क्वाटर में बैठे हुये खाना खा रहे थे कि किसी पोस्टमैन ने आवाज दी। लता पोस्टमैन की आवाज सुनकर खाना छोड़कर बड़ी प्रसन्नता के साथ दरवाजे की ओर गई। वह समझी उसके माँ का पत्र आया होगा क्योंकि लता की माँ हर सप्ताह लता को पत्र लिखती थी। इस सप्ताह में अभी तक उसकी माँ का कोई पत्र प्राप्त नहीं हुआ था। पोस्टमैन ने एक रजिस्टर्ड पत्र लता के हस्ताक्षर कराके उसे दिया जो अमरसिंह के नाम था। लता ने लिफाफा फाड़ कर पत्र पढ़ा तो वह अमरसिंह की मुअत्तली का आर्डर निकला। वह सर पकड़ कर रह गई। वह कभी स्वप्न में भी यह नही सोच सकती थी कि अमरसिंह जैसे ईमानदार दरोगा के विरुद्ध भी कोई आर्डर निकल सकता है। वह तुरन्त समझ गई कि अवश्य ही कुछ दाल में काला है और यह आर्डर अमरसिंह के विरुद्ध किसी षडयंत्र का परिणाम है। लता के बदलते हुये चेहरे को देखकर अमरसिंह भी ताड़ गया, कि पत्र में कोई खराब खबर है। उसने खाने से उठकर तुरन्त ही पत्र लता के हाथ से छीन लिया। पत्र पढ़ा तो उसे भी आश्चर्य हुआ। वह समझ गया कि यह आर्डर उसके थाने के सिपाही और सर्किल इन्सपेक्टर के षडयत्र का नतीजा है। उसने लता की ओर देखते हुये कहा—

"लता ! मैं समझ गया कि मैं क्यों मुअत्तिल किया गया हूँ।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि मेरे सर्किल में एक ऐसा बेइमान सर्किल इन्सपेक्टर आ गया है जो सर्किल के हर दरोगा से रिश्वत लेना चाहता है। मैं उसे रिश्वत नहीं दे सकता, इसी लिये उसने मेरे थाने के सिपाहियों से मिलकर मेरे विरुद्ध यह षडयंत्र रचा है।"

"अब मैं समझी ! आखिर आप ने अब तक मुझे यह सब कुछ क्यों नहीं बताया।"

"इसलिये कि तुम्हें बताने से कोई लाभ नहीं था।"

"नहीं, ऐसा नहीं। मैं ऐसी बातों को कभी सहन नहीं कर सकती।"

"तो फिर इसका क्या इलाज है।"

"सर्किल इन्सपेक्टर हमारा भगवान तो नहीं है उसके ऊपर और भी तो बड़े अफसर हैं।"

"लेकिन उनसे भी मुझे कोई अधिक इन्साफ की उम्मीद नहीं हैं।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि सर्किल इन्सपेक्टर के मुकाबले में मेरी बात नहीं सुनी जायगी।"

"उन्हें सुनना पड़ेगी और अगर आप नहीं सुना सकते हैं तो मैं आपके साथ चलूंगी।"

"तुम्हारा जाना बिल्कुल व्यर्थ होगा !"

"किन्तु आपको इतना अधिक निराशावादी न होकर अवश्य ही पुलिस कप्तान से मिलना चाहिये।"

"बहुत अच्छा, तुम जैसा कहती हो मैं करूँगा, किन्तु मुझे उनसे भी कोई विशेष न्याय की आशा नहीं।"

अमरसिंह ने लता के कहने के अनुसार कुछ ही देर बाद अपने जिले के कप्तान साहब के बंगले पहुँचकर उनसे मिलने का प्रार्थनापत्र दिया। थोड़ी देर में अमरसिंह की पेशी कप्तान पुलिस के सामने हुई किन्तु इससे पूर्व कि अमरसिंह कुछ कहता, कप्तान पुलिस स्वयं ही उस पर बरस पड़े—

"अमरसिंह ! मुझे तुम्हारी सब हरकतों का पता है। याद रक्खो मैं तुम्हें बिना बर्खास्त किये नहीं छोड़ सकता।"

"मगर हुजूर मेरी भी तो सुन लीजिये।"

"नहीं। मुझे सब मालूम है।"

"हुजूर ! मेरी कुछ गलतियां भी तो बताइये।"

"एक गलती हो तो बताऊँ वह कौन सी गलती है जो तुमने नहीं की।"

कप्तान ने क्रोध में भर कर कहा।

"हुजूर ! आपने सर्किल इन्सपेक्टर साहब की एक ओर की बातें सुनकर अपने विचार बना लिये हैं।"

"अधिक बकवास मत करो, मैं अपने सर्किल इन्सपेक्टर के विरुद्ध कुछ नहीं सुनना चाहता।"

अमरसिंह बेचारा अपना सा मुँह लेकर पुलिस कप्तान के बंगले से बाहर निकल आया और निराशा की दशा में अपने थाने की ओर चल दिया। उसे ऐसा लग रहा था जैसे कि उसकी दुनियाँ ही समाप्त हो गई है। वह इन्हीं विचारों में चिन्तित अपने क्वाटर पर आया। लता पहले से ही उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह अमरसिंह के चेहरे से ही समझ गई कि उसे अपने मिशन में सफलता प्राप्त नहीं हुई। उसने अमरसिंह की ओर देखकर पूछा—

"मालूम होता है आपकी सच्चाई का कप्तान के दिल पर कोई असर नहीं हूआ ।"

"असर तो जब होता जब कोई मेरी सुनता ।"

"तो क्या उन्होंने आपकी बात ही नहीं सुनी ।"

"नहीं । बल्कि मुझे अपमानित करके अपने दफ्तर से चले जाने को कहा ।"

"-अगर ऐसा है तो मैं उनसे मिलूँगी ।"

"तुम्हारा मिलना ठीक नहीं अगर तुम्हारा अपमान हुआ तो मेरे लिये डूब मरने की जगह होगी ।"

"आपको यह मालूम है कि मैं नौकर नहीं हूँ । मेरा कोई अपमान नहीं कर सकता, मैं उनसे जरूर मिलूंगी ।"

यह कहकर लता कप्तान पुलिस से मिलने के लिये तैयार हुई । वह रिक्शे पर बैठकर कप्तान पुलिस के बँगले की ओर चली । अमर सिंह ने भी उसके साथ चलने को कहा किन्तु उसने अमरसिंह को अपने साथ ले जाना उचित न समझा । बँगले पर पहुँचकर लता ने अपना नाम एक कागज की चिट पर लिखकर कप्तान के अरदली को दिया । अरदली ने वह चिट ले जाकर कप्तान पुलिस के आगे रखदी ।

कुछ देर प्रतीक्षा करने के पश्चात कप्तान पुलिस ने लता को बुलाया । वह कप्तान के कमरे में जाकर कुर्सी पर बैठ गई । कप्तान ने लता की ओर देखते हुये पूछा—

"कहिये आपका क्या काम है ।"

"में अमरसिंह की स्त्री हूँ । आपसे कुछ कहने आई हूँ।"

"अच्छा आप ही अमरसिंह की स्त्री हैं । आपकी नेता गीरी की शोहरत तो मैं ही सुन चुका हूँ ।"

"मैं आपका मतलब नहीं समझी।"

"मेरा मतलब है कि आप तोपूरी नेता हैं।"

कप्तान ने मखौल उड़ाते हुये कहा।

"मैं जानना चाहती हूँ कि नेता से आपका क्या मतलब है।" लता ने आँखें बिगाड़ कर पूछा—

"मतलब तो आप ही ज्यादा अच्छा समझती होंगी लेकिन सुनता हूँ कि आप अक्सर जलसों में लेक्चर भी दे आती हैं।"

"तो क्या जलसों में लेक्चर देना कोई बुरी बात है।"

"नहीं बात तो बहुत अच्छी है लेकिन पहले अपने घर वालों को लेक्चर देना चाहिये।"

"आप जो कह रहे हैं मैं उसे समझ गई लेकिन आप को आदमियों की पहचान नहीं है।"

"आखिर आपका मतलब क्या है।"

"मेरा मतलब यह है कि आप भले और बुरे को पहचानना सीखें।"

"तो क्या आप मुझे उपदेश देने आई हैं।"

"वाह ! यह भी आपने खूब ही कहा। अन्धे के आगे रोये और अपने नैना खोये। आपको भला कौन उपदेश दे सकता है।"

लता ने मुसकराते हुये उत्तर दिया।

"आप निहायत गुस्ताख़ मालूम होती हैं।"

शायद आप से कम।"

"आप बहुत आगे बढ़ती जा रही हैं। याद रखिए आप मेरे मातहत की बीबी हैं।" कप्तान ने क्रोध में भरकर कहा—

"ज़रा होश में आकर बात कीजिये। कप्तान साहब मैं आपकी नौकर नहीं हूँ जो आप इस प्रकार का रोब मेरे ऊपर डाल रहे हैं।"

"आप मेरे बँगले से तुरन्त निकल जाइये।"

"कप्तान सप्तान साहब मैं तो यहसमझती थी कि पुलिस के बड़े अफसर होने के कारण आप सभ्य होंगे किन्तु आपको तो बात करने की भी तमीज नहीं।"

यह कहकर लता कप्तान साहब के बंगले से बाहर निकल आई। क्वाटर पहुँचकर उसने अमरसिंह को तुरन्त नौकरी से त्यागपत्र देने को कहा। अमरसिंह ने उससे जल्दी न करके शान्तपूर्ण वातावरण में सोचविचार करने को कहा, किन्तु उसने अमरसिंह की एक न चलने दी और उसने साफ शब्दों में कह दिया कि ऐसी नौकरी से तो भूखो मरना अच्छा है जहाँ मनुष्य को बेइमानी का सहारा लेना पड़े और जहाँ जरा-जरा सी बातों पर अपमानित होना पड़े। अमरसिंह ने लता को समझाते हुये कहा—

"लता यह भी तो सोंचो अगर नौकरी से इस्तीफा दे दिया तो फिर गुजर बसर का साधन क्या होगा।"

"क्या आपको अपनी इमानदारी पर शक है।"

"नहीं।"

"यदि नहीं, तो हम कोई ऐसा काम करेंगे जहाँ हमारी ईमानदारी कायम रह सके। और समाज में हमारा मान हो।"

"वह कौन सा काम है।"

"वह यह कि छोटे बच्चों का एक स्कूल।"

"कहाँ।"

"अपने घर पर।"

यह कहकर लता ने अमरसिंह से त्याग पत्र देने का आग्रह किया। अमरसिंह ने त्याग पत्र दे दिया। लता और अमरसिंह अपने शहर को वापिस चले गये। उन्होंने बच्चों का एक स्कूल खोला जिसमें दोनों ही बच्चों के अध्यापन कार्य में संलग्न हो गये और कुछ ही दिनों में यह स्कूल नगर का एक आदर्श मान्टेसरी स्कूल बन गया। अब इस स्कूल में लता और अमरसिंह के अतिरिक्त एक दर्जन से अधिक अध्यापक और अध्यापिकायें हैं। सर्किल इन्सपेक्टर और कप्तान पुलिस के बच्चे भी इसी मन्टेसरी स्कूल में पढ़ने आते हैं किन्तु सर्किल इन्सपेक्टर की रिश्वत और कप्तान पुलिस की बदमिजाजी में अब भी कोई कमी नहीं आई।

——

"वकील साहब"

टेलराम अपने नगर के प्रसिद्ध वकीलों में से थे। उनके कई मुहर्रिर थे। उनकी वकालत के दलालों का तो शुमार ही न था। हर मुहल्ला और कूचे में टेलराम के दलाल फैले हूये थे। टेलराम फौजदारी और दीवानी दोनों में ही ख्याति प्राप्ति कर चुके थे। जो लोग हर एक वकील से निराश होकर लौटते थे वह अन्त में टेलराम का दरवाजा खटखटाते। टेलराम भी उन वकीलों में से थे जो कमजोर से कमजोर मुकदमा जिताने के लिये सदैव खम ठोंककर तैयार रहते थे। दस्तावेज पर फर्जी दस्तखत बनवानें. सरकारी मुहर को बनवाकर उन पर जाली मुहर लगाने और जिन्दा को मुर्दा तथा मुर्दा का जिन्दा बनाने में उन्हें ऐसा कमाल हासिल था कि वह बड़े २ वकीलों को मात देते थे। इसलिये नगर के प्रसिद्ध से प्रसिद्ध जालसाज चोर और डकैत टेलराम के चेले और उनके लंगोटिया यार थे। टेलराल ने कितने ही नामी चोरों और डकैतों को जेलखाने से छुटकारा दिलाया था। इन सब बातों के अतिरिक्त टेलराम की पहुँच वड़े से बड़े सरकारी अधिकारी और ऊँचे से ऊँचे नेताओं तक थी। जब कोई बड़ा अधिकारी टेलराम के नगर में आता तब टेलराम उसके आते ही उससे भेंट करने जाते और उसे ऐसी लच्छेदार बातें सुनाते कि वह पहली ही भेंट में टेलराम का मित्र बन जाता था। और जब कभी किसी बड़े नेता से भेंट करने जाते तो ऐसा रूप गांठते और ऐसे कपड़े पहिनते कि पूरे नेता मालूम होते थे। चूड़ीदार पायजामा, रेशम की अचकन और तिरछी टोपी जैसे कि कोई चोटी के नेता हो और फिर पहली ही भेंट में उनपर अपनी

योग्यता और काबलियत का ऐसा रोब बिठाते कि नेता जी टेलराम की हाँ में हाँ मिलाते रहते थे। सुबह से शाम तक टेलराम अपनी वकालत को चमकाने के लिये इसी प्रकार दौड़ते घूमते रहते थे और जब सायंकाल को कचहरी से घर लौटते तो उनकी अचकन की दोनों जेबें रुपयों से भरी हुई होती थी।

टेलराम की फीस कोई निश्चित नहीं थी। बल्कि हर मुकदमे की फीस उसकी तिकड़म के आधार पर होती थी। मुकदमे की फीस से अधिक रुपया तो वह जमान्नों की शनाख्त करने, मृतक लोगों के फर्जी दस्तखत बनाने और फर्जी दस्तावेज लिख लेने में पैदा कर लेते थे। इतनी आमदनी तो नगर के ऊँचे से ऊँचे और अच्छे से अच्छे वकीलों को नहीं थी। फिर नगर में उनके दलालों का हर जगह ऐसा जाल बिछा हुआ था जो सुबह से शाम तक वकील साहब की लियाकत का ढोल ही पीटते रहते रहते थे।

वकीलों का एक बहुत बड़ा समूह टेलराम का विरोधी था। किन्तु वे उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे।

टेलराम से बड़े २ लोग ड़रते थे। किसी की क्या मजाल जो टेलराम की ओर उंगली भी उठा सके। लोग समझते थे कि यदि टेलराम नाराज हो गया तो न जानें किस जूर्म और किस जाल में फँसा दे। इसीलिये कोई और भी टेलराम का विरोध करने का साहस नही रखता था। न जानें नगर के कितने लोग और कितने वकील ऐसे थे जो टेलराम की खुशामद में लगे रहते थे। टेलराम का गिरोह एक ऐसा गिरोह था जिसमें बड़े २ चार सौ बीस, चोर, और डाकू सम्मिलित थे। इस लिये हर सज्जन व्यक्ति टेलराम से डरता था और इसीलिये उनकी तूती वकालतखाने से लेकर नगर की गली कूचों तक में बोलती थी।

टेलराम के दल के लोग अक्सर नगर और नगर के आस-पास चोरी, डकैती और जालसाजी की वारदातें करते रहते थे, मगर टेलराम की ताकत पर वह मुकदमे या जेलखाने से कभी नहीं डरते थे। टेलराम को भी इतनी तिकड़में याद थी कि हर मुल्जिम की जमानत करा लेना और मुकदमे से छुड़ा लेना उसके बांयें हाथ का खेल था। टेलराम तिकड़मों के अतिरिक्त मुकदमों में जिरह और बहस करने में भी निपुण थे। जब वह अदालत में बहस करने खड़े होते तो ऐसे जमीन और आसमान के कुलाबे मिलाते कि सुनने वाले भी टेलराम का लोहा मानने लगते। बेचारे छोटे मोटे वकील तो टेलराम के मुकाबले में अदालत में खड़े होने का साहस भी नहीं रखते थे। छोटे मोटे वकीलों का कहना ही क्या, टेलराम ने बड़े २ वकीलों के पैर अदालत में उखाड़ दिये थे।

टेलराम ने वकालत से लाखों रुपया पैदा किया था। अब उनकी गणना नगर के लखपतियों में थी। टेलराम का कुनवां बहुत छोटा कुनवा था। एक स्त्री और एक लड़की शीला के अतिरिक्त और कोई न था। टेलराम की स्त्री तो बेचारी पुराने विचारों की सीधी, साधी महिला थी। उसे घर की देखभाल और घर के प्रबन्ध से अवकाश कहां मिलता था। उसका काम तो केवल यही था कि ६ बजे प्रातः वकील साहब को खाना बनवाकर खिला देना और सायंकाल ५ बजे कचहरी से आने के बाद वकील साहब के लिये चाय तैयार करवा के उनकी टेबिल पर लगवा देना। उस बेचारी को यह भी पता न था कि वकील साहब किस २ तिकड़म से रुपया पैदा करते हैं। वह बड़ी प्रसन्न होती थी जब वकील साहब के चेले वकील साहब की योग्यता की प्रशंसा उसके सामने आकर करते थे। उसे यह क्या पता था कि वकील साहब पूरे ४२० हैं। कभी २ वकील साहब उसके सामने किसी से कोई तिकड़म की बात या झूठी बात कहते तो वह वकील साहब

को बुरा भला कहती। किन्तु उसे यह स्वप्न में भी ख्याल न था कि वकील साहब का पेशा सुबह से शाम तक तिकड़म लड़ाने और ४२० का रहता है। शीला भी दिन भर कालेज में रहती। इस कारण उसे भी वकील साहब के गुणों का कुछ अधिक अनुभव न था। किन्तु जैसे ही वह समझदार और बड़ी होती गई उसको कुछ वकील साहब के सम्बन्ध में जानकारी होती गई और धीरे धीरे उसे वकील साहब की तिकड़मों और जाल बट्टे का पता लगता गया। एक दो बार उसने इस सम्बन्ध में अपनी मां का ध्यान भी आकर्षित किया और उसे यह भी बताया कि उसके पिता जिस प्रकार और जिस ढंग से धन पैदा कर रहे हैं वह ढंग ठीक नहीं है। किन्तु उसकी मां सदैव उसे यह कहकर डांट देती थी कि मां-बाप के कामों में टीका टिप्पणी करना उचित नहीं है। वह शीला की कालेज की पढ़ाई से भी संतुष्ट न थी। उसका विचार था कि लड़कियों को कालेज में पढ़ाना अधिक उचित नहीं है। टेलराम शीला को बहुत लाड़ प्यार करते थे। उन्हें इस बात का बड़ा गौरव था कि उनकी लड़की कालेज की एक छात्रा है और वह सभ्य समाज के योग्य है। टेलराम ने शीला की लिखाई-पढ़ाई के सम्बन्ध में कभी कमी नहीं की थी। उतका मोटर रोजाना शीला को कालेज छोड़ने जाता और फिर वह सायंकाल को पुनः मोटर कालेज में भेजकर शीला को घर बुलाते।

शीला की आदत बिल्कुल वकील साहब से विपरीत थी। वह कालेज में बहुत नेक सज्जन और सुशील लड़की समझी जाती थी। गरीबों और असहाय लोगों से वह सदैव से सहानुभूति रखती थी। वह एक धनी बाप की लड़की होने पर भी अधिक फेशनेबिल लड़की नहीं थी। और न ही अन्य लड़कियों के प्रकार वह अधिक बनाव श्रृङ्गार करके कालेज जाती थी। वह कालेज में भी सीधो सादी लड़कियों से ही अपनी मित्रता रखती थी। अक्सर वह गरीब और असहाय लड़के

लड़कियों की सहायता, रुपये पैसे से भी करती रहती थी। शीला किसी भी कालेज के बातूनी अथवा शरीर लड़के से मिलना जुलना तो अलग रहा, बात करना भी पसन्द नहीं करती थी। न उसे किसी धनी मानी या बड़े आदमी के लड़के से मिलने जुलने या बात करने का चाव था। एक दो शरीफ और होनहार लड़कों से अवश्य ही कभी २ उसकी बात हो जाती थी। वह भी लिखने पढ़ने और परीक्षा आदि के सम्बन्ध में। इन्ही लड़कों में से शैलेन्द्र भी एक था। वह एक मामूली घराने का लड़का था। उसके पिता की मृत्यु उसके बाल काल में हो चुकी थी। केवल उसकी माँ जीवित थी। वही उसकी पढ़ाई लिखाई का प्रबन्ध करती थी। शैलेन्द्र की माँ के पास कोई बहुत बड़ी सम्पत्ति भी नहीं थी। केवल शैलेन्द्र का पिता १० हजार रुपये की एक इन्सोरेंस की पालिसी उसकी माँ के नाम करा गया था और हजार पांचसौ नकद छोड़कर मरा था। शैलेन्द्र की माँ ने अपने आभूषणों आदि को बेंचकर शैलेन्द्र को पढ़ाया लिखाया था। वह इसी प्रतीक्षा में थी कि शैलेन्द्र किसी प्रकार से बी० ए० पास करलें और उसकी इन्सोरेंस की पालिसी का रुपया समय पूरा होने पर मिल जाय। शीला और शैलेन्द्र अक्सर कालेज के वाचनालय में बैठकर अपनी पढ़ाई लिखाई और परीक्षा के सम्बन्ध में बातचीत करते रहते थे। शीला को शैलेन्द्र से बहुत सहानुभूति थी। वह शैलेन्द्र की प्रशंसा करती थी कि गरीबी की दशा में भी उसने अपनी पढ़ाई लिखाई को जारी रक्खा और कालेज में वह एक होनहार नवयुवक के तुल्य सदैव अच्छे नम्बरों से पास हुआ। शीला को ऐसे ही छात्रों से सहानुभूति थी।

शीला कालेज से जब घर पहुँचतीं और अपने बाप की तिकड़मों और जालसाजी पर निगाह डालती तो उसे अपने प्रति बड़ी ग्लानि होती थी। किन्तु वह कुछ कह नहीं सकती थी। वह दिल ही दिल में अपने बाप की हरकतों पर कुढ़ती रहती थी। शीला अब जवान हो

चुकी थी। इसलिये शीला के पिता ने उसके विवाह के लिए इधर-उधर लड़के ढूँढना आरम्भ कर दिया। शीला का पिता टेलराम पश्चिमी तहजीव का बहुत बड़ा कायल था। वह सायंकाल को नगर के एक बहुत बड़े क्लब में जाता जिसका कि वह मेम्बर था। क्लब में वह बहुत रात गये लौटता था। वह क्लब के अन्य साथियों के साथ अक्सर सोसायटी की सभ्यता और संस्कृति के सम्बन्ध में वाद-विवाद करता रहता था। उसका विचार था कि लड़के लड़कियों का विवाह उन्हीं की इच्छानुसार करना चाहिये। इसलिये अक्सर वह शीला से भी यह कहता रहता कि वह अपने पसन्द के लड़के को स्वयं ही ढूँढ ले। यद्यपि शीला की माँ वकील साहब के इस विचार को बिल्कुल पसन्द न करती थी। किन्तु टेलराम अपनी स्त्री की बात सदैव मूर्खता की बात समझता था। एक दिन अवसर पाकर टेलराम ने शीला से कहा।

"शीला अब तुम दो एक महीने में बी० ए० की परीक्षा पास कर लोगी इसलिये मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी शादी करदूँ। मगर मैं यह चाहता हूँ कि तुम अपने लिये स्वयं कोई अच्छा वर ढूँढ लो।"

शीला ने शरमाई हुई निगाहों से अपने पिता को केवल इतना ही उत्तर दिया।

"पिता जी अभी जल्दी क्या है!"

"इसलिये जल्दी है कि तुम अपने कालिज में ही किसी अच्छे लड़के को ढूँढ लो ताकि मैं तुम्हारी परीक्षा से पहिले ही तुम्हारा सम्बन्ध ते कर दूँ।"

"देखा जायेगा।"

"शीला! यदि तुम मुझसे शरमाती हो तो तुम अपनी माँ से ही बात कर लेना और जो लड़का तुम अपनी माँ को बताओगी मैं उसी से तुम्हारा विवाह कर दूँगा।"

यह कहकर टेलराम कचहरी चले गये। शीला बहुत देर तक सोचती रही। अन्त में वह इसी निर्णय पर पहुँची कि उसके लिये यही हितकर होगा कि वह स्वयं ही अपने लिये कोई लड़का ढूँढ ले। यह भी जानती थी कि उसने यह काम अपने पिता पर छोड़ दिया तो न जाने उनके इष्ट-मित्र किस लड़के के सम्बन्ध में परामर्श दें। क्योंकि शीला यह भी समझती थी कि टेलराम की मित्र-मण्डली कोई अधिक भले और सज्जन आदमियों की नहीं है। वह इन्हीं विचारों में लीन रहने लगी। उसने बहुत कुछ सोचा और कालेज के कई लड़कों के सम्बन्ध में उसने जानकारी भी प्राप्त की। किन्तु उसे शैलेन्द्र से अच्छा योग्य, होनहार और शरीफ लड़का दूसरा नहीं जंचा। उसे भय यह था कि न जाने शैलेन्द्र उसके प्रस्ताव को स्वीकार करेगा भी या नहीं। उसे इतना साहस भी नहीं होरहा था कि वह स्पष्ट शब्दों में शैलेन्द्र के सामने अपने विवाह का प्रस्ताव रक्खे। यद्यपि उसका हृदय यह गवाही दे रहा था और उसे ऐसा अनुभव हो रहा था कि शैलेन्द्र कभी भी उसकी बात को टालेगा नहीं। वह अक्सर इन्ही विचारों के समुद्र में गोते लगाती रहती। अक्सर वह शैलेन्द्र से विवाह का प्रस्ताव अपनी माँ के सामने रखना चाहती किन्तु उसकी जुबान माँ के सामने आते ही बन्द हो जाती। आखिर एक दिन उसने अपने दिल में यह ठान ही लिया कि चाहे कुछ भी हो वह जरूर अपनी माँ से शैलेन्द्र के सम्बन्ध में बात करेगी।

शीला ने एक दिन अवसर पाकर अपनी माँ से कुछ कहना चाहा। किन्तु वह यह समझकर रुक गई कि न जाने उसकी माँ उसके विचारों से सहमत हो या न। उसने एक मिनट सोचकर यह निश्चय किया कि वह अपनी माँ के बजाय यदि अपने पिता से ही अपनी इच्छा प्रकट करदे तो अधिक उपयोगी होगा इसलिये कि उसकी मां कभी इस बात को उचित नहीं समझेगी कि उसकी लड़की अपने विवाह के सम्बन्ध में उसके सामने अपने विचार रक्खे। यह सोचकर शीला माँ के पास से चली आई।

किन्तु शीला की माँ समझ गई कि शीला उससे कुछ कहने आई थी किन्तु किसी कारणवश बिना कहे चली गई। शीला की माँ ने उसे आवाज़ दी, शीला मुड़ी, और उसने माँ की ओर देखकर पूछा—

"माँ क्या बात है"

"मुझे ऐसा लगा कि तुम मुझसे कुछ कहना चाहती थीं।"

"नहीं माँ ऐसी तो कोई बात नहीं थी।"

"शीला ! तुम मुझसे कुछ कहना चाहती हो। मुझे तुम पागल मत समझो। मैं चेहरे से भाँप लेती हूँ।"

"माँ, पिता जी ने मुझे कुछ आदेश दिया था। उसी के सम्बन्ध में मैं आपसे बात करना चाहती थी।"

"वह आदेश क्या था ?"

"यह कि मैं अपने लिये कोई योग्य वर ढूंढ लूँ।"

"अच्छा ! तो तुम्हारे पिता जी की यह मजाल और तुम्हारी यह हिम्मत कि तुम उनके आदेश पालन करने के लिये तैयार हो गईं।"

"माँ ! तुम जानती हो कि लड़कियों को तो अपने माता-पिता की आज्ञा पालन ही करनी चाहिये।"

"अच्छा तो मैं समझ गई।"

शीला और उसकी माँ में इस प्रकार बातें हो ही रही थीं कि इतने में वकील साहब भी कचहरी से आगये। शीला और उसकी मां को आपस में बातचीत करते हुये देखकर वकील साहब ने मुस्कराते हुये कहा—

"शीला की मां ! आज बहुत घुल-मिल कर शीला से बातें कर रही हो।"

"जी हां ! आपने शीला को उपदेश भी तो बहुत अच्छे दिये हैं।"

"क्या मतलब ।"

"मतलब यह कि खुद तो दुनियां भर की तिकड़म करते ही रहते हो अब बच्चों को भी बिगाड़ना चाहते हो ।"

"अच्छा मैं समझा । शीला किसी कालेज के उत्सव में जाना चाहती होगी । तो इसमें बुराई क्या है । जाने दो, पढ़ी लिखी लड़कियां उत्सवों में भाग लेती ही हैं ।"

"आप भी खूब समझे ।"

"तो फिर और क्या बात है ।"

"बात यह है कि मैंने हजार दफा मना किया कि शीला को कालेज में मत पढ़ाओ लेकिन आपने मेरी एक न सुनी ।"

"आखिर तुम कहना क्या चाहती हो ।"

"मैं यह कहना चाहती हूँ कि लड़कियों को कालेज में पढ़ाना अच्छा नहीं होता ।"

"आखिर हुआ क्या ।"

"हुआ यह कि आपकी लड़की अपने लिये स्वयं ही लड़का ढूँढ रही है ।"

"यह तो बहुत ही अच्छा है । मैंने तो खुद ही शीला से ऐसा करने को कहा था ।"

"जी हाँ, सारी बुराई की जड़ तो आप ही हैं । आपकी जो तबियत हो उसे कीजिये । मुझे क्या पड़ी ।"

"शीला की मां ! तुम भी क्या पुराने ख्याल की औरत हो । तुम्हें यह नहीं मालूम कि आज कल का जमाना अब पुराना जमाना नहीं रहा । जब लड़कियों के मां-बाप उनके लिये विवाह का प्रबन्ध करते थे ।"

"जी हां। अब तो जमाना वह है। जब लड़के लड़कियां मां बाप को खबर किये ही बिना शादी कर लेते हैं।"

"शीला की मां तुम बेकार की बहस मत करो। जो कुछ शीला ने किया वह मेरे कहने के अनुसार किया है।"

"लेकिन इससे यह तो पूछ लीजिये। वह कौन लड़का है।"

"यह सब कुछ आप ही पूछ लीजिये।"

"अच्छा बेटी'शीला ! तुम मुझे बताओ।"

"शीला ने अपनी गर्दन शर्म से नीचे झुका ली और कुछ देर तक वह चुप बैठी रही। किन्तु वकील साहब के बार २ कहने पर उसने अपने हृदय की बात बता दी। और उसने यह भी बता दिया कि शैलेन्द्र एक साधारण परिवार का लड़का है जो उसी के कालेज में उसी की कक्षा में पढ़ता है। वकील साहब तो यह चाहते ही थे कि उन्हें कोई ऐसा लड़का शीला के लिये मिल जाये जो उनका घर जमाई बनकर रहे। लकील साहब के कोई और सन्तान न थी। अतः वह तुरन्त ही शीला का विवाह शैलेन्द्र के साथ करने के लिये राजी हो गये। उन्होंने शीला की मां को शीला की इच्छानुसार विवाह करने के लिये राजी कर लिया। शीला को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उसके पिता ने बिना किसी सोंच विचार के शैलेन्द्र से विवाह करने की अनुमति दे दी। शीला को पूर्ण विश्वास था कि शैलेन्द्र भी उससे विवाह करने को प्रसन्नतापूर्वक तैयार हो जायेगा। शीला ने अपने हृदय में यह ठान लिया कि दूसरे दिन जब वह कालेज जायेगी तो वह शैलेन्द्र से अवश्य ही अपने दिल की बात कहेगी।

शीला रात भर विचारों के समुद्र में डूबी रही। ज्यों त्यों करके रात गुजारी और प्रातः काल से ही कालेज जाने की तेयारी में व्यस्त हो गई। वह उस दिन समय से पहले ही कालेज पहुँच गई। उसने

आज दिल में यह ठान लिया था कि वह शैलेन्द्र से सब कुछ कह देगी चाहे उसका परिणाम कुछ भी क्यों न हो। कालेज की कक्षायें समाप्त होने पर शीला ने शैलेन्द्र को रोककर कहा—

"मैं कुछ बात आपसे करना चाहती हूँ।"

"क्या कोई कहानी सुनाना चाहती हो।"

"क्या मतलब।"

"मैंने इसलिये पूछा कि आज आप के हाथ में कहानियों की पुस्तक थी।"

"पुस्तक की कहानी नहीं, बल्कि जबानी कहानी सुनाना चाहती हूँ।"

"किसी की लिखी हुई कहानी या सुनाई हुई।"

"मेरे पिता जी की सुनाई हुई कहानी।"

"क्या आप के पिता कहानी लेखक है।"

"जीं नहीं किन्तु उन्हें कहानियां सुनाने का बड़ा शौक है।"

"तब तो मैं भी तुम्हारे पिता जी से अवश्य ही कहानियां सुनूंगा। बताइये कब तुम्हारे साथ चलूँ।

"जब आपका दिल चाहे चलिये।"

"अच्छा तो फिर परीक्षा के बाद फुरसत में तुम्हारे पिता जी से कहानियां सुनने चलेंगे।"

"लेकिन भूल न जाइये।"

"ऐसा कभी नहीं हो सकता है।"

यह कह कर शीला और शैलेन्द्र दोनों ही अपने २ घर चले गये। शीला को इतना साहस न था कि वह शैलेन्द्र से साफ २ अपनी इच्छा प्रगट करती। किन्तु आज की बातों से उसे यह विश्वास हो गया कि वह अवश्य ही शैलेन्द्र को अपनी तरफ खींच लेगी। कुछ ही

दिनों में शीला और शैलेन्द्र की बी० ए० की परीक्षायें आरम्भ हुईं। एक सप्ताह के अन्दर परीक्षायें समाप्त भी हो गई। जिस दिन शैलेन्द्र की परीक्षा समाप्त हुई उसके एक सप्ताह बाद ही शैलेन्द्र की मां की इन्सोरेन्स की १००००) की पालिसी भी पूरी होगई। शैलेन्द्र की मां उसे लेकर पालिसी का रुपया लेने इन्सोरेन्स के दफ्तर गई और रुपया लेकर दोनों खुश २ अपने घर लौट आये। शैलेन्द्र की मां ने घर आकर मन्दिर में जाकर भगवान का परसाद चढ़ाया। और मुहल्ले वालों को मिठाई बांटी। सारे मुहल्ले के लोगों को यह मालूम होगया कि शैलेन्द्र की मां को उसकी इन्सोरेंस की पालिसी के १००००) प्राप्त हुये हैं। शैलेन्द्र की मां इन रुपयों को उसके विवाह के लिए रखना चाहती थी। उसने शैलेन्द्र से यह कह भी दिया था कि इन रुपयों में से कोई भी पैसा खर्च नहीं करेगी और इन रुपयों को किसी बैंक में जमा कर देगी ताकि वह शैलेन्द्र के विवाह के समय इन रुपयों को निकाल सके।

शैलेन्द्र की मां को दस हजार रुपया क्या मिला उसे ऐसा लगा जैसे उसके जीवन की सारी मनोकामनायें पूर्ण होगई हो और उसे दुनियां की बादशाहत मिल गई हो। वह रात को देर तक इन्ही रुपयों से शैलेन्द्र की शादी करने की योजनायें बनाती रही। आधी रात्रि के बाद जैसे ही उसकी आंख लगी कि अकस्मात उसके कमरे में कुछ आहट हुई। उसकी आंख खुल गई। उसने देखा कि ४-५ चोर उसकी चारपाई के चारों तरफ छुरी और खंजर लिये हुये खड़े हैं। वह चीख पुकार करने ही वाली थी कि चोरों ने उसके मुँह में कपड़ा ठूँस दिया और चाकू निकाल कर उसके चारपाई के बराबर खड़े होगये। उनमें से एक ने उसके सिराहने से चाबियों का गुच्छा निकालकर उसके कमरे में रक्खे हुये संदूक का ताला खोल लिया और जो १००००) के नोट उसमें रक्खे हुये थे। उन्हें लेकर चोर एक दो तीन हो गये। शैलेन्द्र

ऊपर छत पर सो रहा था। उसे कुछ पता न था कि क्या हुआ। चोर शैलेन्द्र की मां के मुंह में कपड़ा ठूँसने के साथ २ उसके हाथ पैर चारपाई से बांध भी गये थे। चोरों के चले जाने के पश्चात भी उसने बहुत कुछ प्रयत्न अपने हाथ पैरों को छुड़ाने के लिये किया और चीखना, चिल्लाना चाहा। अकस्मात जोर लगाने पर उसका एक हाथ खुल गया। उसने उस हाथ से अपने मुँह का कपड़ा निकाला और चीख पुकार आरम्भ कर दी। शैलेन्द्र जोकि छत पर सो रहा था मां की चीख पुकार सुनकर नीचे दौड़ा हुआ आया। उसने देखा कि उसकी मां चारपाई से बंधी पड़ी है। उसने जल्दी से उसे खोला और उससे सारे वाकयात मालूम किये। शैलेन्द्र की मां की शोर पुकार से मुहल्ले के और भी लोग दौड़ आये। शैलेन्द्र की मां ने उन्हें बताया कि चोर उसका १००००) ले गये। मुहल्ले वालों ने भागकर थाने में में सूचना दी। अतः तुरन्त ही कोतवाल शहर सिपाहियों के साथ जीप में बैठकर चोरों की तलाश में दौड़ गये और उनमें से उन्होंने भागते हुये दो चोरों को पकड़ लिया।

पुलिस दोनों चोरों को पकड़कर थाने ले गई। थाने में उनकी इतनी मरम्मत की कि इन चोरों ने अपने गिरोह के सब नाम बता दिये और साथ ही यह भी कबूल लिया कि वह १००००) शैलेन्द्र के घर से चोरी करके लाये हैं। जब इन चोरों के गिरोह के अन्य लोगों को पता चला कि उनके नाम पुलिस में बता दिये गये हैं तो उनमें खलबली मच गई। वह सीधे अपने वकील टेलराम के घर अपनी बचाव के लिये पहुँचे। टेलराम ने पहिले भी कई बार चोरी और डकैती के मुकदमे में इन लोगों की पैरवी की थी और इन्हें छुड़ा लिया था। इसलिये उन्हें टेलराम पर पूरा भरोसा और विश्वास था कि टेलराम अवश्य ही उन्हें छुड़ा लेगा। अतः १००००) में से

५,०००) टेलराम ने इस मुकदमे से उन्हें बरी कराने के लिये अपनी फीस के ठहराये।

पुलिस ने इन सब चोरों के गिरोह को गिरफ्तार करके जेल भेज दिया और उन पर मुकदमा चला दिया। किंतु जब जेल खाने में इन मुल्जिमान की शनाख्त के लिये पुलिस के गवाह बुलाये गये तो टेलराम ने सब गवाहों को रुपये देकर अपनी ओर तोड़ लिया। किसी ने भी मुल्जिमों की शनाख्त नहीं की। नतीजा यह हुआ कि सब मुल्जिम अदालत से छोड़ दिये गये।

शैलेन्द्र को जितना दुख १००००) की चोरी का नहीं था। उतना उसे मुल्जिमान के छूट जाने का था। जिस दिन मुल्जिमान छोड़ें गये शैलेन्द्र ने शोक के वातावरण में दिन भर खाना नहीं खाया। उसकी मां को भी मुल्जिमों के छोड़े जाने का समाचार सुनकर बड़ा दुख हुआ। वह दिन भर परेशानी की हालत में रोती ही रही। शैलेन्द्र ने अपनी मां को बहुत कुछ धैर्य बंधाया और सान्त्वना दीं। साथ ही उसे यह भी विश्वास दिलाया कि बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात वह नौकरी करके उसे रुपये पैसे से मालामाल कर देगा। शैलेन्द्र को यह मालूम होगया था कि टेलराम ने गवाहों को रिश्वत देकर मुल्जिमों की शनाख्त नहीं होने दी है। इसीलिये मुल्जिम मुकदमे से बरी कर दिये गये हैं। उसे टेलराम वकील के प्रति बड़ी घृणा हुई और उसकी दृष्टि में टेलराम एक मनुष्य नहीं बल्कि शैतान की प्रकार घूमने लगा। उसे यह भी पता नही था कि यह वकील साहब ही शीला के पिता हैं। न कभी इस सम्बन्ध में दोनों में बात-चीत हुई थी। हाँ शैलेन्द्र को यह मालूम था कि शीला का पिता कोई बड़ा आदमी है। शैलेन्द्र के हृदय में टेलराम के प्रति क्रोध की ज्वाला जल रही थी। वह उस दिन रात भर इसी सोंच विचार में करवटें बदलता रहा, कि टेलराम को किस प्रकार से सबक सिखाया जाय। बहुत कुछ सोचने के बाद वह इस

परिणाम पर पहुँचा कि टेलराम जैसे समाज के शत्रुओं को तो मृत्यु के घाट उतार देने से ही संसार का पुण्य कमाया जा सकता है। इसी प्रकार बेगुनाह लोगों को गुन्डे बदमाश और चोरों से बचाया जा सकता है। वह इन्हीं विचारों के समुद्र में उछलता डूबता रहा। बहुत देर तक यही सोंचता रहा कि टेलराम जैसे शैतान से किस प्रकार समाज को छुटकारा दिलाया जाय। आखिर उसने अपने दिल में ठान लिया कि चाहें उसे फांसी के तख्ते पर ही क्यों न लटकना पड़े किन्तु वह टेलराम को अवश्य मृत्यु के घाट उतारेगा। यह सोंचकर वह अपनी चारपाई पर उठकर बैठ गया। रात का सन्नाटा छाया हुआ था। उसने सोंचा कि जो कार्य करना है वह कल पर क्यों टाला जाय। क्यों न आज ही टेलराम से बदला लिया जाय। यह सोंचकर वह चारपाई से उठ बैठा। अभी कुछ रात्रि शेष थी। वह अपने घर के दरवाजे से बाहर निकलना ही चाहता था कि उसकी माँ की आँख खुल गई। उसने देखा कि शैलेन्द्र दरवाजे के पास खड़ा है। उसकी माँ एक साथ झपटकर चारपाई से उठ खड़ी हुई और उसने शैलेन्द्र को पुकार कर कहा।

"बेटा शैलेन्द्र! इतनी रात में कहां जा रहे हो।"

शैलेन्द्र कुछ ठिठका। उसने बात बनाते हुये उत्तर दिया।

"माँ कहीं नहीं जा रहा हूँ। कुछ खटका सा मालूम हुआ। इसलिये मैंने उठकर दरवाजे के बाहर देखा कि कहीं चोर और लुटेरे फिर तो नहीं आगये।"

"बेटा! अब चोर और लुटेरे आकर हमारे घर क्या करेंगे। जो कूछ था वह ले गये। अब इस घर में रक्खा ही क्या है।"

शैलेन्द्र की माँ ने ठंडी सांस भर कर कहा।"

शैलेन्द्र दरवाजे से लौटकर फिर अपनी चारपाई पर आ लेटा। दूसरे दिन वह सुबह से शाम तक टेलराम को मृत्यु के घाट पहुँचाने की

योजनायें ही बनाता रहा। वह दिन में एक दो बार साइकिल से टेलराम के घर की ओर गया और उसने टेलराम के नौकर चाकरों से यह भी मालूम कर लिया कि टेलराम रात को किस स्थान पर सोता है। उसे मालूम हुआ कि टेलराम अपने घर बाहर बरांडा में सोता है और नौकर चाकर सब दरवाजे के पास के बने हुये क्वाटरों में रहते हैं। शैलेन्द्र को यह भी मालूम होगया कि टेलराम सदैव अपनी चारपाई पर बन्दूक रखकर सोया करता है। दिन भर उसने इसी सोंचविचार में बिताया कि वह किस प्रकार टेलराम को सबक सिखाये ताकि भले आदमियों को गुण्डे और बदमाशों से छुटकारा मिले।

शैलेन्द्र सायंकाल होते ही अपने घर के बाहर निकल गया। वह रात्रि को १० बजे तक बाहर ही रहा। १० बजे वह अपने घर में आकर अपनी चारपाई पर लेट गया। वह चारपाई पर इधर से उधर करवटें बदलता रहा। जब उसने देखा कि उसकी मां सो चुकी है तब वह धीरे से अपनी चारपाई पर से उठा और उसने अपने सिराहने से एक लम्बा चाकू निकाल कर अपने कोट की जेब में डाल लिया। यह चाकू वह कुछ ही देर पूर्व बाजार से खरीद कर लाया था। शैलेन्द्र रात के अंधेरे में दरवाजे से वाहर निकल गया। वह सीधा टेलराम के मकान की ओर चल दिया। लगभग रात के १२ बज चुके थे। बह टेलराल के बंगले की दीवार के पीछे से चढ़कर घर के भीतर पहुँच गया। टेलराम बरांडे में बाहर सो रहे थे।

अन्दर उनकी स्त्री और शीला सो रही थी। कमरे की किवाड़ें खुली हुई थीं। अतः शीला और उसकी माँ की चारपाइयां बरांडे से ही दिखाई देती थी। नौकर बंगले की दूसरी ओर दरवाजे पर बने हुये क्वाटरों में सो रहे थे। शैलेन्द्र ने देखा कि टेलराम के सिराहने की तरफ बन्दूक रक्खी हुइ है। शैलेन्द्र ने धीरे से बन्दूक को उठाया। टेलराम

इतनी गहरी नींद में सो रहे थे कि उन्हें कुछ भी पता न लगा। शैलेन्द्र यह समझ रहा था कि बन्दूक भरी हुई है। अतः उसने यह सोचा कि चारपाई से कुछ दूर खड़े होकर बन्दूक से ही टेलराम का काम तमाम कर दिया। ज्यों ही वह पीछे की ओर बढ़ा। रात के अंधेरे में उसका पैर बरांडा की सीढ़ियों से फिसल गया और वह मय बन्दूक के धाड़ से नीचे गिरा। शैलेन्द्र के गिरने की आवाज से अकस्मात वकील, उनकी स्त्री और शीला तीनों जाग उठे। घबराहट में टेलराम और उनकी स्त्री चोर चोर कह कर चीखने लगे। शीला ने घबराकर बरांडे के बाहर का बिजली का बटन रोशनी करने के लिये दवा दिया। बिजली जलते ही वकील साहब और उनकी स्त्री के आश्चर्य की सीमा न रही जबकि उन्होंने देखा कि एक खूबसूरत नौजवान कोट पतलून पहने हुये उनके सामने खड़ा है। टेलराम ने क्रोध में आकर और घबराई हुई दशा में नौजवान को ओर देखकर पूछा।

"तुम कौन हो ? यहां क्यों आये हो।"

"मैं एक बदकिस्मत नौजवान हूँ जिसे आपने बरबाद किया है।" शैलेन्द्र के गुस्से में आंखें लाल करते हुये जवाब दिया।

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।"

"मतलब तो मैं आपको समझा देता किन्तु अफसोस कि कुदरत ने मेरा साथ नहीं निया।"

"यह पागल मालूम होता है। अभी पुलिस को टेलीफोन करके गिरफ्तार करवाता हूँ।"

"पागल था तो नहीं मगर आपने अवश्य पागल बना दिया है।"

"अभी वकील साहब कुछ कहने ही बाले थे कि शीला ने आगे बढ़कर देखा तो उसे मालूम हुआ कि वह उसका साथी शैलेन्द्र है।

उसके आश्चर्य की सीमा न रही । शैलेन्द्र की दृष्टि भी जब शीला पर पड़ी तो उसे भी बड़ा आश्चर्य हुआ । दोनों एक दूसरे को देखकर ठिठककर रह गये । इससे पूर्व कि शैलेन्द्र कुछ कहता, शीला ने शैलेन्द्र की ओर देखकर कहा ।

"शैलेन्द्र ! क्या बात है । आप यहाँ इस वक्त किस लिये आये ।"

"शीला ! यह सवाल मुझसे अभी मत पूछो । तुम्हें स्वयं ही पता चल जायेगा ।"

शैलेन्द्र और शीला की इस प्रकार एक दूसरे से बात चीत पर टेलराम और उनकी स्त्री को और भी आश्चर्य हुआ । अब वह यह तो समझ ही गये कि शीला और शैलेन्द्र एक दूसरे को जानते हैं । किन्तु जब उन्होंने देखा कि उनकी बन्दूक शैलेन्द्र के हाथ में है तब उन्हें और भी अधिक आश्चर्य हुआ । वह समझ नहीं पा रहे थे कि आखिर यह माजरा क्या है । शीला के मां बाप चुपचाप सहमें हुए खड़े थे । टेलराम ने घबड़ाई हुई आवाज़ में शीला से पूछा ।

"शीला ! यह कौन आदमी है । तुम इसे कैसे जानती हो ।"

"यह हमारे कालेज के क्लासफेलो हैं ।"

"लेकिन यह यहां क्यों आया है । ऐसा लगता है कि यह पागल होगया है ।"

"पिता जी ! ऐसा नहीं है । मैं अभी इनसे पता लगाकर आपको पूरी बात बताती हूँ ।"

यह कहकर शीला शैलेन्द्र को अलग बरांडे के एक तरफ ले गई । वह घबराई हुई थी और उसे शैलेन्द्र के वहां आने पर आश्चर्य भी हो रहा था । उसने घबराहट की दशा में कांपते हुये होठों से शैलेन्द्र की ओर देखकर कहा ।

"शैलेन्द्र ! आज आपको क्या होगया है । मेरी समझ में कुछ भी नही आरहा है कि आप इतनी रात में यहां किस लिये आये हैं ।"

"शीला मुझे यह नही मालूम था कि मेरे घर को बरबाद करने वाले वकील की तुम लड़की हो।"

"आखिर बात क्या है। साफ २ क्यों नहीं कहते।"

"शीला शायद तुम्हें यह भी नही मालूम कि मेरे पिता के तमाम जीवन की कमाई १००००) जिसको मेरी मां ने न जाने कितने अरमानों के साथ रख छोंड़ा था। उसे चोर भर कर लेगये।"

"किन्तु इसमें मेरे पिता का क्या कसूर है।"

"वह उन चोरों को अदालत से छुड़ाकर लाये।"

"शैलेन्द्र आप इतने लिखे पढ़े और योग्य व्यक्ति होकर ऐसी ना समझी की बात करते हैं। क्या आपको यह नहीं मालूम कि वकील का काम अदालत में मुल्जिम की पैरवी करने का हीता है।"

"लेकिन वकील का काम रिश्वत देकर गवाहों को तोड़ने का नही।"

"गवाहों को किसने तोड़ा।"

"तुम्हारे पिता जी ने।"

"शैलेन्द्र अगर मेरे पिता जी ने ऐसा किया है तो मैं उनकी ओर से क्षमा मांगती हूँ। उन्हें क्षमा कर दीजिये।

"शीला मैं अपली मां के अरमानों को कुचलकर उन्हें माफ कर कर दूंगा। यह नहीं होसकता। मैं अपनी मां के अरमानों के खून का बदला उनसे लेने आया था।

"क्या मतलब।"

"मतलब यह कि मैं उनका खून करने आया था।"

"खून करने।"

"शीला ने आश्चर्यजनक शब्दों में पूछा।"

"जी हां, खून करने ।"

"शैलेन्द्र मुझे दुख है कि आप लिखे-पढ़े नौजवान होकर अपने हृदय में इस प्रकार बदला लेने की भयंकर भावनायें रखते हैं ।"

"शीला मुझे अगर यह मालूम होता कि तुम ऐसे वकील की लड़की हो जिसका कार्य चोर और डकैतों को पनाह देने का है तो शायद मैं तुमसे कभी बातचीत भी नहीं करता ।"

"यह आप क्या कह रहे हो ।"

"मैं बिल्कुल ठीक कह रहा हूँ ।"

"तो क्या आप मुझे भी इतना ही बुरा समझते हो । जितना मेरे पिता जी को ।"

"नहीं, लेकिन मुझे आश्चर्य है कि तुम जैसी शरीफ लड़की इस घर में कैसे पैदा होगई ।"

"जो कुछ हुआ अब उसे भूल जाइये ।"

"तुम कहती हो तो मैं भूल जाऊँगा । लेकिन मेरा हृदय सदैव तुम्हारे पिता को कोसता रहेगा ।"

"ऐसा नहीं हो सकता ।" अब आपके हृदय पर मेरा अधिकार होगया है ।"

"मैं तुम्हारी बात नहीं समझा ।"

"जिस प्रकार मैं आपकी बात नही समझी उसी प्रकार आप भी मेरी बात नहीं समझ सकते ।"

"शीला मैंने तुम्हें सब कुछ साफ २ बता दिया । तुम भी मुझे बताओ ।"

"तो सुनिये । मैं हमेशा के लिये आपकी बन चुकी हूँ ।"

"क्या मतलब ।"

"यह कि मैं आपको अपना पति बना चुकी हूँ ।"

"शीला ने शरमाई हुई निगाहों से कहा ।"

"शीला यह तुम क्या कह रही हो बिना सोंचे समझे ।"

"नहीं । मैंने बहुत कुछ सोंच समझ लिया है ।।"

"लेकिन फैसलन करने से पहिले तुम्हें मुझसे पूछना चाहिये था ।"

"मैंने आपके दिल से पूछ लिया था ।"

"लेकिन शीला अब वह मेरा दिल नहीं रहा जो पहिले था ।" इस समय तो मैं यह खूनी इन्सान की शक्ल में खड़ा हूँ । और मैं यह दिल में ठान कर निकला था कि एक गुनहगार को कत्ल करने से मैं भले ही फांसी के तख्ते पर लटकजाऊं किन्तु हजारों बेगुनाहों को छुटकारा दिला सकता हूँ ।"

"किन्तु । आप मुझे पहले से भी अधिक सच्चे नेक और सज्जन मालूम हो रहे हैं । इस लिये कि आपने सच्चाई के साथ सब कुछ मुझसे कह दिया ।"

"मगर जब मेरी माँ को यह पता लगेगा कि तुम उस वकील की लड़की हो जिसने उसके अरमानों पर डाका डाला है तो वह मेरा विवाह तुमसे करने को कैसे तैयार होगी । ।"

"यदि उनकी मर्जी नहीं होगो तो फिर मैं अपना जीवन ऐसे ही सुधार लूँगी ।"

"क्या तुम्हारे पिता तुम्हारा विवाह मुझसे करने के लिये तैयार होंगे जबकि उन्हें यह मालूम होगा कि मैं उन्हें गोली मारने आया था ।"

"यह आप मेरे ऊपर छोड़िये ।"

"लेकिन तुम्हें यह भी मालूम है कि मैं एक गरीब मां का लड़का हूँ, और तुम एक दौलतमन्द बाप की लड़की हो ।"

"अमीर इन्सान दौलत से नही होता बल्कि दिल से"

शैलेन्द्र को शीला की बातों पर बड़ा आश्चर्य था। वह चकित रह गया। वह अपने हृदय में शीला की भूरि २ प्रशंसा कर रहा था। पहिले भी उसे शीला के प्रति बड़ी सद्भावना थी। अब उसे और भी अधिक होगई किन्तु सबसे अधिक झेंप और लजा उसे इस बात पर हो रही थी कि वह १००००) के पीछे किसी का खून करने आया। वह इसे अपनी बहुत बड़ी भूल समझ रहा था। और दिल ही दिल में लज्जित भी हो रहा था। साथ ही वह शीला के विशाल हृदय की सराहना भी कर रहा था कि यह जानते हुये कि वह उसके बाप का खून करने आया है। उसने अपने उदारता और अपने प्रेम में तनिक भी कमी नहीं दिखाई। शैलेन्द्र को शीला की नेकी और शराफत अपनी ओर आकर्षित कर रही थी। वह कभी स्वप्न में भी नहीं सोंच सकता था कि शीला जैसी नेक और शरीफ लड़की टेलराम जैसे बाप के यहां पैदा हो सकती है। किन्तु अब उसके सामने दो प्रश्न बड़े जटिल थे। एक तो यह कि वह एक गरीब मां का लड़का था और शीला एक अमीर बाप की लड़की। दूसरे यह कि उसकी मां को जब यह मालूम होगा कि शीला उस वकील की लड़की है जिसने उसके १००००) लूटते वाले चोरों को अदालत से छुड़ाया है। तो उसके हृदय पर क्या प्रभाव पड़ेगा। वह इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि अकस्मात उसकी जुबान से यह शब्द निकल पड़े।

"शीला क्या तुम यह जानती हो कि तुम्हारे पिता जी किस प्रकार के वकील हैं। और उनके कारनामे क्या हैं।"

"जी हां खूब जानती हूँ।"

"और उनके कारनामों को पसन्द भी करती हो।"

"नही। बिल्कुल नहीं।"

,'तो क्या तुमने कभी उनके कारनामों का विरोध किया है।"

"नहीं।"

"क्यों।"

"इसलिये कि मेरी आवाज में इतनी शक्ति नहीं थी कि उनका विरोध कर सकूँ।"

"तो फिर तुम कभी उनका बिरोध नहीं सकती हो।"

"कर सकती हूँ।"

"कब।"

"जब मुझे आप जैसा कोई साथी मिले जिसकी प्रेरणा से मैं अपने दिल और दिमाग को मजबूत कर सकूं।"

क्या तुम्हारे पिता जी तुम्हारा बिवाह अब भी मुझ से करने को तैयार होंगे।"

"यह आप मुझ पर छोड़िये।"

"तुम अपने पिता जी से मेरे यहाँ आने के सम्बन्ध में क्या सफाई दोगी।"

"हर एक बात इसी समय नहीं बताई जा सकती हैं। मैं क्या कहूँगी। यह मुझ पर छोड़िये।"

"मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ। मुझे नहीं मालूम था कि तुम वास्तव में साक्षात्त देवी हो।"

"ऐसा कहकर आप मुझे शर्मिन्दा न कीजिये।"

"इस समय मुझे आज्ञा दीजिये। जैसी आपकी इच्छा होगी, मुझे स्वीकार होगी।"

"नहीं। मैं अपने पिता को सब कुछ समझा दूं। उस समय तक आप ठहरिये।"

शीला ने शैलेन्द्र के सम्गन्ध में अपने पिता टेलराम को यह बता दिया कि वह वही नवयुवक है जिससे वह विवाह करना चाहती है।

वह यहाँ इस समय क्यों आया इसके सम्बन्ध में वह कुछ समय बाद बतलायेगी। टेलराम और उसकी स्त्री ने शीला के इन शब्दों को सुनकर शैलेन्द्र को बड़े सम्मान पूर्वक बिठाया। वह दोनों यह समझे कि शायद शैलेन्द्र रात में शीला से मिलने आया है और शायद शीला तथा शैलेन्द्र ने पहिले से ही इस समय मिलना निश्चित किया होगा। शैलेन्द्र ने शीला और उनके माता-पिता से अपने घर जाने की आज्ञा माँगी और वह उनकी आज्ञा पाकर अपने घर की ओर चला गया। वह जब घर पहुँचा तो भी काफी रात थी। शैलेन्द्र की आहट पर उसकी माँ जाग उठी। उसने शैलेन्द्र से इतनी रात में बाहर जाने का कारण पूछा तो शैलेन्द्र ने टालमटोल शुरू कर दी और यह कह दिया कि उसे दरवाजे के बाहर कुछ खटका मालूम हुआ था। इसलिए वह उठकर बाहर चला गया था।

कुछ ही समय पश्चात शीला और शैलेन्द्र के बी० ए० की परीक्षा का फल निकला। दोनों अच्छे नम्बरों से पास हो गये। शीला के पिता टेलराम ने शैलेन्द्र की मां के पास शीला के विवाह का संदेशा भेजा। शैलेन्द्र की मां ने शैलेन्द्र की इच्छानुसार विवाह करने की अनुमति देदी। शीला और शैलेन्द्र का विवाह हो गया। शीला के पिता टेलराम को यह पूर्ण विश्वास था कि शैलेन्द्र उसके घर जवांई के रूप में उसी के घर रहेगा और उसकी सारी सम्पत्ति तथा धन शीला और शैलेन्द्र के उपयोग में आयेगी। किन्तु जब वकील साहब शैलेन्द्र के घर शीला के विवाह के पश्चात शीला को बुलाने गये तो शीला ने साहस पूर्वक अपने पिता को साफ २ शब्दों में कह दिया।

"पिता जी ! अब मैं आपके यहाँ नहीं जा सकती।"

"क्यों। क्या शैलेन्द्र ने कुछ कहा है।"

"नहीं। उन्होंने कुछ नहीं कहा है। मैं जो कुछ कह रही हूँ अपनी इच्छा से कह रही हूँ।

"आखिर मुझसे नाराज होने का क्या कारण है।"

"पिता जी ! मैं आपकी लड़की हूँ। आपकी सेवा करना मेरा कर्तव्य है। किन्तु मेरे और आपके बीच में एक ऐसी वस्तु अटक गयी है कि मेरा और आपका रास्ता अलग २ कर दिया है।"

"बेटी ! वह कौन सी वस्तु है।"

"वह हैं आपकी दौलत।"

"बेटी मेरी दौलत तुम्हारी दौलत है। तुम्हारे अतिरिक्त मेरा और कौन है जो उस दौलत का मालिक होगा।"

"किन्तु पिता जी आप की उस दौलत में ऐसा बिष भरा हुआ है कि वह मेरे दिल और दिमाग को दूषित बना देगा।"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।"

"मेरा मतलब यह है कि आपने दौलत जिस प्रकार और जिस ढंग से पैदा की है उसे अनुभव करके भी मेरा हृदय कांपने लगता है और मेरी गर्दन शर्म से नीचे झुक जाती है।"

शीला और उसके पिता टेलराम में यह बातें हो रही थीं कि इतने में शैलेन्द्र की मां आगई। शैलेन्द्र की मां ने शीला को समझाया कि वह इस प्रकार के शब्दों को कहकर अपने पिता के दिल को दुखी न करे। शीला चुप रही। उसकी आँखों से कुछ आंसू टपक पड़े। टेलराम समझ गये कि शीला उनकी हरकतों और उनके कारनामों से दुखी है। उनका दिल भी भर आया और वह यह कहकर चले गये।

"अच्छा बेटी ! मैं जाता हूँ। भगवान तुम्हें खुश रखे।

शीला और शैलेन्द्र के विवाह को अब कई वर्ष बीत चुके हैं। शैलेन्द्र को कही किसी दूर शहर में नौकरी मिल गई है। वह अपनी मां और शीला को लेकर अब उसी नगर में चला गया है। वकील साहब कुछ

दिनों तक तो शीला के शब्दों को याद करके दिल में यह सोंचपे रहे कि ऐसी दौलत का क्या करना जिसके लिए स्वयं उनकी औलाद ही घृणा और नफरत करती हो किन्तु कुछ ही दिनों तक यह विचार उनके दिल में रहे। दौलत का आकर्षण उनके हृदय को फिर एक बार खींचकर वहीं ले गया जहाँ वह पहिले थे। वह शीला के शब्दों को भूल गये और फिर उन्हीं दांव पेचों में फँस गये जिनमें पहिले फँसे हुये थे। उनकी वकालत फिर चमक उठी। दौलत के नशे में वह शीला और शैलेन्द्र सबको भूल गये। दौलत पाकर मनुष्य में जो अहंकार हो जाता है वही वकील साहब को भी होगया। वह कौन सा ऐसा व्यसन है जो दौलत के नशे में वकील साहब ने नहीं किया। शराब, कबाब, जुआ और क्लब इनसे अब वकील साहब को छुटकारा ही नहीं मिलता कि वह शीला और शैलेन्द्र के सम्बन्ध में कुछ सोंच भी सके।

स्पेशल मजिस्ट्रेट

लाला रोशनलाल तक्दीर के बड़े सिकन्दर थे। जब से ब्रिटिश सरकार के खैर ख्वाहों में उन्होंने अपना नाम लिखाया तब से बराबर वह पद पर आसीन रहे किन्तु जब ब्रिटिश सरकार का सूर्य ढलनें लगा तब उन्हें बड़ी परेशानी हुई। उन्होंने बहुत दौड़ धूप की, कि किसी प्रकार नई सरकार में भी उनकी दाल गलने लगे। धीरे धीरे उन्होंने कोट पतलून और नेक टाई आदि उतार कर खद्दर के कपड़े पहनना आरम्भ कर दिये। ब्रिटिश सरकार उतनी तेजी से नहीं बदली जितनी तेजी से लाला रोशनलाल ने अपना चोला बदल दिया। वेचारे लाला जी का स्पेशल मजिस्ट्रेट के अतिरिक्त और कोई पेशा ही न था किन्तु फिर भी उनके ठाट बाट और रहन-सहन को देखते हुये कोई यह नहीं कह सकता था कि उनकी गणना बड़े रईसों में नहीं है। ब्रिटिश सरकार के समय में लाला जी सुबह नौ बजे ही भोजन करके निकल जाते और कलेक्टर, कमिश्नर तथा अन्य बड़े सरकारी अधिकारियों को सलाम झुकाते हुये ग्यारह बजे तक अपने न्यायालय के कमरे में पहुँच जाते थे। सायंकाल को जब वे न्यायालय से उठते तो अपने इष्टमित्रों के घर होते हुये कहीं रात के नौ बजे तक अपने घर पहुँचते थे। लाला रोशनलाल ने अब भी अपने इस कार्यक्रम को बदला नहीं। वह जब सुबह को नौ बजे अपने घर से चलते तो खद्दर की शेरवानी, चूड़ीदार पायजामा और गांधी टोपी पहनकर नगर के सभी बड़े नेताओं के दरवाजे की चौखटों को चूमते हुये ठीक ग्यारह बजे अपने न्यायालय में पहुँच जाते थे। सप्ताह में एक दिन कलक्टर और कमिश्तर से भेंट करने अवश्य ही जाते थे।

लाला रोशनलाल के रहन सहन का स्तर बहुत ही ऊंचा था। रहने के लिये एक शानदार बंगला और सवारी के लिये मोटरकार, और भी ठाट बाट किसी रईस से कम न थे। लाला जी का खर्च भी एक हजार रुपये मासिक से कम न था। लाला जी के जो कुछ ठाट थे वह तो थे ही किन्तु उनकी स्त्री के ठाट उनसे भी कहीं अधिक बढ़े चढ़े और निराले थे। जब लाला जी न्यायातय में जाते तो उनकी स्त्री दिन में दो दौ तीन-तीन बार पोशाकें बदल २ कर अपने पास पड़ोस के बंगलों में जाकर स्त्रियों के साथ गपशप करती थीं। नौकरों पर तो वह ऐसा हुक्म चलाती थी कि बेचारे सब काँपते ही रहते थे। कोई मुकदमा ऐसा नहीं होता था जिसमें लाला जी का सौदा सौ-दो-सौ का न होता हो। इसी कारण लाला जी के यहां मिठाइयों और डालियों की भरमार रहती थी। बहुत से मुकद्मों में तो लाला जी बड़े लम्बे २ हाथ मारते और मनमानी रकम ऐंठ लेते थे। नगर में लाला जी की बेइमानी और भ्रष्टाचार की आमतौर पर चर्चा थी किन्तु लाला जी का प्रभाव इतना जबरदस्त था कि किसी को यह साहस न था कि लाला जी के विरुद्ध अपना मुह खोल सके। हर व्यक्ति को यह मालूम था कि लाला जी का मेल-जोल नगर के सब बड़े अधिकारियों और ऊँचे नेताओं से है। इसलिये सब लाला जी से डरते थे। लाला जी को खुशामद करने में तो कमाल प्राप्त था और इसी खुशालद के आधार पर लाला जी ने नगर के लगभग सभी बड़े अधिकारियों और नेताओं को अपना हितेषी बना रक्खा था। लाला जी के न्यायालय में झूठे से झूठे मुकदमों में लोगों को सजा हो जाती थी और सच्चे से सच्चे मुकदमें छूट जाते थे। हर मुकदमें की कीमत उस मुकदमें के आधार पर ही आंकी जाती थी।

लाला रोशनलाम का पेशकार लाला जी से भी दो कदम आगे था। सौदा पटाने में और लोगों से रुपया एंठने में वह इतना होशियार और चलतापुर्जा था कि उसे अपनी कला में कमाल हासिल था। जो भी

उसके चंजुल में फंस जाता तो फिर वह उसको अच्छी तरह हजामत बनाता था। उसे लोगों को फंसाने में और उनसे रुपया ऐंठने में इसलिये और भी विशेष रुचि थी कि लाला जी की कमाई का २५ प्रतिशत रुपया पेशकार की जेब में जाता था किन्तु पेशकार इतना चतुर था कि बजाय २५ प्रतिशत के कभी २ तो शतप्रतिशत रुपया स्वयं ही हजम कर जाता और लाला जी को पता भी नहीं लगने देता। कभी कभी ऐसा भी होता था कि पेशकार और चपरीसी दोनों ही मिलकर मुकदमे के वादी और प्रतिवादी दोनों को मूड़ते और आपस में ही हिस्सा बाट कर बैठ जाते।

लाला रोशनलाल की अदालभ एक प्रकार से बनिये की दूकान थी। जहां सुबह से शाम तक मुकदमों का सौदा ही होता रहता था। लाला रोशनलालाल का यह व्यापार केवल अदालत के भीतर ही नहीं बल्कि नगर और देहात के विभिन्न स्थानों में उनके दगालों के द्वारा जारी रहता था। कोई भी ऐसा अधिकारी नगर में नहीं था जो लाला जी से कोई पूछतांछ कर सके, बल्कि उल्टे सब लाला जी की हां में हां मिलाते थे। मुकदमों के अतिरिक्त लाला जी का एक दूसरा और भी व्यापार था। वह यह कि बड़े बड़े अधिकारियों से लोगों की सिफारिश करने में लाला जी काफी लम्बी रकम ऐंठ लेते थे। लाला का सिफारिश करने का ढंग और सिफारिश के लिए रुपया लेने का ढंग भी निराला ही था। जब भी कोई व्यक्ति किसी काम को सिफारिश के लिए लाला जी के पास आता तो लाला जी अपने पेशकार के कान में चुपके से कुछ कह देते थे। पेशकार तुरन्त ही उस व्यक्ति को अलग लेजाकर सौदा पटा लेता था। सुबह से शाम तक लाला जी की कोठी पर मुकदमें वाले और सिफारिश कराने वालों का मेला लगा रहता था।

इतवार को छुट्टी के दिन लाला जी अपनी स्त्री बच्चों के साथ सैर करने और बाजार घूमने निकलते थे। जिस बाजार में निकल जाते

दूकानदार लोग खड़े होकर उन्हें सलाम झुकाते थे और जिस दुकान पर भी जाकर बैठ जाते दूकान वाले बड़े तपाक से उनकी आव भगत करते और जो वस्तु भी लाला जी या उनकी स्त्री बच्चों को पसन्द आती उसे बिना कीमत लिये हुये भेंट करते। किसी दूकानदार में इतना साहस कहां था जो लाला जी से किसी भी वस्तु की कीमत मांगता। यहां तक कि यदि किसी हलवाई की दूकान पर लाला जी और उनके बच्चे जाकर खड़े हो जाते तो बिना कुछ पैसा टका दिये हुये खोमचे के खोंमचे उड़ा जाते। इस प्रकार लाला रोशनलाल का दबदबा सभी पर चलता था।

एक दिन इतवार की छुट्टी में लाला रोशनलाल अपनी स्त्री और बच्चों सहित बाजार घूमने निकले। उनकी स्त्री की निगाह एक साड़ी वाले की दूकान पर पड़ी। लाला जी की स्त्री ने उन्हें संकेत किया कि साड़ी वाले की दूकान पर चला जाय। लाला जी अपनी स्त्री को लेकर साड़ी की दूकान पर जाकर बैठ गये। दूकान का मालिक खाना खाने घर चला गया था। दूकान पर अपने लड़के धीरेन्द्र को बैठा गया था। दूकान पर पहुँचते ही लाला जी की स्त्री ने बढ़िया २ साड़ियां दिखाने की फर्माइश की। धीरेन्द्र ने अच्छी से अच्छी साड़ियां जो भी दूकान में थीं लाला जी की स्त्री को दिखाईं।

बहुत कुछ देखभाल करने के बाद उन्हें एक साड़ी पसन्द आई जिसका मूल्य ६०) था। लाला जी ने धीरेन्द्र से उस साड़ी को बांधकर देने को कहा। धीरेन्द्र ने झट साड़ी को एक कागज में बांधकर लाला जी की स्त्री को देदी और साड़ी का बिल ६०) का काटकर लाला जी के हवाले करना चाहा। बिल का देखना था कि लाला जी क्रोध से उबल पड़े और धीरेन्द्र को डांटकर बोले—

"तुमको मालूम नहीं मैं कौन हूँ ?"

"जी हां मुझे नहीं मालूम आप कौन हैं।"

धीरेन्द्र ने मुसकराते हुये उत्तर दिया।

"मालूम होता है कि तुम नये दूकानदार हो।"
लाला जी ने तेवर चढ़ाते हुये कहा।
"मैं दूकानदार नहीं बल्कि दूकानदार का लड़का हूँ।"
"अच्छा ! अब मैं समझा। तुम क्या करते हो ?"
"श्रीमान जी, मैं कालेज में पढ़ता हूँ।"

"इसलिये तुम मुझे नहीं पहचान सके, अच्छा तुम्हारे पिता जी जब दुकान पर आये तो उनसे कह देना कि लाला रोशनलाल स्पेशल मजिस्ट्रेड अपनी स्त्री के लिये साड़ी ले गये हैं।"

"नहीं, श्रीमान जी, मैं बिना कीमत लिये हुये साड़ी नहीं दे सकता। यदि आपको उधार लेना है तो जब पिता जी आ जायें उस समय ले जाएँ।

"तुम हमारा अपमान कर रहे हो। तुम्हें नही मालूम कि इस अपमान का नतीजा क्या होगा।"

"लाला जी क्या किसी वस्तु की कीमत मांगना भी अपमान है।"

"तूने अभी दुनियां नहीं देखी, इसलिये तो कहावत मशहूर है कि जब तक ऊँट पहाड़ के नीचे नहीं जाता है बलबलाता रहता है।"

"देखिये श्रीमान जी, आप मजिस्ट्रेट होंगे अपने घर के। मुझे बुरा भला कहने का आपको कोई अधिकार नहीं।"

"अच्छा, तुम्हारी यह हिम्मत। याद रक्खो तुम्हारी यह गुस्ताखी माफ नहीं की जा सकती।"

"जाइये, बहुत देखे मैंने ऐंठने वाले, जो आपको करना हो कर लीजिये।"

"याद रक्खो तुम इसी साड़ी को लेकर आओगे और मेरे दरवाजे पर नाक रगड़ोगे।"

यह कहकर लाला रोशनलाल अपनी स्त्री के सहित साड़ी को दूकान पर पटक कर चले गये। लाला रोशनलाल क्रोध में आपे से बाहर हो रहे थे। उन्होंने अपनी स्त्री से घर लौट चलने के लिये कहा। अतः दोनों घर लौटे, घर पर पहुँचते ही लाला जी ने दूकानदार को फंसाने के लिये योजना बनाई। उधर लाला जी के चले जाने के कुछ ही देर बाद धीरेन्द्र के पिता दूकान पर आ गये। धीरेन्द्र के उन्हें अपने और मजिस्ट्रेट के बीच हुई सब बातों को बता दिया। धीरेन्द्र के पिता बेचारे एक बड़े सज्जन और भले आदमी थे। वह तुरन्त ताड़ गये कि मजिस्ट्रेट उन्हें क्षति पहुँचाने की अवश्य कोई न कोई चाल चलेगा। इसलिये उन्होंने धीरेन्द्र को समझाया कि वह साड़ी जो मजिस्ट्रेट की स्त्री पसन्द कर गई है उसे उनके यहाँ पहुँचा दियां जाय, किन्तु धीरेन्द्र ने ऐसा करने से साफ इन्कार कर दिया। और अपने पिता से निर्भीकता पूर्ण शब्दों में कहा—

"पिता जी, इसका मतलब तो यह है कि अत्याचारी के सामने सर झुका दिया जाये।"

"लेकिन तुम यह नहीं जानते कि वह बहुत बड़ा प्रभावशाली शक्ति है।"

"अगर इस प्रकार के प्रभावशाली व्यक्ति के डर से सब लोग झुक जायेंगे तो फिर संसार से नेकी और ईमानदारी का नाम ही मिट जायेगा'।'

"तुम यह नहीं जानते कि हम उसके मुकाबले में कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।"

"क्यों ?"

"इसलिये, एक चना भाड़ को नहीं फोड़ सकता। तुम्हें नहीं मालूम है कि नगर के सभी अधिकारी उसके मित्र हैं।"

"धीरेन्द्र और उसके पिता में अभी बातचीत हो ही रही थी कि इतने में एक पुलिस के दरोगा कुछ सिपाहियों सहित दुकान की ओर आते दिखाई दिये। धीरेन्द्र समझ गया कि यह सब मजिस्ट्रेट के भेजे हुये ही आ रहे हैं और अवश्य ही मजिस्ट्रेट ने उसके पिता के विरुद्ध कुछ न कुछ जाल बट्टा बनाया है।

धीरेन्द्र ने चुपके से अपने पिता को दूकान से घर चले जाने को कहा। उसका पिता वहाँ से खिसक गया। धीरेन्द्र स्वयं दूकान की गद्दी पर जमकर बैठ गया। ज्यों ही दरोगा जी दूकान पर पहुँचे उन्होंने निहायत अपमानजनक शब्दों में धीरेन्द्र से कहा—

-'इस दूकान का मालिक कहां भाग गया, तुम कोन हो।"

"मैं उन्हीं का लड़का हूँ। कहिये आपको उनसे क्या काम है।"

"उसका वारन्ट है। हम उसे गिरफ्तार करने आये हैं।"

"किन्तु उनकी खता क्या है।"

"उन्होंने लाला रोशनलाल स्पेशल मजिस्ट्रेट का अपमान किया है"

"यह गलत है। मजिस्ट्रेट साहब की बात तो मुझसे हुई थी मेरे पिता जी से नहीं।"

"हम कुछ नहीं सुनना चाहते। बताओ तुम्हारा बाप कहां है।"

"श्रीमान जी, आप नाराज क्यों हो रहे हैं। वह आज कहीं नगर से बाहर चले गये हैं। जब आप कहेंगे मैं उन्हें थाने भेज दूँगा।"

"उससे कह देना कि एक सप्ताह के भीतर थाने में हाजिर हो जाये नहीं तो उसका मकान और दुकान दोनों की कुर्की हो जायेगी।"

यह कहते हुये दरोगा जी सिपाहियों सहित दूकान से चले गये। धीरेन्द्र ने अपने पिता को घर जाकर सब कुछ सुना दिया। धीरेन्द्र के पिता डर के कारण कांपने लगे। उनकी आंखों के सामने अंधेरा सा छा गया और उन्हें ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि उन पर मुसीबत

का पहाड़ टूट पड़ा हो। धीरेन्द्र भी बहुत कुछ चिन्ता में पड़ गया। उसने अपने पिता को ढाढस बंधायाऔर विश्वास दिलाया कि वह उन्हें जेल नहीं जाने देगा। बहुत कुछ सोंच विचार के पश्चात उसे स्मरण हो आया कि उसका एक क्लास का साथी किसी बड़े पुलिस के सी० आई० डी० अधिकारी का लड़का है। धीरेन्द्र तुरन्त अपने घर से अपने सहपाठी के घर की ओर चल पड़ा। वह जब अपने सहपाठी के घर पहुँचा तो भाग्यवश वह घर पर ही मौजूद था। धीरेन्द्र ने अपने सहपाठी को सब कुछ कह सुनाया। धीरेन्द्र का सहपाठी धीरेन्द्र को अपने पिता के पास ले गया। उनसे भी धीरेन्द्र ने जो कुछ उस पर और उसके पिता पर गुजरी थी सब कह सुनाई। यह अधिकारी कुछ ही दिनों पहले नगर में आये थे। अभी ईनकी भेंट लाला रोशनलाल से नहीं हो पाई थी किन्तु उन्होंने लाला रोशनलाल की घूस खोरी और बेईमानी की बातें सुन रक्खी थी। वह चाहते भी थे कि किसी प्रकार लाला जी को रंगे हाथों पकड़ा जाये। भाग्यवश इन सूचनाओं की पुष्टि करने वाला उनके घर पर ही आ गया। उन्होंने धीरेन्द्र की ओर देखकर कहा—

"धीरेन्द्र! मुझे तुमसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई, किन्तु तुम्हारे बाप के छुटकारे के लिये तुम्हें मेरे बताये हुये रास्ते पर चलना पड़ेगा।"

"मैं आपके हर आदेश का पालन करूंगा।"

"यदि तुमने ऐसा किया तो न केवल तुम्हारे पिता को बल्कि सारे नगर को मजिस्ट्रेट से छुटकारा मिल जायेगा।"

"मैं आपके इस एहसान के लिये जीवन भर ऋणी रहूँगा। बताइये वह क्या आदेश है।"

"वह यह कि मजिस्ट्रेट के पास तुम अपने पिता या किसी अन्य व्यक्ति को भेज कर वह साड़ी और जितना रुपया वह मांगे उसे दिलवा दो।"

"किन्तु उससे क्या लाभ होगा।"

"तुम नहीं जानते हो उससे यह होगा कि तुम्हारे पिता के बजाय मजिस्ट्रेट को जेल जाना पड़ेगा।"

"वह कैसे।"

"वह इस प्रकार कि मैं साड़ी और रुपयों पर अपने छोटे से हस्ताक्षर कर दूंगा और जब तुम्हारे पिता उसे यह साड़ी और रुपया देंगे, मैं मौके पर इधर उधर मौजूद रहूँगा और उन्हें गिरफ्तार कर लूंगा।"

"किन्तु आपको पता कैसे लगेगा कि उसने रुपया ले लिया।"

"पहले तुम ऐसा आदमी ढूंढो जो रुपया और साड़ी ले जाकर उसे दे। मैं उसे सब कुछ बता दूंगा।"

"श्रीमान जी, इसके लिये मैं तैयार हूँ किन्तु यह तो बताइये यदि उसने हजार दो हजार रु० मांगे तो इतना रुपया मैं कहां से लाऊंगा।"

"तुम इसकी चिन्ता मत करो इसके लिये मैं तुम्हें रु० दे दूंगा।"

"श्रीमान जी, इसके लिये मैं आपका सदैव आभारी रहूँगा। मैं अभी जाकर किसी न किसी व्यक्ति को लेकर आपके सामने आता हुं।"

धीरेन्द्र यह कह कर घर चला गया। उसने अपने और सी०आई० डी० अधिकारी के बीच आ सारा वार्तालाप अपने पिता जीं को सुना दिया और साथ में यह भी कह दिया कि इस कार्य के लिये शीघ्र से शीघ्र किसी व्यक्ति को तेयार करना चाहिये। बहुत कुछ तलाश करने के पश्चात धीरेन्द्र का एक साथी इस कार्य के लिये तैयार होगयाा। धीरेन्द्र उसे लेकर सीधा सी०आई०डी० अफसर महोदय के मकान पर पहुँचा। अधिकारी महोदय ने धीरेन्द्र के साथी को सौ सौ के एक हजार रु० के नोट अपने हस्ताक्षर करके दिये और उसे बता दिया कि जितना रुपया भी मजिस्ट्रेट मांगे वह उसे दे दे और हर प्रकार की खुशामद आदि करके उसे यह सिद्ध करदे कि वास्तव में वह धीरेन्द्र के पिता जी को छुड़ाने

के लिये ही आया है। अतः धीरेन्द्र का साथी सी० आई० डी० अफसर महोदय से सब आदेश और संकेत लेकर एक हजार रुपये और वह साड़ी जो उसकी स्त्री ने पसन्द की थी लेकर चला। उसके पीछे सी० आई० डी अधिकारी, एक मजिस्ट्रेट और कुछ कांसटेबिलों के साथ हो लिये। सी० आई० डी० अधिकारी ने धीरेन्द्र के साथी को यह आदेश दे दिया था कि जैसे ही वह रुपया और साड़ी लाला जी को दे दे वह जोर से खांसने लगे ताकि उन्हें संकेत मिल जाये और वह जाकर लाला जी को गिरफ्तार कर ले।

नियत समय पर धीरेन्द्र का साथी लाला जी के घर पहुँचा। नौकर अन्दर से निकलकर आया। धीरेन्द्र के साथी ने लाला जी से मिलने की इच्छा प्रकट की।। नौकर धीरेन्द्र के साथी के हाथ में साड़ी देखकर यह समझ गया कि लाला जी के लिये भेंट लाया है। अतः वह तुरन्त ही उसे लाला जी के पास ले गया। उसने बड़ी नम्रत पूर्वक और खुशामद करते हुये कहा कि वह उस साड़ी को लेकर आया है जिसे उनकीस्त्री ने पसन्द किया था। लाला जी ने मुसकराते हुये अपनी स्त्री को अन्दर से आवाज देकर कहा—

"देखो ! यह वही साड़ी है जिसे तुम दुकान पर लेने गई थी मगर आज यह साड़ी खुद तुम्हारे घर आगई।"

"मैं तो पहले ही कहती थी कि साड़ी वाला आयेगा और हमारे दरवाजे पर नाक रगड़ेगा।"

लाला जी की स्त्री ने अभी पूरा वाक्य कह भी न पाया था कि धीरेन्द्र के साथी ने लाला जी के पैर पकड़ कर कहा—

"श्रीमान जी, मैं साड़ी के साथ एक हजार रुपया भी आपको भेंट करने लाया हूँ।"

"देखा बीबी तुमने साड़ी के साथ एक हजार रुपये का तावान भी है।"

लाला जी की स्त्री ने झट साड़ी उठाकर अपनी बगल में दबा ली और एक हजार रुपये के नोट लाला रोशनलाल ने सम्भाले। नोटों का सम्भालना था कि धीरेन्द्र का साथी जोर से खांसा। उसके खांसते ही सी० आई० डी० अफसर, मजिस्ट्रेट और पुलिस के सिपाहियों को लेकर लाला जी के ड्राइंग रूम में आ धमके। उन्होंने रंगे हाथ लाला जी को गिरफ्तार कर लिया। कुछ देर तक तो लाला जी और उनकी स्त्री अकड़ दिखाते रहे किन्तु जब सी० आई० डी० अधिकारी ने अपना शनाख्ती कार्ड दिखलाया तो लाला जी के होश उड़ गये। काटो तो बदन में खून नहीं। आंखों के सामने डर की वजह से अंधेरा छागया। लाला जी गिड़गिड़ाकर सी० आई० डी० अधिकारी के पैरों पर गिर पड़े। सी० आई० डी० अधिकारी कब बख्शने वाला था। उसने तुरन्त ही मजिस्ट्रेट जो उसके साथ गये थे, के सामने लाला जी का ब्यान लेकर पुलिस को संकेत किया। कि वह लाला जी को ले चलें। सिपाहियों ने अपने अधिकारियों का संकेत पाते ही लाला जी के हाथों में हथकड़ी डाल दी। हथकड़ियों का पड़ना था कि लाला जी की बीबी धाड़े मार मार कर रोने लगी। उसने बहुत कुछ खुशामद की किन्तु सी० आई० डी० अफसर ने एक न मानी और वह उन्हें गिरफ्तार करके जेल ले गये।

लाला रोशनलाल पर न्यायालय में मुकदमा चला। धीरेन्द्र, उसके पिता और धीरेन्द्र के साथी की न्यायालय में गवाहियां हुईं। लाला रोशनलाल को चार साल की कैद और चार हजार रुपये जुरमाने की सजा हुई। उनके घर की तलाशी हुई। हजारों रुपये के नोट लाला जी के घर में निकले। पुलिस उन्हें ले गई और वह सब घूस के रुपये साबित होकर जब्त होगये। जेल चले जाने के बाद लाला रोशनलाल

के सब साथी और सम्बन्धी एक एक करके खिसक गये। यहां तक कि चार साल के समय में लाला जी की बीबी को छोड़कर कोई भी जेल में मुलाकात करने न आया।

जेल से छूटने के पश्चात लाला जी अपना मुंह छिपाकर न जाने कहां चले गये और बच्चे बेघरबार होकर वर्षों इधर उधर भटकते रहे किन्तु लाला जी का कहीं पता न चला। अब बच्चों का भी पता नहीं कि वह कहां हैं। शहर में जितने लोग उतने ही मुंह और उतनी ही बातें, लाला और उनके बीबी बच्चों के सम्बन्ध में सुनने में आती हैं। किन्तु आज तक लाला जी का और उनकी स्त्री बच्चों का किसी को पता नहीं लग सका।

"बरात"

शोभा वास्तव में अपने घर की शोभा थी। वह जितनी ही योग्य और सुन्दर थी उतनी ही लिखने पढ़ने में भी होनहार थी। वह कालिज में सदैव अपनी कक्षा में अच्छे नम्बरों से पास होती थी। उसने बी० ए० की डिग्री भी कालिज से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। प्रत्येक वर्ष कालिज के वार्षिकोत्सव पर उसे न जाने कितने पुरस्कार और मेडिल मिलते थे और कालिज की अध्यापिकायें भूरि-भूरि शोभा की प्रशंसा करती थी। शोभा की बहुत सी सहेलियों ने भी शोभा को न जाने कितने पुरस्कार भेंट में दिये थे। यदि शोभा किसी बड़े आदमी की लड़की होती तो न जाने कितने समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में उसके फोटो छपते और उसकी प्रशंसा से अखबारों के कालम भरे जाते। किन्तु शोभा अभाग्यवश एक गरीब आदमी की लड़की थी। उसका पिता शंकरलाल किसी हाई स्कूल में केवल १२०) मासिक वेतन पर अध्यापक थे। शंकरलाल के शोभा के अतिरिक्त और कोई संतान न थी। शंकर लाल ने शोभा को बचपन से ही लिखाने पढ़ाने में बहुत रुचि दिखाई थी। जब शोभा बड़ी हुई तो उन्होंने अपने घर के खर्चे को कम करके शोभा का प्रवेश कालिज में कराया और उसे ग्रेजुएट कराया।

शोभा के बी० ए० पास करने के बाद शंकरलाल को शोभा के विवाह की चिन्ता हुई। किन्तु शोभा जैसी लिखी पढ़ी बी० ए० पास लड़की के लिये कम से कम ग्रेजुएट लड़के की ही आवश्यकता थी। शंकरलाल के पास एक मकान को छोड़कर और कोई सम्पत्ति भी नहीं थी जिसको बेचकर वह शोभा का विवाह किसी ग्रेजुएट व अच्छे लड़के से कर सके। जो वेतन उन्हें मिलता था वह उनके गुजर बसर के लिये

ही पर्याप्त न था। शंकरलाल को दिनरात यही चिन्ता लगी रहती थी कि शोभा के लिये कोई अच्छा लड़का ढूंढ़ सके। वह बेचारा प्रातःकाल से सायंकाल तक इसी धुन में व्यस्त रहता। जिस एम० ए०, या बी० ए० लड़के के माता पिता से शोभा की शादी के सम्बन्ध में बात करता तो वह हतना धन मांगते और इतनी माँगें रखते कि बेचारा शंकरलाल निराश होकर घर लौट आता। कोई भी ग्रेजुएट लड़का ऐसा नहीं था जिसकी कीमत दस पांच हजार से कम हो। बेचारे शंकरलाल के पास इतना धन कहां था। उसकी स्त्री ने बड़ी मुश्किल से अपने जीवन भर में अपना पेट काटकर एक दो हजार रुपये शोभा के विवाह के लिये बचा रक्खे थे। किन्तु इतने रुपये में तो ग्रेजुएट लड़के का मिलना तो अलग रहा, कोई हाई स्कूल पास लड़का भी मिलना मुश्किल था। शंकरलाल बेचारे दिन और रात इसी गम में घुलने लगे। शंकरलाल की स्त्री को यह सब कुछ मालूम था और वह जानती थी कि शोभा के पिता शोभा के विवाह के लिये दौड़ धूप कर रहे हैं किन्तु उन्हें कोई उचित लडका मिल नहीं रहा है। शंकरलाल की स्त्री भी इसी चिन्ता में चिन्तित रहती थीं! वह कभी कभी निराशा की दशा में अपने भाग्य को कोसने लगती और कभी समाज को गाली देने लगती। शोभा भी अपने माता पिता की परेशानियों का अनुभव कर रही थी और समझ रही थी कि समाज में रुपयों के मुकाबले में योग्यता की कोई कीमत नहीं। शोभा अक्सर अपने मां बाप को सान्त्वना देने का प्रयत्न करती। उसने कई बार अपने मां बाप से यह भी आग्रह किया कि वह उसे कहीं नौकरी करने की आज्ञा देदें। किन्तु शोभा के मां-बाप ऐसा करने में अपनी बदनामी समझते थे।

बहुत कुछ सोंच विचार करने के पश्चात शंकरलाल ने यह निश्चय किया कि वह अपने मकान को गिरवी रखकर शोभा का विवाह कर दे। शंकरलाल ने अपने मकान को गिरवी रखने के सम्बन्ध में नगर के कई

सेठ साहूकारों के यहां दौड़धूप की और अन्त में एक साहूकार के यहाँ मकान १०,०००) में रहन रख दिया। मकान रहन रखने के पश्चात शंकरलाल ने एक एम० ए० पास लड़का शोभा के विवाह के लिये ढूढा। इस लड़के ने इसी साल एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और वह किसी सरकारी कम्पटीशन की तैयारी कर रहा था। शंकरलाल अवसर पाकर लड़के के पिता के पास गये और उन्होंने इस सम्बन्ध में उनसे बात की। लड़के के पिता ने शंकरलाल की बात सुनकर यह बताया कि उनके लड़के का नाम मनुज है और वह किसी बड़े सरकारी कम्पटीशन में बैठ रहा है। शंकरलाल ने बड़ी नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—

"जी हां! श्रीमान जी, यह मुझे मालूम है किन्तु श्रीमन मेरी लड़की भी फर्स्ट डिवीजन में बी० ए० पास है।

"अरे साहब ! लड़की का क्या बी०ए०एम्०ए० पास होना कोई उससे नौकरी थोड़े ही कराना है।"

"यह तो ठीक है, मैंने तो आपकी जानकारी के लिये बताया था। मैं यह समझता हूँ कि शोभा और मनुज का जोड़ा बड़ा ही आदर्श जोड़ा रहेगा।"

"मगर शायद आपको यह मालूम नहीं कि मैं मनुज को अगले वर्ष कम्पटीशन में बिलायत भेज रहा हूँ।"

यह तो और भी अच्छी बात है क्या विवाह के बाद लड़के बिलायत नहीं जाते।"

"आप शायद मेरा मतलब नहीं समझे।"

"नहीं श्रीमान् जी !"

"मेरा मतलब यह है कि मनुज का विवाह ऐसी लड़की से करूँगा जिसका बाप उसे अपने खर्चे से बिलायत भेज सके।"

"मनुज के पिता जी, आप जानते हैं मैं एक साधारण आदमी हूँ। मैं उसे बिलायत भेजने का खर्च सहन नहीं कर सकता।"

"अगर आप साधारण आदमी हैं तो फिर आपके बस की बात नहीं।"

"फिर भी यह तो बताइये कि कितना खर्च होगा।"

"पूरे दस हजार होंगे।"

"तो फिर मुझे यह विवाह स्वीकार है। मैं दस हजार रुपये आपको भेंट कर दूंगा।"

"किन्तु एक बात और समझ लो इसके अतिरिक्त भी दो चार हजार रुपये हमारे बरातियों के आदर सत्कार में खर्च करने होंगे।"

"मनुज के पिता जी! इसकी चिन्ता मत कीजिये यह भी हो जायेगा।"

"तो फिर हमारी ओर से मनुज का रिश्ता पक्का समझो।"

"आपका बहुत २ धन्यवाद, अब यदि आपको लड़की के सम्बन्ध में कुछ पूछना हो तो पूछ लीजिये।"

"जब लड़की बी० ए० पास हैं तो और क्या पूछूँ। कोई लूली, लंगड़ी, काली और कुबड़ी तो होगी नहीं।"

"नहीं मनुज के पिता जी, शोभा हजार लड़कियों में एक है।"

"अच्छा तो आप महूरत निकलवा लीजिये, मगर इतना याद रखिये कि १०,००० रु० भांवरों के पहले ही गिन लिये जायेंगे।"

"चिन्ता मत करिये आप जब चाहेंगे दस हजार रुपये आपको मिलेंगे।"

शंकरलाल ने घर आकर शोभा की मां को शोभा के विवाह के सम्बन्ध में मनुज के पिता से हुई सब बातों को बता दिया और जो रुपये तय हुये उसके सम्बन्ध में भी सब बात बता दी। शंकरलाल की स्त्री ने भी यह सम्बन्ध बहुत पसन्द किया। दोनों ने यह सोचकर अपने हृदय को सान्त्वना दे दी कि शोभा उनकी इकलौती लड़की है। उनका सब कुछ शोभा के लिये ही है। इसीलिये उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं कि शोभा के लिये उन्होंने अपना मकान रहन कर दिया।

शोभा और मनुज के विवाह की महूर्त निश्चित होगई। जिस दिन तक विवाह की महूर्त निश्चित हुई, शोभा को कानोकान यह पता नहीं था कि उसके मां-बाप ने उसके विवाह के लिये मकान रहन रख दिया है। इसलिये कि शंकरलाल और उनकी स्त्री ने इस बात को शोभा से छिपाकर रक्खा था किन्तु आखिर कब तक यह बात छिपी रहती। किसी न किसी प्रकार से शोभा को पता लग गया कि उसके पिता ने दस हजार रुपये में अपना मकान उसके विवाह के लिये किसी साहूकार के पास गिरवी रख दिया है। शोभा को यह पता लगते ही बड़ा दुख हुआ। वह चिन्ता के सागर में डूब गई। उसे ऐसा अनुभव होने लगा कि जैसे वह संसार में अपने मां-बाप के लिये एक श्राप बनकर पैदा हुई है। कुछ देर तक वह इन्हीं बिचारों में चिन्तित रही, किन्तु उसी दिन कुछ सोंच समझकर उसने हृदय में कुछ बातों का संकल्प किया और यह निश्चय किया कि वह मकान को किसी दशा में भी रहन नहीं रखने देगी। उसने अपनी मां को समझाने का प्रयत्न किया कि वह मकान की रहन रखने का विचार छोंड़ दें। किन्तु उसकी मां ने जो कि यह समझ रही थी कि बड़े सौभाग्य से शोभा को वर मिला है, उसकी एक न चलने दी। वह जब अपनी मां को समझाते २ थक गई तो फिर

उसने इस बात का निश्चय किया कि वह अपने पिता शंकरलाल को समझाने की कोशिश करेगी। आज तक उसने अपने विवाह के सम्बन्ध में अपने पिता से बात करना तो अलग रहा कभी उन से कुछ कहलाना भी उचित न समझा था। किन्तु अब वह अपने पिता से बात करने को बाध्य थी। वह बहुत कुछ सोच विचार करने के पश्चात दृढ़ संकल्प से अपने पिता के कमरे में गई और नम्रतापूर्वक शब्दों में उनसे कहा—

"पिता जी, आज आप से कुछ कहना चाहती हूँ।"

"बेटी शोभा! मुझे खुशी है कि आज तुमने मुझसे कुछ कहने की हिम्मत तो की।"

"आप मेरी शादी रोक दीजिये मैं यह विवाह नहीं करना चाहती।"

"शोभा! यह तुम क्या कह रही हो।"

"मैं जो कुछ कह रही हूँ वह ठीक कह रही हूँ।"

"लेकिन शायद तुम्हें यह पता नहीं कि मनुज भी तुम्हारी ही तरह बड़ा होनहार हैं।"

"लेकिन पिता जी शायद आपको यह मालूम नहीं कि होनहार लड़के १०,००० हजार रुपये में मोल नहीं लिये जा सकते।"

"अच्छा तो मैं समझा कि तुमको दस हजार रुपये की चिन्ता है।"

"यह मुझे मालूम है कि आपने दस हजार रुपयों का प्रबन्ध कर लिया है और इस मकान को दस हजार रुपये में रहन भी कर लिया है।"

"शोभा, तुम इसकी चिन्ता मत करो। भगवान ने चाहा तो दस पांच साल में हम साहूकार का रुपया अदा कर देंगे और मकान छुड़ा लेंगे।"

"किन्तु मेरे विवाह के लिये यह मकान रहन नहीं रक्खा जायेगा।"

"यह तुम क्या कह रही हो, मैंने तो इसे रहन रख भी दिया।"

"किन्तु मैं उसे रहन नहीं रहने दूंगी।"

"शोभा ! मैं तुमको किस तरह से समझाऊँ कि अगर मनुज से तुम्हारा विवाह न हुआ तो फिर ऐसा होनहार लड़का कहीं नहीं मिलेगा।"

"पिता जी ! जो लड़के रुपयों में खरीदे जा सकते हैं मैं उन्हें होनहार नहीं बल्कि गिरा हुआ समझती हूँ।"

"लेकिन बिना रुपये के कोई भी अच्छा लड़का नहीं मिलेगा।"

"न सही ! मैं कुमारी ही रह जाऊंगी।"

"लेकिन तुम यह नहीं समझती शोभा, कि माँ-बाप अपनी लड़की को कभी कुमारी रखना नहीं पसन्द करेंगे।"

"लेकिन पिता जी यह सम्बन्ध नहीं होगा।"

"शोभा ! तुम यह नहीं जानती हो कि बारात आने के दो ही चार दिन रह गये हैं। अब इस सम्बन्ध को खत्म करने में कितनी बदनामी होगी।"

शोभा और शंकरलाल में अभी बात हो ही रही थी कि शोभा की माँ आगई। वह शोभा का हाथ पकड़कर वहां से उठाकर लेगई। शोभा चली तो गई किन्तु दिल ही दिल में वह अपने संकल्प को कार्यरूप में परिणित करने की योजनायें बनाती रही।

शंकरलाल ने शोभा के विवाह की सम्पूर्ण तैयारियाँ आरम्भ कर ली। विवाह का दिन आया। बड़ी धूम-धाम के साथ मनुज के पिता मनुज की बरायत शोभा के दरवाजे पर लाये। दरवाजे की रस्म पूर्ण होने की दोनों ओर से तैयारियाँ हुई। मनुज को मंडप के नीचे लाकर

बैठाया गया। मनुज के साथ और भी बराती मंडप के नीचे बैठाये गये। कुछ देर तक मंडप के नीचे शंकरलाल बैठे रहे किन्तु उन्होंने देखा कि शोभा के आने में कुछ देर हो रही है तो वह स्वयं शोभा को बुलाने अन्दर गये। वह शोभा का हाथ पकड़कर मंडप पर लाये। जैसे ही शोभा ने मंडप के नीचे प्रवेश किया। उसने ऊँची आवाज में बारातियों की ओर देख और चिल्लाकर कहा—

"अगर आपको जरा भी शर्म और हया है तो वापस लौट जाइये।"

शोभा के इन शब्दो को सुनकर घर वालों और बारातियों सब पर सन्नाटा छा गया। शोभा के पिता शंकरलाल हक्का वक्का से रह गये किन्तु मनुज के पिता गुस्से से पागल होरहे थे और उन्होंने कांपते हुये होठों से कहा—

"तुम कौन गुस्ताख लड़की हो।"

"मेरा नाम शोभा है, कहिये आप क्या कहना चाहते हैं।"

"तुम्हारी यह हिम्मत कि तुम हम सब का अपमान कर रही हो मैं तो यह समझता था कि तुम एक नेक और शरीफ लड़की होगी।"

"हां आपकी शराफत का तकाजा यही है कि आपने अपने बेटे को मेरे पिता जी के हाथ दस हजार रुपये में बेच दिया है।"

"यह तुम क्या बक रही हो।"

"मैं बक नहीं रही हूँ बल्कि समाज के एक मुल्जिम का परिचय लोगों से करा रही हूँ।"

शोभा के इन शब्दों को सुनकर मनुज को क्रोध आया और उसने अपने सर पर बंधे हुये सेहरे को एक तरफ हटाकर क्रोध से देखते हुये कहा—

"तुम्हारी यह हिम्मत कि तुम मेरे बाप का अपमान कर रही हो।"

"क्या खूब, सूप बोला तो बोला, लेकिन छलनी भी बोलने लगी जिसमें हजारों छेद है।"

"शोभा ! अब अगर कुछ कहा तो अच्छा न होगा।"

"तुम जैसे बिकने वाले नौजवानों से मैं बात भी नहीं करना चाहती कुछ कहना तो अलग रहा।"

शोभा की इन बातों से सब बराती और घर वाले चकित थे और सन्नाटा छाया हुआ था। मनुज और उसके पिता अपने को बड़ा अपमानित अनुभव कर रहे थे। वह क्रोध में थे किन्तु उनके इष्टमित्रों ने उन्हें समझाया और कहा कि यह अवसर क्रोध में आने का नहीं। उन सब ने उन्हें यही परामर्श दिया कि मंडप से खिसक चलें। अतः मनुज और उसके पिता शर्म से गर्दन नीचे लटकाये हुये अन्य बारातियों के साथ मंडप से बाहर खिसक आये। बारात लौट आई।

"हवालात"

देवेन्द्र बचपन से ही बहुत होनहार, दयालु और नेक लड़का था। जब तक वह स्कूल में पढ़ता रहा उसके सब साथी और अध्यापक उसे प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते रहे। देवेन्द स्वयं भी अपने अध्यापकों का बड़ा सम्मान करता था और उनकी हर आज्ञा को पालन करने को तैयार रहता था। वह अपने सब साथियों के प्रति सहानुभूति रखता था और जब भी उसका कोई साथी बीमार पड़ता या उसे कोई शारीरिक कष्ट होता तो देवेन्द्र उसकी दवादारू और सेवा सुश्रूषा करने में व्यस्त रहता। अब जब वह बड़ा हुआ तो भी उसमें यह सब गुण विद्यमान रहे। वह अपने मुहल्ले में सबसे अच्छा नेक और भला नौजवान समझा जाता था। मुहल्ले के लोगों के हर प्रकार के दुख और मुसीबत में वह स्वयं भी सम्मिलित होता और आवश्यकता पड़ने पर अपने साथियों की सहायता भी लेता। धीरे धीरे २ उसकी गणना नगर के समाज सुधारकों एवं भले आदमियों में होने लगी। उसने न जाने कितने गरीब और अनाथ लोगों की सहायता की और नगर में अपने साथियों की सहायता से पर्याप्त मात्रा में धन इकट्ठा करके समाज सुधार में गरीब और लाचार व्यक्तियों के लिये अपने नगर में सामाजिक कार्यकर्ताओं की एक संस्था भी स्थापित की। जिसमें नगर के सभी सामाजिक कार्यकर्ता सम्मिलित हुये। उसको कभी इस बात की इच्छा नहीं होती थी कि लोग उसकी तारीफ करें या सामाजिक कार्यों से उसको ख्याति मिले। अक्सर देवेन्द्र नगर के अतिरिक्त गांवों में भी अपने सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ जाता और जब कभी भी किसी गांव में कोई दुर्घटना आग आदि लगने से हो जाती या कोई बीमारी फैल जाती तो देवेन्द्र

और उसके साथी गांव में जाकर लोगों की सहायता करते, उन्हें दवाइयां बांटते और जो कुछ भी सहानुभूति वह कर सकते थे उसे करते। देवेन्द्र का सम्बन्ध किसी भी राजनैतिक संस्था से नही था न उसे कभी भी किसी राजनैतिक संस्था में सम्मिलिन होने की चेष्टा की। उसे या उसके किसी भी साथी को कभी नेता बनने की भी इच्छा नहीं हुई किन्तु उसके बावजूद भी नगर में कुछ ऐसे लोग थे जो देवेन्द्र की प्रतिष्ठा और देवेन्द्र के सामाजिक कार्यो के प्रति ईर्ष्या रखते थे और दिल ही दिल में देवेन्द्र और उसके साथियों से जलते रहते थे।

देवेन्द्र के पिता का स्वर्गवास तो उसके बचपन में ही हो चुका था किन्तु उसकी बूढ़ी मां अब भी जीवित थी। देवेन्द्र की मां की यह हार्दिक इच्छा थी कि उसके जीवन में ही देवेन्द्र का विवाह हो जाये ताकि वह अपनी निगाहों से देवेन्द्र की बहू को अपने घर में देख सके। उसने कई बार देवेन्द्र से विवाह करने के लिये जिद की किन्तु देवेन्द्र कोई न कोई बहाना बनाकर सदैव विवाह की बात टाल देता था। वह स्वयं अपनी मां की सेवा में कोई कसर उठा नहीं रखता था। दिन प्रतिदिन देवेन्द्र की मां देवेन्द्र के विवाह के लिये जिद्द करती रही और देवेन्द्र बहुत समय तक अपनी मां की इच्छा टाल न सका। वह आखिर विवाह करने के लिये राजी हो गया। देवेन्द्र यह चाहता था कि वह ऐसी समझदार और योग्य लड़की से अपना विवाह करे जो उसकी मां की बुढ़ापे का सहारा बन सके। देवेन्द्र की मां स्वयं भी बहुत समझदार थी। उसने देवेन्द्र के इष्ट मित्रों और मुहल्ले वालों की सहायता से देवेन्द्र का विवाह एक ऐसी योग्य सुन्दर और सुशील लड़की से निश्चय कर दिया जिसके सम्बन्ध में आस पड़ोस के स्त्री पुरुषोंकी भी राय अच्छी थी। लड़की का नाम मीरा था जिसे देवेन्द्र स्वयं भी जानता था क्योंकि मीरा अक्सर अपने पिता के साथ सामाजिक सभाओं में सम्मिलित होने जाती थी।

मीरा और देवेन्द्र का विवाह निश्चय होगया। विवाह की महुरत भी तय होगयी। जिस दिन देवेन्द्र और मीरा के विवाह की महूरत निश्चित हुई। देवेन्द्र की मां को ऐसा महसूस हुआ जैसे संसार भर की दौलत उसके हाथ आगई हो। देवेन्द्र के विवाह की तैयारियां होने लगी और उसकी मां दिन रात इन्हीं तैयारियों में व्यस्त रहती थी। अब देवेन्द्र के विवाह के केवल दो ही चार दिन शेष रह गये थे कि अकस्मात नगर से ८-१० मील दूर के कुछ गांवों में हैजे की बीमारी फैल गई। सरकार की ओर से जो प्रबन्ध किया गया वह सन्तोषजनक न था। देवेन्द्र के साथियों ने उसे बीमारी फैलने की सूचना दी तो देवेन्द्र तुरन्त ही अपने समाज सेवकों की टोली के साथ दवाओं को लेकर उन गांवों में पहुँच गया। उसने मरीजों को मुफ्त दवायें बांटी। देवेन्द्र एक दो प्राइवेट डाक्टरों को भी अपने साथ ले गया था। उन सब ने गांव वालों को सान्त्वना दी और जो कुछ भी हो सकता था वह उनके साथ किया। सायंकाल से पहले यह सब लोग नगर में लौट आये।

दूसरे दिन देवेन्द्र फिर इन्हीं डाक्टरों के साथ अपने साथियों की टोली लेकर उन रोग ग्रस्त गांवों की ओर चल पड़ा। इस दिन वह अपने साथ रोगियों के लिये कुछ खाने पीने का सामान फल और दूध भी ले गया था। गांव वाले देवेन्द्र की इस प्रकार निष्काम सेवा और सहानुभूति को देखकर बहुत प्रसन्न हुये और दिल ही दिल में देवेन्द्र की सराहना कहते थे। इन दिनों देवेन्द्र जिस पाठशाला में अध्यापक था उससे भी उसने अवकाश ले रखा था। अब देवेन्द्र के विवाह में केवल एक ही दिन बीच में रह गया था। देवेन्द्र की मां ने विवाह का सब सामान तैयार कर लिया था। देवेन्द्र ने यह निश्चय कर लिया था कि वह १० व्यक्तियों से अधिक अपनी बारात में नहीं ले जायेगा और न किसी प्रकार का दहेज आदि को ही वह स्वीकार करेगा। इस सम्बन्ध में उसने अपनी मां को भी राजी कर लिया था।

देवेन्द्र विवाह के एक दिन पहले भी गाँव में जाने को तैयार हुआ। देवेन्द्र की माँ ने उसे समझाया भी कि वह उस दिन न जाकर किसी अन्य व्यक्ति को भेज दे। किन्तु उसने माँ को यह कहकर समझा दिया कि वह जल्दी ही लौटने का प्रयत्न करेगा। देवेन्द्र उस दिन अकेला ही कुछ दवाइयों आदि को लेकर चला गया। गाँव में पहुँचकर उसने जो असहाय और अनाथ व्यक्ति थे उनकी सेवा सुश्रुषा की ओर विशेष तौर से ध्यान दिया। देवेन्द्र को देखकर बहुत से लोग गांव में एकत्रित हो गये और उन्होंने देवेन्द्र की बड़ी सराहना की और उसे धन्यवाद दिया। लोगों और रोगियों से बात करने में देवेन्द्र को काफी देर होगई यहाँ तक सूर्य अस्त होने पर आ गया। देवेन्द्र शीघ्रता से गांव से अपने नगर की ओर चला। वह गाँव से निकलकर जब पक्की सड़क पर पहुँचा तो उसे कोई भी सवारी रिक्शा या ताँगा नहीं मिली। देवेन्द्र को कुछ परेशानी हुई किन्तु वह बहुत हिम्मत वाला नौजवान था पैदल ही अपने नगर की ओर चल दिया। देवेन्द्र गाँव से ४–५ मील दूर पहुँचा होगा कि काफी अधेरा होगया। वह बड़ी तेजी से कदम बढ़ा रहा था। अकस्मात सामने से उसे कुछ पुलिस के सिपाही और एक दरोगा जी आते दिखाई दिये। इस से पूर्व कि देवेन्द्र उनसे कुछ पूछता दरोगा जीं ने स्वयं ही चिल्लाकर आवाज देते हुये कहा—

"तुम कौन हो ! जहां हो वहीं रुक जाओ।"

"मेरा नाम देवेन्द्र है मैं नगर को जा रहा हूँ।"

"लेकिन इतनी रात गये कहां से आ रहे हो" दरोगा ने डांटते हुये कहा—

"मैं करीब के गांव से मरीजों को देख कर आ रहा हूँ।"

"क्या तुम डाक्टर हो।"

"नहीं मैं डाक्टर नहीं हूँ एक समाज सेवक हूँ।"

"अब मैं समझा तुम पक्के चोर हो। आजकल हर एक चोर अपने को समाज सेवक ही बताता है ।"

दरोगा ने गुस्से में भरकर कहा।

"दरोगा जी यह आप क्या कह रहे हैं।"

देवेन्द्र ने नम्रता पूर्वक कहा।

"मैं सब समझता हूँ तुम कौन हो।"

"दरोगा जी अगर आप को मेरी बात पर विश्वास न हो तो आप मेरे साथ शहर तक चलिये आपको सब कुछ मालूम हो जायेगा।"

"ज्यादा बक बक मत करो, जहां खड़े हो वहीं रुक जाओ अब तुम मेरी हिरासत में हो।"

"दरोगा जी क्या आपको मेरी बात का विश्वास नहीं है।"

"तुम जैसे चोरों की बातों का विश्वास करने लगूं तो सारा इलाका चौपट हो जाये।" यह कह कर दरोगा ने सिपाहियों को संकेत किया कि देवेन्द्र को गिरफ्तार कर लें।

सिपाहियों ने दरोगा का संकेत पाते ही देवेन्द्र को हथकड़ी पहना दी और थाने की ओर ले चले। थाना उस स्थान से चार-पांच मील दूर एक गांव में था। दरोगा और सिपाही उसी थाने से रात की गश्त में निकले थे। उन्हें कप्तान पुलिस ने यह वार्निग दे रक्खी थी कि उनके थाने से १०६ व ११० दफा में बहुत कम अभियुक्त गिरफ्तार हो रहे हैं। अतः ऐसे अभियुक्तों की संख्या बढ़ाई जाये। थाने के दरोगा में दिन रात इन दफाओं में धर पकड़ की धुन सवार थी और न जाने कितने बेगुनाह व्यक्ति इन दफाओं में पकड़ २ कर जेल में ठूंस दिये गये थे। दरोगा को बड़ी प्रसन्नता थी कि उन्हें बिन ढूंढे ही पकड़ने को व्यक्ति मिल गया! देवेन्द्र ने दरोगा को बहुत कुछ विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया कस्में खाईं किन्तु दरोगा पर किसी का कोई प्रभाव न पड़ा।

अतः दरोगा और पुलिस ले सिपाही देवेन्द्र को पकड़ कर थाने में ले गये। वहां से दफा ११० का जुर्म लगाकर उसे जेल भेज दिया और अपने रोजनामचे में रपट दर्ज करली।

देवेन्द्र की मां रात भर देवेन्द्र की प्रतीक्षा में बैठी रही। वह खाना बनाये हुये चूल्हे के सहारे रात भर बैठी हुई देवेन्द्र के आने का आंखें फाड़ २ कर इन्तजार करती रही। कभी ऐसा अवसर नहीं हुआ था जब देवेन्द्र बिना कहे रात को घर न आता हो। इसलिये देवेन्द्र की मां को रात भर और भी अधिक बेचैनी रही। प्रातःकाल होते ही देवेन्द्र की मां ने मुहल्ले के लोगों को देवेन्द्र के ढूढने और उसका पता लगाने को कहा। मुहल्ले के लोगों को देवेन्द्र से बहुत सहानुभूति थी। उन्होंने तुरन्त ही देवेन्द्र के साथियों को सूचना दी और उनमें से एक दो स्वयं भी उस गांव में गये जहां देवेन्द्र गया था। गांव में पहुँचकर उन्हें यह ज्ञात हुआ कि देवेन्द्र सायंकाल को ही यहां से घर चला गया था। यह सुनकर उन सब को बड़ी परेशानी हुई। सब के सब बेचारे फिर लौटकर देवेन्द्र के घर आये और देवेन्द्र की मां को सब कुछ बताया। देवेन्द्र की मां सिसक २ कर रोने लगी। देवेन्द्र के साथी और सम्बन्धी भी परेशानी के सागर में डूब गये। आज देवेन्द्र के विवाह का दिन था। बरात जाने वाली थी, खुशियां मनाई जाने वाली थीं, किन्तु यह खुशियां मातम में बदल गयी।। कोई भी नहीं समझ पा रहा था कि देवेन्द्र का हुआ क्या।

देवेन्द्र के साथियों ने थक कर कोतवाली में देवेन्द्र के गुम होने की रपट लिखा दी। जब देवेन्द्र की होने वाली स्त्री मीरा और देवेन्द्र की ससुराल वालों को देवेन्द्र के गुम होने का पता चला, तो उनके आश्चर्य और दुख की सीमा न रही। उन्होंने भी देवेन्द्र को ढूढने के लिये जो कुछ हो सकता था किया। यह सब लोग भी दौड़े हुये देवेन्द्र के घर पहुँचे। अभी देवेन्द्र के ढूढने के सम्बन्ध में परामर्श हो

रहा था कि किसी ने आकर सूचना दी कि देवेन्द्र को गिरफ्तार करके जेल भेज दिया गया है। सूचना सुनते ही लोगों के आश्चर्य की सीमा न रही। सब लोगों की निगाह में देवेन्द्र भला नेक और सज्जन व्यक्ति था। इसलिये यह अनुमान लगाना कि देवेन्द्र किसी जुर्म में पकड़ा गया है असम्भव था। देवेन्द्र की मां ने जब यह समाचार सुना तो उसको दिल का दौरा पड़ गया और यह गश खाकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। कुछ ही समय में उसके दिल की धड़कन बन्द होगई और वह संसार से चल बसी। देवेन्द्र की गिरफ्तारी और उसकी मां की मृत्यु का समाचार नगर में बिजली की तरह फैल गया।

देवेन्द्र के साथियों ने देवेन्द्र की मां के अन्तिम संस्कार की तैयारियां आरम्भ की। कुछ लोग भागे हुये देवेन्द्र की जमानत के लिये न्यापालय पहुँचे। दिन भर कोशिश करने के पश्चात ४ बजे देवेन्द्र की जमानत स्वीकार हुई। देवेन्द्र के साथी और मित्र उसको जेल से छुड़ाकर घर की ओर रवना होगये। किन्तु जेसे ही वह दरवाजे पर पहुँचे देवेन्द्र की मां की अर्थी बाहर निकल रही थी। देवेन्द्र सर पटक कर रह गया और धाड़े मार मार कर रोने कगा।

देवेन्द्र अपनी मां का दाह कर्म संस्कार करने के पश्चात घर नहीं लौटा, न जाने कहां चला गया। तब से अब तक उसका कोई पता नहीं है शहर में जितने लोग हैं उतनी ही बातें करते हैं। कुछ कहते हैं कि देवेन्द्र ११० के मुकदमें से बचने के लिये कहीं जाकर छिप गया कुछ का कहना है कि वह अपनीं बदनामी को सहन न कर सका इसी से उसने आत्म हत्या कर ली। कुछ कहते हैं कि उसे अपनी मां की मृत्यु का इतना दुख हुआ कि कि नदी में डूब कर मर गया किन्तु देवेन्द्र कहां गया यह किसी ने नहीं देखा।

——

अभागिन

जागन गरीब व्यक्ति था, किन्तु अपने नगर में इमानदारी और नेकी के लिये प्रसिद्ध था। जागन और उसकी स्त्री दोनों अपने मुहल्ले के हर गरीब और अमीर के दुःख दर्द में सम्मिलित होते थे। यहाँ तक कि यदि मुहल्ले में किसी के घर कोई व्यक्ति बीमार हो जाता तो जागन और उसकी स्त्री दिन में कई बार उसकी सेवा सुश्रुषा के लिये पहुँचते। उनके मुहल्ले में एक दो विधवा स्त्रियां थीं जिनका कोई सहारा न था। जब उनमें से किसी को कोई कष्ट होता या बीमार पड़जाती तो जागन स्वयं दवा लाकर उन्हें देता और जो कुछ भी उससे अथवा उसकी स्त्री से बन पड़ता करते। जागन के केबल एक लड़की प्रभा थी और कोई सन्तान न थी। प्रभा भी जागन के ही प्रकार नेक थी। उसे पढ़ने लिखने का बड़ा चाव था। किन्तु गरीबी के कारण वह बेचारी थोड़ा बहुत घर पर ही पढ़ती लिखती रही। जागन के पास इतना धन कहां था कि वह प्रभा को किसी स्कूल में दाखिल कराता। जागन किसी दफ्तर में चपरासी था। जब अपनी नौकरी से रिटायर हुआ तो प्रभा की आयु लगभग १४ वर्ष की थी।

रिटायर होने के पश्चात जागन को पेन्शन के केवल २०) मासिक मिलते थे। इसके अतिरिक्त वह बीस पच्चीस रुपये मेहनत मजदूरी करके पैदा कर लेता था। इन्हीं पैसों में वह अपनी गुजर बसर करता था। कुछ ही दिनों में प्रभा जवान होगई, और उसकी आयु अठारह बर्ष से भी अधिक होगई।। जागन और उस की स्त्री को दिन रात प्रभा के विवाह की चिन्ता रहने लगी। बेचारे जागन के पास तो अपने दो प्राणियों के पेट भरने का साधन ही न था फिर प्रभा के विवाह के लिये

कहाँ से पैसे लाता। जागन और उसकी स्त्री ने प्रभा के लिये लड़का ढूंढने की बहुत दौड़ धूप की किन्तु बिना पैसा के कोई भी लड़का उसे नहीं मिल रहा था। मुहल्ले के स्त्री पुरुष भी अवसर आ आ कर जागन और उसकी स्त्री से प्रभा के विवाह के सम्बन्ध में पूछते थे। इससे जागन और सकी स्त्री को और भी दुख होता था। उसने मुहल्ले वालों को भी बता दिया कि रुपया न होने के कारण प्रभा को कोई लड़का नहीं मिल रहा है।

मुहल्ले के सभी लोग जागन से सहानुभूति रखते थे। उन्होंने आपस में परामर्श करके जागन की सहायता करने का निश्चय किया। अतः एक दिन मुहल्ले के सब लोगों ने एकत्रित होकर जागन की सहायता का प्रस्ताव रक्खा। सब लोग जागन की सहायता के लिये तैयार हो गये। उन्होंने प्रभा के विवाह के लिये आपस में पांच सौ रुपया चन्दा करके जागन को दिये। पांच सौ रुपये तो जागन के लिये पाँच लाख के बराबर थे। उसे ऐसा लगा कि जैसे भगवान की ओर से प्रभा के विवाह का सन्देश आया हो। जागन और उसकी स्त्री ने मुहल्ले वालों को कोटि-कोटि धन्यवाद दिया। दूसरे ही दिन से जागन प्रभा के लिये वर तलाश करने के लिये घर से निकल पड़ा। जागन कई दिन लगातार प्रभा के लिये वर ढूंढता रहा। वह जहां भी जाता प्रभा के सौन्दर्य, नेकी और कार्यकुशलता की तारीफ करता। किन्तु जब दहेज का प्रश्न आता तो बेचारा अपनी गरीबी की दुहाइ देता। बहुत कुछ दौड़ धूप करने पर उसे एक साधारण लड़का जो किसी दफ्तर में क्लर्क था मिल गया। लड़के के माता पिता भी गरीब ही थे केवल साठ रुपये मासिक की नौकरी को छोंड़कर उनके और कोई भी सम्पत्ति न थी।

जागन प्रभा के विवाह की तिथि निश्चय करके सीधा अपने घर गया। उसने प्रभा की मां को यह शुभ समाचार सुनाया। प्रभा की मां खुशी से फूली नही समा रही थी। प्रभा स्वयं अपने माता

पिता की गरीबी और परेशानी से दिल ही दिल में कुढ़ती रहती थी। उसे भी यह जानकर सन्तोष और प्रसन्नता हुई कि उसके मां बाप के सरसे उसके विवाह का बोझ हलका हुआ। मुहल्ले वालों को भी प्रसन्नता थी कि प्रभा का विवाह निश्चित होगा। मुहल्ले की बहुत सी स्त्रियां प्रभा प्रभा की मां को प्रभा के विवाह निश्चित होजाने पर बधाई देने आईं।

जागन और उसकी स्त्री ने प्रभा के विवाह की तैयारियां आरम्भ करदीं। उन्होंने उन्हीं पांच सौ रुपयों में बारात के खाने पीने और विवाह का प्रबन्ध किया। जागन ने लड़के के पिता की खुशामद करके उसे इस बात पर राजी कर लिया था कि वह पचास व्यक्तियों से अधिक बरात में न लाये। जागन ने बरात के स्वागत कौर उनके आदर सत्कार के लिये जो कुछ भी उन पांच सौ रुपयों में हो सकता था किया। आखिर विवाह की महूर्त आई। जागन ने मुहल्ले वालों की सहायता से प्रभा के विवाह संस्कार के लिये मंडप सजाया। बरातियों के खाने पीने का प्रबन्ध जागन ने प्रातःकाल से ही करना आरम्भ कर दिया था। रात्रि के ठीक आठ बजे दरवाजे पर बारात आने की महूरत थी। जागन और उस के सम्बन्धी मुहल्ले वाले सायंकाल से ही बारात के स्वागत के लिये खड़े थे। अभी सात भी नहीं बजे थे कि ढोल और बाजे की आवाज सुनाई दी। जागन और मुहल्ले वालों ने देखा कि बारात अपने समय से एक घन्टा पहिले ही आरही है। अतः उन्होंने जल्दी से बारात वालों के खाने पीने को फर्श बिछाकर उस पर पत्तलें कुल्हड़ आदि रखना आरम्भ कर दिये, और मंडप में पंडितों को बिठाकर महूर्त की पूरी तैयारी कर ली। कुछ ही देर में बरात दरवाजे पर आगई। जागन ने देखा कि बरात में लगभग सौ व्यक्ति हैं। तो उसे कुछ चिन्ता हुई क्योंकि उसने केवल पचास आदमियों का ही भोजन तैयार कराया था। मुहल्ले वालों ने जागन को चिन्ता न करने को कहा और तुरन्त अपने अपने घरों से थोड़ा थोड़ा आटा घी और तरकारियां लाकर जागन के यहां

रख दीं। जागन की स्त्री ने मुहल्ले की स्त्रियों की सहायता से खाने पीने के सामान को कुछ ही मिन्टों में दोबारा तैयार करा दिया और कमी भी उसे पूरा कर दिया। बारात दरवाजे पर आगई। दूल्हा जोकि पालकी के भीतर बैठा था जागन उसे उतार कर मंडप में ले गया और शेष बारात के व्यक्ति खाना खाने फर्श पर बैठ गये।

पालकी से जब दूल्हा को उतारा गया तो उसका मुंह सेहरा से ढका हुआ था। सेहरा बंधा हुआ दूल्हा मण्डप में ले जाया गया। कोई भी सेहरे के कारण दूल्हा के मुंह को न देख सका। फिर प्रथा भी इसी प्रकार की थी कि जब तक भांवरें न पड़ जायें सेहरे को सर पर से उतारा नही जा सकता था। कुछ ही देर में भांवरों की रश्म होने वाली थी। दोनों ओर से पडित आकर मंडप में बैठ गये थे। प्रभा को भी मण्डप में लाकर उसकी सहेलियों ने बिठा दिया। अभी भांवरें पड़ने ही वाली थीं कि एक दूसरी बारात ढोल बाजे समेत जागन के दरवाजे पर आ पहुँची। जब यह दूसरी बारात जागन के दरवाजे पर आई तो पहिली बारात खाना खारही थी। दूसरी बारात वाले लोग जब दरवाजे पर पहुँचे तो वह यह समझे कि जागन के मेहमान तथा जागन के घर वाले खाना खा रहे हैं। अतः बारात आकर दरवाजे पर खड़ी होगई। मुहल्ले वालों और जागन को आश्चर्य था कि यह दूसरी बारात वहां क्यों खड़ी होगई। कुछ देर तक तो सब लोग चुप रहे। जब पहिली बरात के सब लोग खाना खा चुके तो जागन ने दूसरी बारात के लोगों से यह पूछा कि वह किसकी बारात है और कहां जारही है। जागन का यह पूछना था कि बारात के दूल्हा के बाप ने चिराग पा होकर कहा।

यह हमारी बेइज्जती है। हमें दरवाजे पर बुलाकर हमारा मखौल उड़ाया जा रहा है।"

इस चीख पुकार से जागन और उसके मुहल्ले के लोग आश्चर्य में पड़ गये। पूछने और पता लगाने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि प्रभा की यही बारात है। पहिली बरात धोखे से यहां आगई थी। मंडप में भांवरें पडने जा रहीं थी। जब पहिली बारात के लोगों को मालूम हुआ कि यह धोखे से जागन के घर आ गये, उन्हें कहीं दूसरे स्थान पर जाना था तो उनको झेंप और लज्जा प्रतीत हुई। उन्होंने शीघ्रता से मंडप के भीतर से दूल्हा को उठाया और सब लोग धीरे से खिसक गये।

जागन ने जब यह देखा कि कोई दूसरी बारात धोखे से उसके यहां खाना खागई तो उसके दुख को सीमा न रही। उसके पैरों तले से जमीन निकल गई। न जाने बेचारे ने किस प्रकार मुहल्ले वालों की सहायता से सौ आदमियों के खाने का प्रबन्ध किया था। अब तो उसके पास कुछ खाने पीने का सामान भी न बचा जो प्रभा की बरात के अतिथियों को खिलाता। वह बेचारा चिन्ता के सागर में डूब गया। उसकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया। काटो तो शरीर में खून नहीं। उसने अपने को सम्भाल कर लड़के के पिता के पैर पकड़ लिये और बहुत खुशामद की कि वह किसी प्रकार मान जाय और प्रभा की भांवरों के लिये मंडप में चला जाय किन्तु लड़के का बाप तो इतना क्रोधित हो रहा था कि वह उल्टा जागन पर बरस पड़ा।

"मैं खूब समझ रहा हूँ, जागन! तुमने मेरे साथ धोखा किया है।"

"नहीं, ऐसा मत समझो। वह बारात तो धोखे से मेरे दरवाजे पर आगई थी।"

जागन ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया।

"धोखे से तुमने उन्हें खाना भी खिला दिया। तुम इतने भोले हो न।"

"सच मानिये। ऐसा ही हुआ।"

"जागन ! अधिक बकने की कोशिश मत करो। तुमने अपनी लड़की को बेचने के लिये दूसरी बरात बुलाई थी।"

"सरकार ! यह आप क्या कह रहे हैं। मैं अपनी बच्ची को बेच ँ। ओह......"

"जागन ! तुम जो चाहो सफाई दो लेकिन मैं अपने लड़के का विवाह तुम्हारी लड़की से कदापि नहीं कर सकता हूँ।"

"ऐसा न कहिये। मुझे जो चाहे दण्ड देदो लेकिन मेरी प्रभा को निराश न कीजिये। उसकी कोई खता नहीं है।"

"जागन ! मैं सब समझ रहा हूँ। तुमने मुझे ही नहीं बल्कि मुझसे पहिले जो बरात आई थी उन्हें भी धोखा दिया है। तुम जैसे धोखेबाज की लड़की से मैं अपने लड़के की शादी करूँ। यह हरगिज नहीं हो सकता।"

यह कह कर लड़के के बाप ने बारात को लौट चलने का आदेश दिया। बरात दूल्हा के साथ लौट गई। प्रभा अभागिन कुंवारी ही रह गई। बरात का लौटना था कि प्रभा के माता पिता को गश आगया। प्रभा भी धाड़े मार मार कर रो रही थी किन्तु अब क्या होसकता था।

आंसुओं के फूल

रहमान कालिज में सबसे अधिक योग्य और होनहार छात्र था। वह अपने सहपाठियों में सर्वप्रिय भी था। कालिज के छात्रों के अतिरिक्त कालिज के प्रोफेसर भी रहमान को बड़ी प्रतिष्ठा और उदारता की दृष्टि से देखते थे और उसकी योग्यता और श्रेष्ठता पर गौरव करते थे। रहमान ढाका शहर के बड़ी घनी आबादी के मुहल्ले में रहता था। रहमान के पिता अब्दुल्ला एक नेक और धार्मिक व्यक्ति थे। वह पांच वक्त नमाज पढ़ते। रहमान के घर से मिली हुई लगभग दस कदम पर मस्जिद बनी हुई थी। अधिकतर रहमान के पिता अब्दुल्ला इसी मस्जिद में नमाज पढ़ने जाते थे, किन्तु यदि कभी उनकी तबियत कुछ खराब होती तो बेचारे घर पर ही नमाज पढ़ लेते थे। अब्दुल्ला की आयु लगभग साठ वर्ष के हो चुकी थी। उन्हें अपनी नौकरी से रिटायर हुये भी लगभग चार पांच वर्ष हो चुके थे। रहमान के अतिरिक्त अब्दुल्ला के और कोई सन्तान न थी। रहमान की मां रहमान के बचपन में ही स्वर्गवासी हो चुकी थी। अब्दुल्ल ने रहमान को बड़े लाड़ प्यार और नाज नखरे से पाला था। अब्दुल्ला ने रहमान की लिखाई पढ़ाई में विशेष रुचि दिखाई थी। रहमान भी अपने बाप की बड़ी प्रतिष्ठा करता और उनके हर आदेश को पालन करने में अपना गौरव समझता था। रहमान अपने पिता अब्दुल्ला की आज्ञा के बिना कभी घर के बाहर कदम नहीं रखता था। वह कालिज से घर लौटने पर अपने पढ़ने लिखने में व्यस्त हो जाता। अब्दुल्ला के हृदय में दो ही अरमान शेष थे। एक यह कि रहमान बी० ए० पास हो जाय और दूसरा यह कि रहमान का विवाह किसी योग्य और सुन्दर लड़की से होजाय।

रहमान के क्लास ही में रहमान के मुहल्ले का एक लड़का शरत भी पढ़ता था। शरत और रहमान में बचपन से ही मित्रता थी। मुहल्ले में शरत अगर किसी के घर जाकर बैठता तो वह रहमान के घर पर और रहमान भी अगर किसी के घर सुबह और शाम जाता तो शरत के घर पर। शरत भी रहमान ही के प्रकार नम्र और सज्जन नौजवान था। शरत के मां बाप भी रहमान की नेकी और शराफत से बहुत प्रभावित थे। उन्हें इस बात पर बड़ा गौरव था कि उनका लड़का रहमान जैसे भले और सज्जन छात्र का मित्र है। जब कभी भी रहमान शरत के घर जाता, शरत के मां बाप रहमान का बड़ा आदर सत्कार करते और उससे अपने बेटे की ही तरह व्यवहार करते। रहमान की मां नहीं थी इसलिये रहमान शरत की मां को अपनी मां की प्रकार ही समझता था। उसे ऐसा महसूस होता था जैसे कि उसे अपनी ही मां का प्यार मिल गया हो। रहमान बहुधा अपने बाप अब्दुल्ला से शरत की मां की नेकी और शराफत का जिक्र करता, इस लिये अब्दुल्ला दिल ही दिल में शरत की मा की सराहना करता था। रहमान और शरत बचपन से ही एक दूसरे के घर आते जाते रहते थे। उन दोनों की मित्रता के कारण शरत के बाप और रहमान के पिता अब्दुल्ला भी एक दूसरे से मिलते जुलते रहते और एक दूसरे के घर आते जाते रहते।

रहमान और शरत ने बी० ए० में दिल जान से अच्छे नम्बरों से पास होने का प्रयत्न किया। दोनों रहमान के घर पर बैठकर पढ़ते थे और काफी रात तक पढ़ते लिखते रहते थे। दोनों बी० ए० की परीक्षा में बैठे और अच्छे नम्बरों से पास हुये। दोनों जब परीक्षाफल सुनकर आये तो उन्होने अपने मां बाप के पैर छुये। शरत की मां ने तुरन्त मिठाई मंगाकर दोनों का मुँह मीठा किया। जब दोनों अब्दुल्ला के पैर छूने गये तो अब्दुल्ला ने भी मिठाई मँगाकर दोनों को खिलाई और

आशीर्वाद दिया। इस अवसर पर अब्दुल्ला खुशी से फूला नहीं समाता था। उसने रहमान और शरत दोनों को सीने से लगाकर शाबाशी दी।

रहामन के बी० ए० पास होने के पश्चात अब अब्दुल्ला के हृदय में एक ही इच्छा शेष रह गई थी और वह थी रहमान की शादी की। अब्दुल्ला ने रहमान के विवाह के लिये शरत के मां बाप से परामर्श किया उन दोनों ने भी रहमान का विवाह शीघ्र किसी योग्य लड़की से करने की अनुमति देदी। अब्दुल्ला ने शरत्त के माँ बाप की सहायता से रहमान के लिये एक अति सुन्दर सुशील और होनहार लड़की जोहरा को ढूंढा। जोहरा एक पढ़ी लिखी और योग्थ लड़की थी। अब्दुल्ला तथा शरत के मां बाप ने जोहरा के पिता को रहमान से जोहरा के विवाह की अनुमति देदी। अब्दुल्ला यह चाहता था कि रहमान मी जोहरा को विवाह से पहले देखकर पसन्द कर ले किन्तु रहमान ने शर्म के मारे जोहरा को देखने से मना कर दिया। शरत ते जोहरा को देख चुका था। अत: अब्दुल्ला ने शरत को रहमान के पास भेजकर रहमान के विचारों को जानने का प्रयत्न किवा। जब शरत रहमान के पास पहुँचा और उसने जोहरा के सम्बन्ध में उसे सब कुछ बताया और उसकी राय जानना चाही, तो रहमान ने शरत को इन शब्दों में उत्तर दे दिया।

"शरत ! तुम्हें मुझसे पूछने की क्या जरूरत थी जो भी अब्बा जान और तुम्हारी सबकी मर्जी हो मुझे मंजूर है।"

"रहमान भाई ! मैं आप से पूछ नहीं रहा हूँ। मैं तो जोहरा भाभी की खूबियों को आपको बता रहा हूँ।"

"वाह शरत ! यह भी खूब है, अभी शादी तो हुई नहीं और जोहरा भाभी पहिले बन गई।"

"जब आपने कह दिया कि जो लड़की मुझे और अब्बा को पसन्द है वह आपको भी तो फिर मैं क्यों न जोहरा को भाभी कहूं। देखता रहमान भाई जोहरा भाभी हजारों में एक है।"

"शरत ! तुमतो ऐसी तारीफ के पुल बांध रहे हो जैसे भांड लोग तारीफ करते हैं।"

"अच्छा जोहरा भाभी से आपकी शादी हो जाय, फिर मैं उनसे शिकायत करूँगा कि आपने मुझे भांड कहा।"

रहमान और शरत में यह बातें हो ही रही थीं कि अकस्मात अब्दुल्ला वहां आ गये। अब्दुल्ला को वहाँ आते देखकर रहमान और शरत दोनों ही अपने २ स्थान पर उठकर खड़े होगये। अब्दुल्ला ने शरत और रहमान की ओर देखकर प्रेम पूर्वक शब्दों में कहा।

"बेटा ! तुम दोनों इतने बड़े होगये किन्तु अब भी इतना अदब और लिहाज करते हो कि जहाँ मैं तुम्हारे सामने आया नहीं और तुम खड़े हुये।"

"चाचा जी ! अगर हम दोनों अपनी बुजुर्गी की ही इज्जत नहीं करेंगे तो फिर और क्या कर सकते हैं।"

शरत ने सर झुकाते हुये उत्तर दिया।

"बेटा शरत" तुम दोनो को देखकर मेरा दिल खुशी से फूले नहीं समाता है। खुदा ने न जाने मुझे यह किस नेकी का बदला दिया है कि तुम जैसे लड़कों ने मेरा घर रोशन किया है।"

"चाचा जी ! यह बो हम दोनों की खुशकिस्मती है कि आप जैसे बुजुर्ग का साया हमारे ऊपर है।"

'-अच्छा बेटा ! इन बातों को छोड़ो और यह बताओ किजोहरा के बाप को क्या जवाब भेजूँ।"

"जवाब तो चाचा जी बहुत साफ है।"

"वह क्या।"

"वह यह कि जोहरा भाभी से रहमान भाई की शादी पक्की होगई।"

शरत ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया।

"आमीन! तुमने मुझे खुशी का पैगाम दिया है। मैं तुम्हें मुबारिकवाद देता हूँ।"

"चाचा जी, शादी के लिये कौन सी तारीख तय करेंगे।"

"मेरा तो ख्याल है कि अगले चांद में निकाह की तारीख तय कर दी जाय।"

"बिल्कुल ठीक है मैं भी यही चाहता था।"

"लेकिन बेटा शरत! अपनी मां से तुम पूछ लो उनकी क्या राय है।"

"उनकी राय़ यह है कि जल्द से जल्द तारीख तय की जाये।"

"लेकिन यह तो बताओ कि इतनी जल्दी शादी का इन्तजाम भी हो सकेगा।"

"इसकी आप जरा भी फ़िक्र न कीजिये। आपके हुक्म की देर है मैं सब प्रबन्ध कर लूँगा।"

"तो फिर अपनी मां को जाकर बता दो कि रहमान की शादी अगले चांद में तय हो रही है।"

"बहुत अच्छा, चाचा जी!"

"यह कहकर शरत रहमान का हाथ पकड़कर उसे अपने घर ले गया। उसने अपनी मां से रहमान के विवाह के सम्बन्ध में अपने और अब्दुल्ला के बीच हुई सारी बातों को सुना दिया। शरत की मां

यह शुभ समाचार सुनकर खुशी के मारे चारपाई से उठकर खड़ी हो गई। उसे ऐसा लग रहा था, जैसे कि उसके अपने ही लड़के का विवाह हो रहा हो। वह तुरन्त मन्दिर में भगवान का परशाद चढ़ाने चली गई। शरत के पिता ने जब रहमान के विवाह का समाचार सुना तो उनकी खुशी की भी सीमा,न रही। शरत के मां और बाप ने रहमान की बहू को भेंट करने के लिये कई साड़ियां और सोने के आभूषण बाजार से खरीदकर मंगवाये।

रहमान और जोहरा के विवाह का दिन आया। विवाह के दिन शरत विवाह के प्रबन्ध में इतना व्यस्त था कि उसे दिन में खाना खाने तक का अवकाश न मिला। रहमान ने दिन में कई बार उससे खाना खाने के लिये कहा किन्तु शरत ने रहमान की बात अनसुनी सी करके टाल दी। शरत के माता-पिता भी विवाह के दिन रहमान के घर पर ही थे, वह भी बिवाह के कार्यों में शरत की ही प्रकार व्यस्त थे। मुहल्ले के स्त्री और पुरुष शरत और रहमान की मित्रता पर दिल ही दिल में सराहना कर रहे थे। अब्दुल्ला को तो बहुत सी बातों का पता भी नहीं था। बारात में बैंड बाजा और दूल्हा के लिये घोड़ा आदि का प्रबन्ध शरत ने ही किया था। अब्दुल्ला तो एक किनारे पर बैठे हुये शादी की धूम-धाम देख रहे थे। हां कभी कभी वह अपनी कुर्सी से उठकर विवाह में सम्मिलित होने वाले अतिथियों का अवश्य सत्कार कर लेते थे। अब्दुल्ला को ऐसा लग रहा था कि जैसे कि आज उसे सारे संसार की दौलत मिल रही हो। शरत की मां कई घन्टे से रहमान को कपड़े पहिनाने और उसके सर पर सेहरा बांधने में मस्त थी। वह कभी एक कपड़ा पहिनाती फिर यह कह कर उसे उतार देती कि यह अच्छा नहीं लग रहा है फिर दूसरा कपड़ा पहिनाती। रहमान बेचारा सर झुकाये हुये जैसा शरत की मां कहती वैसा करता। कई घन्टों तक शरत की मां रहमान को कपड़े ही पहनाती रही। जब रहमान

कपड़े पहिनकर और सेहरा बांधकर तैयार होगया तो शरत की मां ने कई रुपयों से उसकी निछावर की। शरत ने रहमान को घोड़े पर बिठाया और बारात रवाना हुई। बारात के आगे २ शरत चल रहा था। कुछ ही समय में बारात जोहरा के दरवाजे पर आ पहुँची। बारात के आते ही रहमान और जोहरा के निकाह की रस्म पूरी की गई।

जोहरा और रहमान का विवाह बड़ी धूम-धाम से हुआ, जोहरा के पिता ने जोहरा को पालकी में बिठाकर विदा किया। जब जोहरा की पालकी रहमान के घर पर पहुँची तो शरत की मां ने दुल्हन को पालकी के भीतर से हाथ पकड़कर उतारा और घर के भीतर ले जाकर उसकी आरती उतारी। जोहरा शरत की मां से इस प्रकार हिल-मिल गई जैसे कि वह उसकी अपनी सास हो। विवाह में जितने दिनों जोहरा रहमान के घर रही, शरत की मां ने उसे हाथों हाथ ही लिये रक्खा। शरत की जुबान भी हर समय जोहरा को भावी कहते हुये नहीं थकती थी। जोहरा स्वयं भी एक नेक और शरीफ लड़की थी। इसलिये उसने भी शरत की मां और शरत से ऐसा ही व्यवहार किया। जैसे कि कोई सगी बहू अपनी सास और देवर के साथ व्यवहार करती है। अब्दुल्ला को भी इस बात से बड़ी प्रसन्नता थी कि उसकी बहू को शरत और शरत की मां ने कभी अकेलापन अनुभव नहीं करने दिया और उसे हाथों हाथ रक्खा। जोहरा भी अपने हृदय में शरत और उसकी मां की सराहना करती और यह अनुभव करके कि उसके पति को शरत जैसा विश्वासपात्र मित्र मिला है खुशी से फूले नहीं समाती। जब कभी जोहरा और रहमान अलग में मिलते। जोहरा शरत और उसकी मां की प्रशंसा करते हुये नहीं थकती थी। रहमान को भी बड़ा गौरव था कि शरत जैसे मित्र के कारण ही जोहरा को इस प्रकार घर में आते ही आदर और सत्कार मिला।

रहमान के विवाह को हुये कई महीने बीत गये। जोहरा विवाह के पश्चात अपने माता पिता के घर चली गई। अभी जोहरा को अपनी मां के घर गये हुये कुछ ही सप्ताह व्यतीत हुये होंगे कि अब्दुल्ला ने जोहरा को फिर बुला लिया। अब्दुला को जोहरा के बिना घर सूना सा लग रहा था। अभी जोहरा को अपनी ससुराल आये हुये कुछ ही दिन बीते होंगे कि ढाका शहर में कुछ गुण्डों ने शरारत करके साम्प्रदायक दंगा आरम्भ कर दिया। सरकार उन गुण्डों द्वारा किये गये साम्प्रदायक दंगों को दबाने में असफल रही। परिणाम यह हुआ कि ढाका नगर और उसके आसपास आग लगाने और लूटमार का ऐसा बाजार गर्म हुआ कि मनुष्य तो क्या शैतान भी पनाह मांगने लगा। सरकार की ओर से फौजी पुलिस बुलाई गई किन्तु वह भी स्थिति को अपने काबू में न कर सकी। ढाका नगर की दशा दिन प्रतिदिन खराब और गम्भीर होती गई। रहमान जिस मुहल्ले में रहता था उसमें हिन्दुओं के केवल दो चार ही मकान थे। शेष सभी मुसलमानों की बस्ती थी, किन्तु फिर भी कोई अशोभनीय घटना नहीं घटी। रहमान और उसके पिता अब्दुल्ला बराबर अपने पड़ोसियों को समझाते बुझाते रहे।

एक दिन रात्रि के समय रहमान के मुहल्ले में अकस्मात शोरगुल और चीख पुकार की आवाजें सुनाई दीं। रहमान और अब्दुल्ला तो सो चुके थे किन्तु जोहरा अभी तक जाग रही थी। उसने छत पर चढ़ कर देखा तो उसे ऐसा लगा कि गुण्डो का एक समूह लूटमार करता हुआ शरत के मकान की ओर बढ़ रहा है। जोहरा तुरन्त छत से नीचे उतर आई और उसने रहमान को जगाकर उठाया और उसे बताया कि गुण्डों का एक समूह शरत के मकान की ओर लूटमार करता हुआ जा रहा है। जोहरा और रहमान की बातों से अब्दुल्ला की भी आंखें खुल गईं। जोहरा ने उन्हें भी सब बातें बता दीं। अब्दुल्ला स्वयं शरत के घर उसकी रक्षा करने को जाने को तैयार हुये किन्तु रहमान

ने उन्हें रोक दिया और स्वयं शीघ्रता से अपने कपड़े पहिनकर शरत के घर की ओर चला। रहमान ने जल्दी से शरत और उसके मां बाप को सोते से जगाया और उनसे अपने घर साथ चलने को कहा। शरत और उसके मां बाप घबराई हुई दशा में रहमान के घर चलने को तैयार ही हुये थे कि गुण्डों का समूह हाथों में मशाले लिये हुये शरत के दरवाजे पर आ पहुँचा। रहमान ने शरत और उसके माता पिता को घर के भीतर ही रोक दिया और स्वयं दरवाजे के बाहर पहुँचकर बाहर से दरवाजा बन्द कर दिया। रहमान बाहर से दरवाजा बन्द कर रहा था कि कुछ गुण्डों ने मशालों की रोशनी से रहमान का मुंह देखकर चिल्ला कर पूछा।

"तुम कौन हो।"

"मेरा नाम रहमान है।"

"अच्छा तो क्या तुम काफिर को पनाह दे रहे हो।"

"नहीं। मैं एक खुदा के बन्दे की हिफाजत कर रहा हूँ

"मगर तुम शायद यह नहीं जानते कि इस हिफाजत का अंजाम क्या होगा।"

"मेरे भाइयों भलाई का अंजाम तो भलाई होता है।"

रहमान ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया !

"नहीं। इस का अंजाम तुम्हारी और तुम जिनकी हिफाजत कर रहे हो उनकी मौत।"

एक गुण्डे ने रहमान को मुक्का दिखाकर उत्तर दिया।

"लेकिन एक बेगुनाह और भले आदमी को मारकर तुम्हें क्या मिलेगा।"

रहमान ने हाथ जोड़कर कहा।

"बको मत। हम खून का बदला खून से लेंगे।"

"भाई जिसने खून किया हो उससे बदला लो। शरत और उसके माँ बाप तो नेक और बेगुनाह लोग हैं। उनको मारकर तुम्हें क्या मिलेगा।"

"तुम यह नहीं जानते कि हम किसी को बखशने वाले नहीं हैं।" एक गुण्डे ने दांत पीसते हुये कहा।

"आप लोग क्या यह जानते हैं कि जो बेगुनाहों पर जुल्म करता है वह खुदा और रसूल की तालीम का गला घोंटता है।"

"हम पाकिस्तान में किसी दूसरी कौम को नहीं रहने देंगे।"

"आपको शायद यह मालूम नहीं कि हिन्दू मुसलमान दोनों एक ही कौम हैं। उनकी जबान एक है। उनकी पोशाक एक है।"

"बिल्कुल नहीं। जो ऐसा कहते हैं वह हिन्दोस्तान के एजेण्ट हैं।"

"भाइयों आपका यह विचार गलत है।"

"रहमान हम तुम्हारी नसीहत सुनने नहीं आये हैं। तुम हमारे रास्ते से हट जाओ।"

"अच्छा तो आप लोग मेरे ऊपर एहसान करके ही शरत और उसके माँ बाप की जान बख्श दीजिये।"

"हरगिज नहीं! हम आज उन सबका सफाया करके ही जायेंगे।" गुण्डों ने चिल्लाकर कहा।

"नहीं। मेरे होते हुये यह नहीं हो सकता।"

"अच्छा तो पहिले तुम्हारा ही सफाया किया जायगा।"

यह कहकर गुण्डों ने रहमान को धक्का देकर दरवाजे के बाहर से हटाना चाहा किन्तु रहमान चट्टान की प्रकार दरवाजे पर डटा ही रहा। इतने में ही एक गुन्डे ने अपनी जेब से चाकू निकालकर रहमान के पेट में भोंक दिया। रहमान "हाय अल्लाह" कहकर पृथ्वी पर गिर

पड़ा। उसके सब कपड़े खून में डूब गये थे। रहमान के पेट में चाकू का काफी गहरा घाव लगा था और घाव से बराबर खून की धार बह रही थी। उसे दो ही मिनट में बेहोशी आगई। भीड़ शरत के मकान के बाहर खड़ी हुई थी। दरवाजा खोलकर वह अन्दर घुसना ही चाहती थी कि सामने से सशस्त्र पुलिस की लारी आती हुई दिखाई दी। भीड़ पुलिस को देखते ही तितर बितर होगई और जितने भी व्यक्ति वहां एकत्रित थे सबके सब भाग गये। पुलिस की लारी घटना स्थल पर रुकी। पुलिस वालों ने देखा कि एक नवयुवक खून में लिथड़ा हुआ बेहोशी की दशा में पड़ा है। उन्होंने तुरन्त ही निकट के थाने में सूचना भेजी और कुछ ही देर में कई सब इन्सपेक्टर और थाने के सिपाही भी शरत के मकान पर आ पहुँचे। शरत और उसके घर वाले मकान के भीतर बन्द थे। वह भीतर से कान लगाये हुये रहमान और गुण्डों की बातों को सुन रहे थे। वह बार बार अन्दर से रहमान को घर के भीतर आने को आवाजें लगा रहे थे किन्तु रहमान तो दरवाजे के बाहर बेहोश पड़ा था। शरत और उसके घर वालों को यह पता नहीं लग पाया था कि रहमान के किसी ने छुरा भोंक दिया है। पुलिस वालों ने शरत और उसके घर वालों की आवाजों को सुनकर दरवाजे के बाहर से लगी हुई कुण्डी को खोल दिया। दरवाजा खुलते ही शरत और उसके पिता बाहर निकल आये। बाहर निकलकर उन्होंने देखा कि रहमान खून में लिथड़ा हुआ बेहोश पड़ा है। शरत रहमान की इस दशा को देखकर वहीं गश खाकर गिर पड़ा और शरत के पिता फूट फूटकर रोने लगे। रोने पीटने की आवाज सुनकर शरत की मां भी अन्दर से निकल आई। वह भी रहमान को इस दशा में देखकर चीख चीख कर रोने लगी। शरत के पिता ने मुहल्ले के किसी व्यक्ति को भेजकर रहमान के पिता अब्दुल्ला को सूचना भेजी। सूचना पाते ही अब्दुल्ला और जोहरा शरत के मकान पर आ पहुँचे। वह रहमान को खून में लिथड़ा हुआ और वेहोश देखकर सरपीट कर रोने लगे। जोहरा ने झट

अपना दुपट्टा उतार कर रहमान के घाव पर बांध दिया। शरत अब्दुल्ला और जोहरा सब रहमान को पुलिस की लारी में डाल कर शीघ्रता से अस्पताल ले गये ।

अस्पताल में पहुँचते ही डाक्टरों ने रहमान की मरहम पट्टी प्रारम्भ कर दी। डाक्टरों ने रहमान को होश में लाने के लिये भरसक प्रयत्न किया। उसके शरीर से काफी मात्रा में खून निकल चुका था। इसीलिये डाक्टरों ने शरत और जोहरा के खून को निकालकर रहमान के शरीर में खून की कई बोतलें चढ़ा दी। कई घन्टे के पश्चात रहमान के मुंह से आहिस्ता से आवाज निकली और वह उस आवाज में बार बार यह कह रहा था—

"शरत कहां है, जोहरा का क्या हुआ।"

शरत रहमान के सिराहने उसके सर पर हाथ रक्खे बैठा था। जोहरा रहमान के पैरों के पास बैठी हुई आंसुओं के दरिया बहा रही थी। शरत और जोहरा रहमान की आवाज को सुनकर जोर जोर से यह कह रहे थे "हम दोनों आपके पास हैं।" अस्पताल में पहुँचते ही दिन निकल आया था। डाक्टर दिन भर रहमान को इन्जेक्शन देते रहे और उसके शरीर में खून चढ़ाते रहे। किन्तु फिर भी रहमान को होश नहीं आया और उसकी दशा दोपहर के बाद बिगड़ने लगी। सायंकाल को सूर्य अस्त होते ही रहमान के जीवन का सूर्य भी अस्त होगया। शरत और जोहरा की दशा क्या थी उसे शब्दों में नहीं लिखा जा सकता। अब्दुल्ला और शरद के मां बाप बराबर सरपीट रहे थे। जोहरा के विवाह को अभी पूरा एक वर्ष भी व्यतीत नहीं हुआ था। वह बराबर अपने भाग्य को कोस रही थी। शरत को बार बार गश आ रहा था। रहमान के मुहल्ले के लोगों को और उसके कालिज के विद्यार्थियों को जब उसकी हत्या का समाचार मिला तो सैकड़ों की संख्या में वह भागे हुये अस्पताल

में आ पहुँचे। उन सब की आंखों से आंसू बह रहे थे। मुहल्ले के लोग और कालिज के छात्रों ने जोहरा और शरत को ढाढस बंधाने का प्रयत्न किया और रहमान के अन्तिम संस्कार के लिये उनसे कहा। नगर में रहमान की हत्या का समाचार बिजली की तरह फैल गया। तुरन्त ही अधिकारियों द्वारा नगर में २४ घन्टे का करफ्यू आर्डर लगा दिया गया। अस्पताल में जो भीड़ एकत्रित थी पुलिस वालों ने उसे अपने २ घर जाने को कहा। पुलिस के लोग रहमान की लाश को लारी में रख कर कब्रिस्तान ले गये। शरत, जोहरा, अब्दुल्ला और शरत के माता पिता भी लारी में बैठकर कब्रिस्तान तक गये। शरत और अब्दुल्ला ने रहमान का अन्तिम संस्कार किया और उसे सदैव के लिये कब्र के भीतर सुला दिया। जोहरा और अब्दुल्ला रहमान के गम में पागल जैसे दिखाई दे रहे थे। रहमान को दफन करने के पश्चात शरत एक घन्टे तक रहमान की कब्र पर बैठकर फूट २ कर रोता रहा। पुलिस के कहने पर शरत और सब लोग लारी में बैठकर नगर की ओर चले और सबके सब रहमान के घर पर पहुँचे।

रहमान की हत्या से नगर में काफी सनसनी रही। महीनों तक करफ्यू लगा रहा। कुछ छोटी छोटी घटनायें फिर भी घटती ही रहीं। जोहरा और अब्दुल्ला ने शरत और उसके मां बाप से ढाका से भारत चले जाने का आग्रह किया किन्तु शरत और उसके माता-पिता ने उनकी एक न सुनी। जब वह शरत से अधिक आग्रह करते तो शरत सदैव यह कहकर उत्तर देता था कि "जब रहमान ने उसके लिये अपनी जान देदी तो फिर वह अपनी जान बचाने के लिये कभी भी कहीं नहीं जा सकता। वह उनके पास ही रहकर मरना पसन्द करेगा बजाय इसके कि वह अपनी जान बचाने के लिये भारत चला जाये" शरत तब से अब तक ढाके में ही रहता है और अब्दुल्ला और जोहरा की सेवा करना वह अपना सौभाग्य समझता है।

शरत ने अपने मित्र रहमान की यादगार में एक बहुत बड़ी पक्की कब्र हजारों रुपये व्यय करके बनवाई और उस पर लिखवा दिया है "शहीद की कब्र।" शरत और उसके मां बाप प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल कब्र पर फूल चढ़ाने आते हैं। रात्रि के समय जोहरा प्रत्येक दिन इस कब्र पर आकर चिराग जला जाती है। कभी कभी शरत, जोहरा, अब्दुल्ला और शरत के मां बाप एक साथ रहमान की कब्र पर आकर फूल चढ़ाते हैं। और फूलों से अधिक अपने आंसुओं के फूल चढ़ा कर जाते हैं।

———